४. चतुर्थ अध्याय

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में समाज दर्शन

४.१ : प्रस्तावना

४.२ : कहानी का दौर

४.३ : कथावस्तु में साहनीजी की विचार स्पष्टता

४.४ : भीष्म साहनी के कथा साहित्यमें समाज दर्शन

- ४.४.१ : आधुनिक हिन्दी विश्वकोश
- ४.४.२ : हिन्दी विश्वकोश
- ४.४.३ : हिन्दी शब्दसागर
- ४.४.४ : इन्साइक्लोपीड्या ब्रिटैनिका

४.५ : समाज की इकाईयाँ

- ४.५.१ : व्यक्ति
- ४.५.२ : परिवार
- ४.५.३ : वर्ग
  - ४.५.३.१ : उच्च वर्ग
  - ४.५.३.२ : मध्य वर्ग
  - ४.५.३.३ : निम्न वर्ग
- ४.५.४ : वर्ण
- ४.५.५ : धार्मिक संस्थाएँ
- ४.५.६ : राज्य
- ४.५.७ : न्याय अथवा कानून
- ४.५.८ : लोकरीतियाँ
- ४.५.९ : सहज उत्पति

४.५.१० : स्वीकृत व्यवहार

४.५.११ : विशिष्टता

४.५.१२ : आनुवंशिक

४.५.१३ : लोकरीतियाँ एवं प्रथाएँ

४.५.१४ : रूढियाँ

४.५.१५ : नैतिकता एवं धर्म

४.६ : भीष्म साहनी के समाज संबंधी विचार

४.७ : कथा साहित्यमें चित्रित समाज जीवन

४.७.१ : तत्कालिन परिस्थिति और समाज

४.७.२ : उच्चवर्ग और समाज

४.७.३ : मध्यवर्ग और समाज

४.७.४ : निम्नवर्ग और समाज

४.७.५ : वर्ण

४.७.६ : न्याय अथवा कानुन

४.७.७ : प्रथाएँ – परंपराएँ

४.७.८ : सामाजिक समस्याएँ

४.७.९ : पारिवारिक संधर्ष एवं विघटन

४.७.१० : विवाह संबंधी समस्याएँ

४.७.११ : नौकर संबंधी समस्याएँ

४.७.१२ : वैश्याओं से भ्रष्ट समाज

४.७.१३ : भ्रष्टाचार की समस्याएँ

४.७.१४ : पुलिस का भ्रष्ट व्यवहार

४.७.१५ : चापलूसी एवं जी,हुजूरी की समस्याएँ

४.७.१६ : स्वार्थ

४.७.१७ : अफवाएँ

४.७.१८ : समाज का भय

४.७.१९ : वर्ण भेद

४.७.२० : नई और पुरानी पीढी के बीच का संघर्ष

४.७.२१ : बूजुर्गो की उपेक्षा

४.७.२२ : अकेलापन

४.७.२३ : यातायात् की समस्या

४.७.२४ : झोपडपट्टी की समस्या

४.७.२५ : बाढ की समस्या

४.७.२६ : झूठी प्रतिष्ठा का लालच

४.७.२७ : पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण

४.७.२८ : धार्मिक समस्याएँ

४.७.२९ : सांप्रदायिकतां

४.८ : सामाजिक पृष्ठभूमिका

४.८.१ : ब्रह्मसमाज

४.८.२ : प्रार्थना समाज

४.८.३ : आर्यसमाज

४.८.४ : रामकृष्ण मिशन

४.८.५ : थियोसोफिकल सोसायटी

४.८.६ : सामाजिक पृष्ठभूमिका

४.८.७ : धार्मिक पृष्ठभूमिका

४.८.८ : आर्थिक पृष्ठभूमिका

४.८.९ : सांस्कृतिक पृष्ठभूमिका

४.८.१० : साहित्यिक पृष्ठभूमिका

४.९ : कहानियों में समाजदर्शन

४.१० : समाजदर्शन के संदर्भ में वस्तु विश्लेषण

४.११ : भीष्म साहनी की कहानियोमें समाजदर्शन

४.११.१ : भटकती राख

४.११.२ : पटरियाँ

४.११.३ : वाङ्चूं

४.११.४ : शोभायात्रा

४.११.५ : निशाचर

४.११.६ : पाली

४.११.७ : डायन तथा अन्य कहानियाँ

४.१२ : साहनीजी की सामाजिक कहानियों का वर्गीकरण

४.१३ : उपन्यास में समाज की भूमिका

४.१४ : उपन्यास में समाज दर्शन

४.१५ : निष्कर्ष

४. चतुर्थ अध्याय

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में समाज दर्शन

४.१ : प्रस्तावना

भीष्मसाहनी अपने समाज के प्रति सजग रचनाकार के रूप में सामने आते है। उन्होने अपने लेखलिकय दायित्व को मूल्य विघटन और मूल्य परिवर्तन को सही रूपमें पकड्ने की कोशीश की थी। उनके कथा साहित्य में नई पीढी और पुरानी पीढी के बीच का संघर्ष, पारिवारिक विघटन, सांप्रदायिक दंगे जैसी कई सामाजिक समस्याओ को दृष्टिगोचर किया है।

भीष्म साहनी ने सत्य को यथार्थवादी दृष्टि से अभिव्यक्त करते हुए मानवता और नये मानवतावादी मूल्यो की खोज भी की है। उनके कथा साहित्य में तत्कालीन समाज का प्रतिबिंब नजर आता है। भारतीय समाज के ऐतिहासिक परीदृश्य को भीष्मसाहनी अपनी कहानियोँ से कभी औझल नहीं होने देते थे। स्वाधीन आंदोलन, स्वतंत्रता की प्राप्ति, सांप्रदायिक दंगे, विदेशी आक्रमण, पूँजीवादी शीकंजा, गड्बडाते जीवन मूल्य, वर्गघृणा का फेलाव, अफसरशाही, दोगली राजनीति, सस्ती नेतागीरी हमारे इतिहास के हिस्से है। इन तमाम त्रासदियों के अन्तस्सूत्रों की पहचान सही लेखन की शर्त है और भीष्म साहनी का लेखन उसे पूरा करता है। स्वतंत्रता के उपरांत राजनीतिक क्षेत्र में एक प्रकार की ईमानदारी का अभाव, नैतिकता का त्याग और स्वार्थ की भावना दिखाई पडी। स्वाधीनता आंदोलन के समय देश के राष्ट्रीय जीवन में जिस सदाचार और उच्चता की लहर दोड रही थी वह क्रमश: लुप्त हो रही थी। एक और जनता पीछे ही जा रही है तो दूसरी ओर नेता और सरकारी अफसरो में अधिक सुविधाएँ और बेहतर जिन्दगी को आसानी से प्राप्त करने के अवसर मिल जाने के कारण त्याग, संयम, देशहित, सामाजिकता की भावना नहीं के बराबर रह गयी थी। दूसरी ओर धर्म सम्बन्धी विसंगतियो और अंत: विरोधो का चित्रण किया है। समाज में धर्म के नाम पर पनप रहे अनाचार, अत्याचार, शोषण और बाह्याचार को सशक्त रूप में प्रस्तुत किया है। प्रवर्तमान युग में भारत में धर्म के नाम पर सांप्रदायिक दंगे हो रहे है हेसी सुलगती हुई समस्या को भीष्म साहनीने अपनी कलम से वाचा दी है। समाज में धर्म

के नाम पर और राजनीति की फैली हुई समस्याओ की और संकेत करते हुए भीष्म साहनी ने कथा साहित्य में निरूपित समाज दर्शन को उजागर करने का प्रयास किया है। आजादी के पश्चात् हिन्दी कहानी साहित्य को जिन लेखको ने अपनी सार्थक रचनाशीलता से हक व्यापक फलक प्रदान किया, उनमें भीष्म साहनी का महत्वपूर्ण स्थान है। भीष्मजी हिन्दी के उन कहानीकारो में से हक है जिन्होंने अपनी कहानियों में मनुष्य को उसके सपनों, उसके तमाम सुख–दु:ख, हार–जीत तथा उसके संघर्ष और उसकी उपलब्धियो के साथ प्रस्तुत किया है। सीधी–सादी, कथ्य और संरचना की जटिलता से मुक्त, हमसे हमारी बात कहनेवाले कहानीकार भीष्मजी न केवल इस देश के इतिहास से बल्कि उसके भूगोल से भी पूरी तरह वाकिफ थे। उन्होने इस जमीन पर दो देशो की दीवारो को न केवल खडी होते देखा था, अपितु उन दीवारों के पार क्रदन, कलेश, कलह, अवसाद, यंत्रणा और आर्तनाद को भी भीतर तक महसूस किया था। यही कसक बार–बार उनकी कहानियो में प्रकट होती रही। विभाजन की त्रासदी के साथ ही टूटते मानवीय मूल्यो कला और संस्कृति के क्षेत्र में बढते राजनीतिक हस्तक्षेप और इन सबके बीच जी रहे निम्न और मध्यमवर्गीय मनुष्य की आशा–निराशा, टूटन–घूटन, संघर्ष,, विडम्बना, आकांक्षाएँ, बदलाव आदि को पूरी जवनंतता के साथ भीष्मजी ने अपनी कहानियो में उकेरा है। भीष्मजी की कहानियों में भारतीय जन–जीवन अपने पूरे परिवेश के साथ भिन्न– भिन्न रूपों में उभरकर आया है।

४.२ : कहानी का दौर

प्रेमचंद से अत्याधिक प्रभावित भीष्मजी ''नयी कहानी दौर के उन कहानिकारों में से एक थे जिन्होने अपने समकालीन मोहन राकेश, राजेंद्र यादव, कमलेश्वर, मार्केंडेय, निर्मल वर्मा, शेखर जोशी आदि की अपेक्षा भारतीय जीवन, उसकी विसंगतियों, विडंबनाओ, उसके संघर्षो और त्रासदी को शिद्त के साथ अभिव्यक्त किया।''[१] उनकी कहानियों में समाज का चित्रण है। उनकी तमाम कहानियाँ अपने समय के सरोकारों से रू–ब–रू होती हुई मानवीय संवेदनाओ रागात्मक संबंधो और जीवन स्थितियों को व्यापक धरातल पर प्रस्तुत करती है। प्रेमचंद की र्भाति भीष्म जी भी अपनी कहानियो में यथार्थ को अभिव्यक्त करते है। ये कहानियाँ प्रेमचंद की

कहानियों की तरह समस्याओं का कोई समाधान प्रस्तुत नहीं करती अपितु पाठक को समाज का चित्रण बतलाती है और सोचने पर विवश कर देती है।

साहनीजी की कहानियों में पहली कहानी से लेकर अंतिम कहानी तक उत्तरोतर विकास हुआ है। उनकी प्रारंभिक कहानियों में ''घटना बहुलता और सम्बन्धो में संक्रमण की पहचान मुखर है।''[२] साहनीजी समाज की विडम्बनाओं को अंतर्विरोधो के साथ प्रस्तुत करते है। व्यक्तिगत और सामाजिक अन्तर्विरोध को पकड्ने की यह कला उनमें बहुत विकसित हुई है। अब हम भीष्मजी की कुछ चर्चित विकसित हुई है। अब हम भीष्मजीकी कुछ चर्चित और प्रमुख कहानियो का अध्ययन समाज को ध्यान में रखकर करेंगे। ऐसी कहानियाँ लेंगे जिनमें पाठक अपनी साझेदारी में उतेजित हुए बिना नही रहता। इन कहानियो में मनुष्य की जिजीविषा है, कुंठा है, हताशा और निराशा है, दु:ख और पीडा है। सपने और आदर्श है।

भीष्मजी की कहानियो में यथार्थ के विभिन्न अन्तविरोधो, विसंगतियों और बिडम्बनाओ का मार्मिक चित्रण हुआ है। विभाजन की त्रासदी, सांप्रदायिक तनाव, मोहभंग, टूटते बिखरते मानवीय मूल्य, राजनीतिक अन्तर्विरोध, सामाजिक विसंगतियाँ, मध्यवर्गीय जीवन, व्यापक जीवन बोध का अंग बनकर उनकी कहानियों में मूर्त हुई है। साधारण निम्न और मध्यवर्गीय जीवन के विविध पहलुओ को उजागर करनेवाली इस कहानियों में मनुष्य की जिजीविषा है, कुंठा, दु:ख, पीडा है। जीवन के मूल्यपरिवर्तन की स्थितियाँ, बदलाव, संघर्ष, जटिलताओ का सीधा प्रतिबिंब उतारती भीष्मजी की कहानियाँ तरह–तरह से अंतविरोधो, विडम्बनाओ और त्रासदियो से भरी है।

किसी अन्य कलाकार की ही तरह आम तौर पर साहित्यकार भी अपने बचपन से जो कुछ देखता, सुनता और अनुभव करता है, उसका प्रतीबिंब उसके साहित्य में नजर आता ही है। जिस युग में, जिस काल में वह रहता है, उसका प्रभाव उसके साहित्य पर जरूर पड्ता है जिसके कारण साहित्यकार को अपने काल का दर्पण, युग जीवन चितेरा माना जाता है। साहित्यकार के साहित्य से इस बात का पता भी चल जाता है कि, उसका जीवन किस हालात में, कि परिस्थितियों में गुजरान? तत्कालीन परिस्थितियाँ, परिवेश उसके लिए अनुकूल था या प्रतिकूल

था? इन बातों को अगर वह अपने साहित्य में न उतारे तो उसका साहित्य एकांकी माना जा सकता है। साहित्यकार कभी कहानी के माध्यम से, कभी उपन्यास के माध्यम से, कभी काव्य के माध्यम से.... किसी भी विद्या के माध्यम से अपने युग का चित्र प्रस्तुत करता ही है।

भीष्मजी लिखते हैं –

''लेखक जीवन की परतों को हमारे समक्ष खोलता है, हमें एक दृष्टि देता है। वह समाज के भीतर सक्रिय शक्तियों की भूमिका समझने में हमें मदद देता है, हमें सजग और सचेत करता है, और इस तरह साहित्य अपनी सामाजिक भूमिका निभाता है।'' आगे चलकर साहित्य द्वारा सामाजिक परिवर्तन कैसे होता है, इस बात पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं –[३]

''जहाँ तक साहित्य द्वारा सामाजिक परिवर्तन करने का प्रश्न है, यह प्रक्रिया जटिल है और धीमी है। पाठक धीरे–धीरे सामाजिक स्थिति के प्रति सचेत होते हैं, उन्हें जिन्दगी को देखने का एक नजरिया मिलता है, अपनी स्थिति को देखने का एक नजरिया मिलता है, बाद में उसके परिणाम–स्वरूप समाज में भी परिवर्तन आते है।''[४]

४.३ : कथावस्तु में साहनीजी की विचारस्पृष्टता

भीष्मजी ने जैसा कि हमे जानते हैं, अपने घरों और व्याप्त माहौल से काफी कुछ ग्रहण किया था। सामाजिक परिवेश के अर्न्तगत सामाजिक आन्दोलन के वातावरण और प्रभाव को व्यक्त करते हुए स्पष्ट लिखते हैं–

''मैने जिस माहौल में आँख खोली वह ठहरा हुआ दौर नहीं था। उसमें हलचल थी, नये नये विचार समाज को आंदोलित कर रहे थे, मेरे पिताजी आर्यसमाजी विचारों के थे। घर के अन्दर सदा समाज–सुधार की चर्चा चलती रहती, उसका प्रभाव मुझ पर और लेखन पर पडा।''[५]

भीष्मजी साहित्य–रचना को सामाजिक प्रक्रिया मानते हैं, समाज से कटकर साहित्य रचना असंभव है। वर्तमान समाज में सस्ता साहित्य गंभीर साहित्य के मुकाबले में ज्यादा है, जो

लोगों की रूचियों को बिगाड़ता है। समाज की महत्ता एवम् अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए आप लिखते हैं–

''आज साहित्य की मुख्य धारा समाजोन्मुखी है। जो अस्तित्ववादी साहित्यकार हैं तथा जो समाज को अन्धी गली में पहुँचा हुआ मानते हैं, वे भी समाज की अवहेलना नहीं कर सकते, वे भी आज जीवन की पेचिदगियाँ और विसंगतियों से आक्रान्त हैं। समाजोन्मुखी और प्रतिबद्ध साहित्यकार में कोई फर्क नही है।''(६)

वर्तमान समय में समाज द्वारा साहित्य की अवहेलना किस तरह हो रही है, लेखक की स्थिति क्या है, ऐसी महत्त्वपूर्ण सामाजिक परिस्थितियों पर प्रकाश डालते हुए वे लिखते हैं –

''समाज में भी लेखक को विशेष मान्यता नहीं मिली। छोटे से पाठक वर्ग को छोड़कर हमारे समाज ने साहित्य को अपनाया ही नहीं है। किसी अच्छी किताब का प्रकाशन एक सामाजिक घटना नहीं बन पाती। सामान्यत: हमारे समाज में साहित्य और साहित्यकार दोनों उपेक्षित है।''(७)

आगे चलकर वे यह भी लिखते हैं–

''हमारे समाज में साहित्यिक क्रिया–कलाप किसी ढर्रे पर नहीं आया, इसलिए छपने–छापने और पुरस्कारों से प्राप्त होनेवाले प्रभामण्डलों का महत्त्व बहुत बढ गया है और इसी की प्रतिक्रिया स्वरूप सामान्य लेखक के प्रति उपेक्षा का भाव भी बहुत बढ गया है।''(८)

प्रभाखरे ने ठीक ही लिखा है कि–

''भीष्म साहनी ने बगैर किसी सैद्धान्तिक आग्रह के सामाजिक परिवेश में जीवित एवम् व्यवहारिक मान्यताओं का विश्लेषण किया है और यह स्पष्ट किया है कि हमारे नैतिक बोध पर धर्म का आवरण हावी रहता है, फलस्वरूप हमारा नैतिक बोध सेक्युलर नहीं हो पाता।''(९)

''भीष्मजी उपन्यास के पूरे परिवेश और वातावरण के भीतर से जीवन की विसंगतियों तथा विडम्बनाओं को खोज सके हैं।''(१०)

वर्तमान सामाजिक जीवन में अन्तर्विरोधों और विषमताओं से हम सभी परिचित हैं। आजादी के बाद कुछेक क्षेत्रों में हमारे देश ने प्रगति की है परंतु कुछ अन्य क्षेत्रों में हमारी

कठिनाइयाँ बढी हैं, जैसे मँहगाई, बेरोजगारी, साम्प्रदायिकता, जाति–पांति, धर्मान्धता आदि। जहां तक भीष्मजी की निजी मान्यता है, उनका कहना है:

''मैं जात–पांत का विरोध करता हूँ। नारी को भी समाज में पूर्ण समानता के अधिकार मिले, इसका समर्थक हूं।''(११)

अछूतों की स्थिति तथा नारी की स्थिति दोनों की तह में परंपरागत रूढिर्या और रीति–रिवाज भी उतने सक्रिय रहे हैं जितनी आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक विषमताएँ।''(१२)

अब हम साम्प्रदायिकता के बारे में भीष्मजी के विचार प्रस्तुत करेंगे को धर्मनिरपेक्ष घोषित करते हुए लिखते हैं –

''मैं धर्मनिरपेक्ष संस्कृति का समर्थक हूं जो हमें इतिहास से विरासत में मिली है।''(१३)

संस्कृति की बुनियाद पर प्रकाश डालते हुए वे लिखते हैं –

''यह संस्कृति समानता और परस्पर सहयोग और सहनशीलता के आधार पर खडी है। इसमें एक भाषा दूसरी भाषा से बडी नहीं, एक धर्म दूसरे धर्म से बडा नहीं। इस सांजी धर्मनिरपेक्ष संस्कृति के विकास में हमारे देश का कल्याण है, ऐसा मैं मानता हूँ।''(१४)

भीष्म साहनी साम्प्रदायिकता की मनोवृत्ति की विद्यमानता पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं –

''साम्प्रदायिकता की समस्या बटवारे के साथ खत्म नहीं हो गई। वह मनोवृत्ति, वह रवैया आज भी हमारे समाज में रह–रहकर अपना भयावह रूप दिखाते हैं। आदमी जो कुछ लिखता है वह कहीं न कहीं तो उसके अपने काल से जुड्ता है, उसके अपने काल के लिए संगत होता है।''(१५)

इस प्रकार हम साम्प्रदायिकता के संबंध में भीष्मजी के विचार स्पष्ट कर सकते हैं।

४.३ : कथावस्तु में साहनीजी की विचार स्पष्टता

भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में यथार्थवादी चित्रण की प्रधानता है। उनकी कथा के केन्द्र में मध्यवर्ग और निम्नवर्ग हैं। पूँजीवाद और श्रमीक वर्ग के संघर्ष को उन्होंने अपना प्रतिपाद्य

बनाया है। वे अपने साहित्य में साम्प्रदायिकता के भौतिक परिवेश को विश्लेषित करते हैं। भीष्म साहनी की रचनाओं में व्यक्त यथार्थवाद सामाजिक जीवन की वास्तविकताओं को उजागर करता है। उनके प्रगतिशील संदर्भ समकालीन आवश्कताओं की पूर्ति करते हैं। साम्राज्यवाद, पूँजीवाद और साम्प्रदायिकता के आधुनिक युग में साहनीजी का साहित्य अत्यन्त उपयोगी है। श्री प्रताप ठाकुर कहते है– ''भीष्म साहनी ने अपने कथा–साहित्य में मध्यवर्ग के संस्कारों को बदलने का रचनात्मक प्रयास किया है। आधुनिक ज्ञान–विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ही मनुष्य की सामाजिक उठाना संभव है। भीष्म साहनी के पास मनुष्य के उत्थान और उत्कर्ष की वैज्ञानिक दृष्टि है। भीष्म साहनी ने राष्ट्रीय भावात्मक एकता की वस्तुपरक परिस्थितियों को स्पष्ट किया है।''(१६)

साहनीजी ने जीवन के विभिन्न पक्षों और उसकी वस्तुस्थितियों को बहुत गहराई से देखा है। साहनीजीने यथार्थवाद में मनुष्य के नैतिक और सांस्कृतिक आधारों का भौतिक परिवेश से संघर्षपूर्ण सम्बन्ध निरूपित है। उसमें बदलते हुए जीवन के अनुकूल बनने की विचारशीलता है। उनके कथा–साहित्य में आधुनिक और यथार्थवादी विचारधारा का संघर्ष है, वह क्रान्तिधर्मी मानव–संवेदन की ऊँचाइयों तक पहुँचा है और उसके राजनीतिक पहलू प्रखर और स्पष्ट है। इस संघर्ष के संबंध में श्री रमाकान्त श्रीवास्तव का मत उल्लेखनीय है–

''स्वाधीनता–आन्दोलन, स्वतंत्रता की प्राप्ति, साम्प्रदायिक दंगे, विदेशी आक्रमण, पूँजीवादी शिकंजा, गड्बडाते जीवन–मूल्य, वर्ग–घृणा का फैलाव, अक्सरशाही, दोगली राजनीति, सस्ती नेतागिरी हमारे इतिहास के हिस्से हैं। इन तमाम त्रासदियों के अन्त:सूत्रों की पहचान सही लेखन के लिए जरूरी पूर्ति है और भीष्म साहनी का लेखन उसे पूरा करता है।

प्रगतिशील विचार–धारा, तीक्ष्ण दृष्टि और विश्लेषण की क्षमता के साथ ही गहरी संवेदनशीलता भीष्म साहनी के लेखन के सहज गुण स्वीकार किये जा सकते हैं। प्रगतिशील जीवन–मूल्यों के प्रति उनकी आस्था स्थूल रूप धारण कर किसी नारेबाजी ने रूप में प्रकट नहीं होती बल्कि वह मनुष्य की संघर्षशीलता और जिजीविषा में विश्वास के रूप में आती है।

साहनीजी ने समकालीन परिस्थितियों को महसूस कर अपनी चेतना को तद्नुसार परिवर्तित किया है। सामाजिक जीवन के सुलगते प्रश्न साहनीजी की रचनाओं के विषय हैं। वे

अमीरवर्ग की शोषण–वृत्ति के विरूद्ध आवाज उठानेवाली मेहनतकश जन–शक्ति के पक्षधर हैं। उनके कथा–साहित्य में हमें एक रचनात्मक दायित्व–बोध का एहसास होता है। मध्यवर्गीय जीवन के अन्तर्विरोधों को वे बडी सूष्मता से उद्घाटित करते हैं। भीष्म साहनी गतिशील और यथार्थवादी रचनाकार हैं। उनका साहित्य मध्यवर्ग की जनता के जीवन के संघर्ष, यातना और पीडा की अभिव्यक्ति है। वे मानवीय संवेदना और जीवन के प्रति गहरी आस्था के कथाकार हैं। इस संबंध में श्री श्याम कश्यप का मत अवलोकनीय है–

''भीष्मजी सूक्ष्म समाजद्रष्टा लेखक हैं। वे समाज के गहरे अन्तर्विरोधों को तो उद्घाटित करते ही हैं, साथ ही उन कारणों की जडें तक जाते हैं और उन्हें बडे पैने तरीके उजागर भी करते हैं। इस प्रक्रिया में न तो निम्नवर्गीय लोगों के प्रति उनकी हार्दिक सहानुभूति ही छिपी रहती है और न ही वे उन निम्न वर्गीय शक्तियों को बेनकाब करने में किसी किस्म का कोई संकोच बरतते हैं जो मानवीय संबंधों को सच्चे आत्मीय मानवीय संबंध नहीं बने रहने देना चाहती। यह समूची प्रक्रिया भी वे अपनी पूरी कलात्मकता के साथ बडे सहज और स्वाभाविक ढंग से ही घटित करते हैं बिना किन्हीं आग्रहों या पूर्वाग्रहों के। इसलिए कब भीष्मजी के व्यंग्य की धार किस और है, इसे बडी सावधानी से देखने और परखने की जरूरत पडती है। उनका व्यंग्य कोरा व्यंग्य नहीं, बल्कि प्रेमचन्द और हरिशंकर परसाई की तरह करूणा की अथाह गहराइयों में से उपजा हुआ व्यंग्य है, जिसकी सामाजिक सोद्देश्यता को समझने में कभी भी भूल नहीं करनी चाहिए। करूणा से उपजी हुई इस आत्मीयता और व्यंग्य के दो धारे पर चलते हुए ही वे गजब के कलात्मक संतुलन का भी परिचय देते हैं, जो उनके जैसे प्रतिबद्ध और पक्षधर लेखक से अपेक्षित भी है।''[१७]

साहनीजी की प्रतिबद्धता उनकी अनेक रचनाओं में देखी जा सकती है। उपन्यास, नाटक, कहानी–संग्रह सभी में सामाजिक यथार्थ का चित्रण है। उनके उपन्यासों में बहुचर्चित उपन्यास 'तमस' इस दृष्टि से एक प्रतिबद्धता रचना कही जा सकती है। 'तमस' लिखने के कारण को स्पष्ट करते हुए साहनीजी स्वयं कहते हैं– ''देश के बँटवारे के समय जब साम्प्रदायिक दंगे हुए तो मैं काँग्रेस की रिलीफ कमेटी में काम करता था और आँकडे इकट्ठे करता था कि वहाँ कितने

मरे, कितने घायल हुए, कितने घर जले आदि। तभी गाँव–गाँव घूमने और साम्प्रदायिक दंगों के बीभत्स दृश्य देखने का भी अवसर मिला। 'तमस' इसी अनुभव पर आधारित है।

एक भेंटवार्ता के अन्तर्गत श्री दिनेश शर्मा ने उनसे प्रश्न किया था कि– आपकी कौन–सी रचना में आपके अपने विचारों की अधिकतम अभिव्यक्ति है?'' तो साहनीजी ने बताया कि– 'तमस', क्योंकि यह हमारे देश में साम्प्रदायिक तनाव की सामाजिक समस्या के बारे में है। 'तमस' में जिस खास तरह के अनुभवों का जिक्र हुआ है, जब मेरे शहर में दंगे फूट पडे थे, तब मैं खुद उन अनुभवों से गुजरा हूँ। इस उपन्यास के लिए मैंने उन भयानक दिनों से बहुत कुछ लिया है।

४.४ : भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में समाज दर्शन

एक संवेदनशील रचनाकार होने के नाते साहित्यकार अपने चारों और देखता है। जिस समाज में वह रहता है, जिस वातावरण में वह पला–बढा है, उसका यथार्थ अंकन करता है। समाज उसके साहित्य में साफ झलकता है और भीष्म साहनी भी इस नियम के लिए अपवाद नहीं है। उनके कथा–साहित्य में झलकने वाले समाज–जीवन को देखने से पहले हमें यह देखना अत्यन्त आवश्यक है कि 'समाज' क्या है? उसकी परिभाषा क्या है? उसके अंग कौन–से है? वैसे तो समाज को परिभाषित करने का प्रयास कई विद्वानों ने किया है, जैसे–

४.४.१ : आधुनिक हिन्दी विश्वकोश

''१. संघ, संघात, समष्टि, सभा, परिषद् गौाष्ठी, २. मानव समूह, समसमुदाय, जन–समूह, मंडली, किसी भूखंड में रहने वाली जनता, जन–समुदाय, लोक, जन। ३. प्राचीन भारत में सार्वजनिक सभा, उत्सव, समस्या।''(१८)

४.४.२ : हिन्दी विश्वकोश

''१. समूह संघ, गेराह, दल २. सभा ३. वैष्णवों का समाधिस्थान। ४. हस्ती, हाथी, ५. एक ही स्थान पर रहने वाले अथवा एक ही प्रकार का व्यवसाय आदि करने वाले वे लोग जो मिलकर अपना एक अलग समूह बनाते हैं, अरूदाय। ६. ब्राह्मणादि वर्ण की सभा। सभी वर्ण के प्रधान व्यक्ति मिलकर समाज स्थापन करते हैं। सभी समाज के आदेशानुसार चलने के लिए वाध्य हैं। सभी वर्णो का समाज बंधन है, जैसे–ब्राह्मण समाज, कायस्थ समाज के नियमानुसार आदान–प्रदान करते हैं। समाज में एक प्रधान पुरूष रहता है जिसे समाज पति या गोष्ठीपति कहते हैं। किसी समाजिक क्रिया में ये समाजपति भी मान्य स्वरूप माला चंदन पाते हैं।''(१९)

४.४.३ : हिन्दी शब्द सागर

१. समूह, संघ, गिरोह, दल।

२. सभा।

३. हाथी।

४. एक ही स्थान पर रहने वाले अथवा एक ही प्रकार का व्यवसाय आदि करने वाले वे लोग जो मिलकर अपना एक अलग समूह बनाते हैं समुदाय। ऐसे शिक्षित समाज, ब्राह्मण समाज।

५. वह संस्था जो बहुत से लोगों ने एक साथ मिलकर किसी विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्थापित की हो। सभा– जैसे संगीत साहित्य समाज।

६. प्राचुर्य। समुस्चय संग्रह।

७. एक प्रकार का ग्रहयोग।

८. मिलना। एकत्र होना।

४.४.४ :एनसाइकल्योपीड्या ब्रिटैनिका

"Society in the society science a group of human beings bound together for self-maintenance and self-perpetuation and sharing their own institutions and culture. The concept denotes continuity and large-scale complex social relation with both sexes and all age groups involved. Usually there is also a territorial or political boundary."

उपर्युक्त परिभाषाओं के अलावा अन्य भी कई समीक्षकों ने 'समाज' इस शब्द को परिभाषित करने का प्रयास किया है, जैसे– डॉ. मंजुला गुप्ता ने इसके बारे में लिखा है– ''समाज को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि मानवीय सम्बन्धों की सामूहिकता जैसा कि वह आन्तरिक एवं प्रतीकात्मक स्वरूप से साधन–साध्य सम्बन्धों में रूपायित होते हैं।''[२०]

उपर्युक्त परिभाषाओं को जाँचने के बाद डॉ. रवीन्द्रकुमार सिंह निम्नलिखित निष्कर्ष तक पहुँचते हैं – ''परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि समाज का वास्तविक आधार सामाजिक सम्बन्ध तभी स्थापित होते हैं जब उसमें हर एक की उपस्थिति प्रतीत हो अथवा उनके कुछ समान उद्देश्य अथवा स्वार्थ हो। समाज वह संस्था है जिसमें सामाजिक प्राणी हक दूसरे के प्रति उन तरीकों से व्यवहार करते हैं, जिनका निर्धारण उनके एक दूसरे की पहचान करती है। इसी प्रकार निर्धारित सम्बन्ध ही स्वाभाविक है। समाज केवल व्यक्तियों का समूह ही नहीं है, समूह में रहने वाले व्यक्तियों के सामाजिक सम्बन्धों को ही समाज कहा जाता है। समाज में जीवन है, समरूपता है, विषमता है तथा सहकारिता है। समाज ही व्यक्ति की शारीरिक और मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है और उसकी उन्नति के मार्ग को प्रशस्त करता है। इस प्रकार समाजशास्त्रीय दृष्टि से समाज सामाजिक सम्बन्धों की एक अमूर्त और जटिल व्यवस्था है, जो अनेक घटकों या लघु इकाइयों में विभक्त होता है।''[२१] सभी परिभाषाओं का जो विवेचन एवं विश्लेषण रवीन्द्रकुमार सिंह ने किया है, वह अत्यंत सार्थक प्रतीत होता है। क्योंकि उन्होंने न सिर्फ परिभाषाओं का विश्लेषण किया है, बल्कि उन्होंने उन परिभाषाओं का समाजशास्त्रीय दृष्टि से परखा भी है।

मनुष्य आदिम काल से ही समूह में रहने वाला प्राणी है। इसलिए समाज का आगमन उसी से माना जाता है। इसी वजह से समाज की सबसे महत्वपूर्ण और लघुतम इकाई व्यक्ति है। लेकिन 'व्यक्ति' के साथ समाज की अन्य भी कई महत्वपूर्ण इकाइयाँ हैं।

४.५ : समाज की इकाइयाँ

४.५.१ : व्यक्ति

समाज की सबसे छोटी इकाई 'व्यक्ति' है। जब समाज का एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के अस्तित्व को ध्यान में रखते हुए आचरण करता है तो समाज का अविर्भाव होता है। समाज मनुष्यों का योग है साथ ही मानवीय सम्बन्धों की व्यवस्था भी है जिसे प्रत्येक व्यक्ति स्थापित करता है। समाज–व्यवस्था का नियमन व्यक्ति कैसे होता है। इसके बारे में डॉ. मंजुला गुप्ता जीने लिखा है – ''व्यक्ति स्वयं अपने विचारों, मान्यताओं, आदर्शो और रीतियों द्वारा समाज का नियमन करता है लेकिन परिवर्तन की प्रक्रिया में एक समय के बने हुए नियम आने वाले समय में रूढ सिद्ध हो जाते हैं और परिस्थितिनुरूप व्यक्ति स्वयं निर्मित नियमों को तोड्कर नए आदर्शो, विचारों, मान्यताओं, रीतियों नीतियों को बनाता है।''डॉ. मंजुला गुप्ता जी के विचार अत्यन्त सार्थक प्रतीत होते हैं क्योंकि इसी कारण मनुष्य अनेक सामाजिक सम्बन्धों में बँधा रहता है। व्यक्ति और समाज दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। व्यक्ति के बिना समाज सम्भव नहीं और सामाजिक व्यवस्था की असमर्थता में व्यक्ति का महत्व नहीं।

आधुनिक काल में जैसे –जैसे मनुष्य की इच्छाएँ, आकांक्षाएँ, आशाएँ, अपेक्षाएँ बढने लगी हैं, वैसे ही उसकी लक्ष्यपूर्ति में पुराने मूल्य बाधक बनने लगे हैं, तो वह स्वतंत्र बनने के लिए संघर्ष करने लगता है। लेकिन इस प्रक्रिया में पुराने रीति–रिवाज, रूढियाँ, परम्पराएँ आदि से उसे काफी संघर्ष करना पड़ा है।

४.५.२ :परिवार

सामाजिक ढाँचे की प्रमुख इकाई परिवार है। परिवार मानव जाति के जीवन संरक्षण, वंशवर्धन तथा जातीय जीवन की निरन्तरता को बचाए रखने का साधन है। परिवार व्यक्ति का समाजीकरण करता है। वह व्यक्ति को सामाजिक प्राणी के रूप में परिवर्तित करता है। व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन परिवार में रहकर ही नियमबद्ध रूप में कार्य करता है। इसलिए परिवार समाज की मैालिक संस्था है। लेकिन प्राचीन काल में जो सम्मिलित परिवार थे, वे आज विघटित परिवार के रूप में दिखाई देते हैं इसका एक ही कारण परिवार विघटन को बताते हुए डॉ. मंजुला गुप्ता जीने लिखा है– ''आधुनिक युग में व्यक्ति स्वातंत्र्य की भावना के परम्परागत पारिवारिक संस्था को विघटित किया है। परिवार एक आधारभूत और सर्वव्यापी संस्था है, भारतीय समाज ने पारिवारिक संघटन का अनिवार्य अस्तित्व रहा है। समष्टि से व्यष्टि की ओर बढने वाले व्यक्ति ने संयुक्त परिवार की अपेक्षा लघु परिवार को अधिक महत्व दिया। वर्तमान अर्थव्यवस्था ने भी इस संस्था को हक नवीन आयाम दिया है।'' परिवार विघटन के लिए औद्योगीकरण और शहरों का निर्माण यह भी एक प्रमुख कारण है। औद्योगीकरण के परिणाम स्वरूप गाँव के लोग अपनी खेती को छोड्कर शहर में रहने लगे और इसी वजह से भी पारम्परिक परिवार संस्था नष्ट हो गई और यह भी परिवार विघटन का एक महत्वर्पूण कारण बन गया। आधुनिक काल में इसी प्रकार के विघटित परिवारों की संख्या बढती जा रही है।

४.५.३ : वर्ग

आधुनिक काल में समाज का संगठन प्रधानत: विभिन्न वर्गो पर आधारित रहता है। वर्ग शब्द का अर्थ, प्रमुख रूप से मानव–जाति का एक समूह जो आर्थिक दृष्टि से समान हो, माना जाता है। जैसे–जैसे समाज विघटित होने लगा वैसे ही वह वर्गो में विभाजित होने लगा। आर्थिक दृष्टि से असमानता के कारण कोई अमीर तो कोई गरीब दिखाई देता है। साथ ही औद्योगीकरण के कारण समाज में इन दो वर्गो के अलावा मध्यवर्ग निर्माण हो जाने के कारण समाजशास्त्रियों ने समाज को तीन वर्गो में विभाजित किया है। इन तीन वर्गो के कई उपवर्ग भी हैं।

४.५.३.१ : उच्च वर्ग

इसके अन्तर्गत जमींदार पूँजीपति, साहूकार आदि आते हैं। डॉ. सुधाकर गोकाककर जी ने इस सन्दर्भ में लिखा है– ''अंग्रेजों के आगमन के उपरान्त भारत की प्राचीन समाज–व्यवस्था में परिवार्तन आ गया। देहातों में जमींदारों, ठाकुरों, महाजनों का राज्य आ गया। अँग्रेजों ने राजाओं के अधिकार छीन लिए। उच्च वर्ग के ये व्यक्ति बिना श्रम किए समस्त सुख–सुविधाओं के अधिकारी बन गए। अत: उनमें विलास वासना एवं उद्दाम वृत्तिओं का निर्माण हो गया।'' उच्च वर्ग के निर्माण के संदर्भ में डॉ. गोकाककर जी का मत अत्यन्त सार्थक लगता है। परन्तु वर्गमान समाज का उच्च वर्ग और अंग्रेजों के कालखण्ड का उच्चवर्ग इनमें काफी असमानताएँ पाई जाती हैं। आधुनिक काल में अधिकतर व्यापारी मिल–मालिक, बडे–बडे उद्योगपति आदि इस वगर के अन्तर्गत तो आते है, जो निम्नवर्ग का शोषण करते हैं। डॉ. पांडुरंग पाटील जी का इस वर्ग के प्रति दृष्टव्य है– ''समाज का यह वर्ग साधन सम्पन्न होता है। इनका जीवन मजदूरों के श्रम पर ही अवलम्बित होता है किन्तु अपनी प्रपंच बुद्धि तथा पैसों के बल पर यह वर्ग सरकारी मशीनरी का सहयोग प्राप्त कर जनसामान्य को आक्रांत करता है।''[२२] डॉ.पाटील जी ने इस वर्ग के शोषक रूप को प्रकट किया है। वर्तमान युग पूँजीवादी युग कहलाता है। इस युग की सारी आस्था सम्पत्ति तक ही है। पूँजी का महत्व बढने का कारण अतिरिक्त मूल्य वृद्धि व्यापार का पढता विस्तार एवं वैज्ञानिक प्रगति को माना जाता है। समाज एवं देश का संचालन भी वही वर्ग किया करता है जिस वर्ग के हाथ में पूँजी रही। असामाजिक आत्मकेन्द्रिता, अनैतिकता का बौद्धिक समर्थन, आस्थाओं का खोखलापन, आदि इस बन की विशेषताएँ हैं।

४.५.३.२ : मध्यवर्ग

इसमें कर्मचारी, महाजन और छोटे व्यवसायी आते हैं। इसमें तीन प्रकार किये जा सकते हैं– उच्च मध्यवर्ग, मध्य–मध्यवर्ग तथा निम्न–मध्य वर्ग। उच्च मध्यवर्ग में सरकारी अफसर गैर सरकारी दफ्तरों के अफसर आदि आते हैं। इस वगर की विशेषताएँ बौद्धिक, अनैतिकता,

आत्मकेन्द्रिता, असामाजिक का समर्थन, आस्था का खोखलापन आदि है। डॉक्टर, वकील, प्रोफेसर भी इसी श्रेणी के लोग हैं। इस वगर में विलास एवं विश्रृंखलता अधिक है। साथ ही वासना तथा व्यापार की वृत्ति ज्यादा है। इसी वगर की लालसा साधन–सम्पन्न बनने की है। मध्य–मध्य वर्ग प्राय: व्यक्तिवादी रहा है। यह वर्ग समाज में नए विचारों का प्रसार करता है। इसी बुद्धिवादिता के कारण यह वगर सामाजिक समस्याओं को परखने में सक्षम रहा है। इस वगर का निर्माण एवं विकास पूँजीवादी के विकास–काल में हुआ। इस वर्ग पर पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव अत्याधिक मात्रा में पडा है, जिसके कारण इस वर्ग में अंधानुकरण बढने लगा है। वर्गीय विश्रृंखलता, कायरता, अपनी अवस्था के प्रति असंतोष एवं अप्राप्य की तीव्र लालसा आदि इस वगर की विशेषताएँ हैं। इस वगर के व्यक्तियों में स्वप्नवादिता दीख पडती है। शायद इसका कारण अभावग्रास्त जीवन रहा हो। वे जीवनभर अपनी स्थिति से ऊपर उठने के असफल प्रयास करते रहते है किन्तु हर बार मुँह की खाते हैं। इस वर्ग की एक विशेषता कायरता भी रही है।

४.५.३.३ : निम्नवर्ग

भारत के देहातों में किसानों एवं मजदूरों की स्थिति हमेशा दयनीय रही है जो निम्नवर्गीय है। यह वगर राजा, जमींदार, महाजन, ब्राह्मण, साहूकार तथा सरकारी अधिकारियां के अत्याचरों से पीडित रहा है। यह प्राचीन काल से ही चला आ रहा है कि उच्च वर्ग निम्न वर्ग का शोषण करता रहा। जैसे ही औद्योगिक क्रान्ति हो गई और कारखानों का निर्माण हो गया, उससे देहात के व्यवसाय ठप्प हो गये। एक–एक कर सभी पेशेवर लोग शहरों की ओर भागने लगे और वहाँ जाकर उन्हें मजदूर बनना पडा। इसी वजह से वे उच्चवर्ग के आधीन बन गए। फलत: उनके जीवन में दु:ख, दैन्य, दारिद्र, अभाव और घुटन छा गई। निर्धनता, अविश्वास और संदेह, विवशता और दुर्दशा, अत्याचार, विद्रोह, विजय की आशा ये निम्न वगर की विशेषताएँ मानी जाती हैं।

निम्नवर्ग के शोषण की ओर कार्ल मार्क्स का ध्यान गया और उन्होंने 'समाजवादी विचारधारा' का प्रचलन किया। उन्होंने शोषकों के प्रति घृणा और शोषितों के प्रति दया का भाव दिखलाया। सम्पति पर समान अधिकार की भावना ही इसके मूल में रही। मार्क्स के सपनों का

मनुष्य सर्वांगपूर्ण विकसित व्यक्ति है। मार्क्स का मुख्य लक्ष्य था कि शोषित वर्ग पर की कृत श्रम की स्थितियों के प्रति विद्रोह करता रह और इसी के द्वारा 'निषेध' का निषेध करते हुए अपनी मुक्ति पा सके।'' कार्ल मार्क्स ने शोषक वर्ग का निषेध किया है। वर्ग विहीन समाज–स्थापना की आशा की है।

शहरों की तुलना में गाँवो की जनता अधिक शोषित रही हैं। शहरों में जो मजदूर या नौकर के रूप में रहने लगे, उनके प्रति उच्च वर्ग के रवैये को विश्लेषित करते हुए डॉ. सुधाकर गोकाककर जी लिखते हैं– ''घर में काम करने वाले नौकर–नौकरानियों के सम्बन्ध में उच्च वगर के मालिकों के मनमें एक स्थाई अविश्वास और घृणा की भावना वास करती है। बडे लोग गरीबों को सदा अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं। वे यह मानने को कदापि प्रस्तुत नहीं होते कि गरीब भी आदमी है, उसके मन में भी भावनाएँ होती हैं कि निम्नवर्ग की कठिनाईयाँ और विवशताओं की ओर उनका ध्यान बिलकुल नहीं रहता। उस वर्ग की इच्छा यह होती है कि ये छोटे लोग हमेशा उसकी सेवा में तत्पर रहें।''[२३] उच्च वर्ग के द्वारा निम्न वर्ग के लोगों की उपेक्षा का विश्लेषण यहाँ हुआ है।

४.५.४ : वर्ण

भारतीय समाज वर्ग, जाति, वर्ण, आदि विभागों में विभाजित हो गया है। पारम्परिक दृष्टि से भारत में सामाजिक स्थिति और क्रिया–कलापों की दृष्टि से समाज के चार वर्ण माने गए हैं – ज्ञान प्रमुख वर्ण ब्राह्मणों का, क्रिया प्रमुख वर्ण क्षत्रियों का, इच्छा प्रमुख वर्ण वैश्यों का, और श्रम प्रमुख वर्ण शुद्रों का। प्राचीन काल में इनकी गुणों के आधार पर श्रेणियाँ बनाई जाती थी। किसी को हीन दृष्टि से देखा नहीं जाता था। प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुसार काम मिले, इसी प्रकार की भावना उसके पीछे थे। इसके कारण समाज में सुवारू रूप से कार्य–विभाजन होता था। परन्तु धीरे–धीरे इस वर्ण व्यवस्था में बुराइयाँ आ गई। पहले जो इसका आधार कर्म परिवर्तित होकर जन्म, वंश हो गया जिसके कारण कट्टरता बढ गई।

४.५.५ : धार्मिक संस्थाएँ

समाज में व्यवस्था बनाए रखने का काम सदियों से धार्मिक संस्थाएँ ही करती आयी हैं। इसी वजह से सभी समाज सुधारक धर्म को समाज–सुधार का एक महत्वपूर्ण साधन मानते हैं। और उसका व्यापक रूप में प्रयोग करते हैं। धार्मिक संस्थाएँ पापी मनुष्य को पाप से दूर रखने के लिए उसे दंड का भय दिखाकर नियंत्रण तो करती ही है साथ ही व्यक्ति को विश्वास भी दिलाती हैं कि अच्छे कार्य का फल उस व्यक्ति को अच्छा ही मिलेगा।

४.५.६ : राज्य

राजनीतिक संगठन की दृष्टि से राज्य का समाज में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति को सामाजिक बनाने के लिए महत्वपूर्ण चीजें राज्य ही प्रदान करता है। यह अत्यन्त आवश्यक स्थाई संस्था है। यह समाज निर्माण की आरम्भिक अवस्था में अस्तित्व में आई। राज्य समाज में शांति प्रस्थापित करने का कार्य कर लोगों की आपसी सम्बन्धों को सुचारू बनाता है। साथ ही सामाजिक व्यवस्था को व्यवस्थित रूप से चलाने में भी राज्य ही मदद करता है।

४.५.७ : न्याय अथवा कानून

राजनीतिशास्त्र के अनुसार कानून उस नियम को कहते हैं, जो लोगों के बाह्य कार्यो से सम्बन्धित हो और जो राज्य द्वारा लागू किया जाए। ''कानून के बारे में कहा जा सकता है कि समाज के मार्ग में आने वाली बाधाओ को दूर करने के लिए जिस दंडधारी संस्था का निर्माण किया जाता है, जिसका मूल काम ही यह रखा गया है कि वह अपनी शक्ति और दंड के आधार पर समाज की व्यवस्था को बचाए रखे, उसे कानून कहते हैं।''[२४] डॉ. रवीन्द्रकुमार सिंहजी ने को कानून को यथार्थ रूप में परिभाषित किया है। कानून सभी लोगों पर समान परिस्थितियों में समान रूप से लागू किया जाता है। इसका उल्लंघन जो भी करता है वह दंड का भागी होता है। अर्थात् समाज में शांति प्रस्थापित करने का महत्वपूर्ण कार्य कानून करता है। समाज में विधि द्वारा

स्थापित कानून के साथ समाज द्वारा स्वीकृत और परम्परा के रूप में अनुगामित प्रथागत कानूनों की भी व्याप्ति रहती है।

४.५.८ : लोक रीतियाँ

जिस समाज में व्यक्ति रहता है, उसी समाज द्वारा लोक–रीतियाँ बनाई गई होती हैं। इसी कारण इनके प्रति कोई भी अवहेलना का भाव नहीं रखता अगर उसने अवहेलना की तो वह सामाजिक अवहेलना मानी जाती है। इन रीतियों का पालन मनुष्य कर्तव्य भावना से प्रेरित होकर करता है। लोक–रीतियों की सामान्य विशेषताएँ निम्नलिखित रूपों में दिखाई देती हैं।

४.५.९ : सहज उत्पति

लोक रीतियों की उत्पति सहज रूप में होती है। इन्हें विचारपूर्ण रूप से नियोजित या निर्मित नहीं किया जाता। ये अनियोजित होती हैं।

४.५.१० : स्वीकृत व्यवहार

लोक–रीतियों के व्यवहार के ढंग स्वीकृत होते हैं। कुछ ढंग समाज द्वारा स्वीकृत होते हैं, कुछ को समाज स्वीकृति नहीं देता।

४.५.११ : विशिष्टता

विभिन्न समूहों में विभिन्न प्रकार की लोक–रीतियाँ होती हैं। हर एक समूह में खाने, अभिवादन आदि की रीतियाँ अलग होने के कारण विशिष्टता ही है।

४.५.१२ : अनुवंशिक

लोक–रीतियाँ एक पीढी से दूसरे पीढी तक हस्तांतरित होती रहती हैं। अर्थात् व्यक्ति लोक–रीतियों को अपने पूर्वजों से प्राप्त करता है।

४.५.१३ : लोक–रीतियाँ एवं प्रथाएँ

समाजशास्त्र की दृष्टि से लोक–रीतियाँ और प्रथाओं में अन्तर है। लोक–रीतियों का प्रथाओं की अपेक्षा अधिक सामान्य एवं व्यापक रूप होता है। लोक–रीतियों में व्यवहार की सभी विधियाँ या सहजगत रीतियाँ सम्मिलित होती हैं जो 'प्रथा' में नहीं होती। गोहत्या न करना, नियमित दाँत साफ करना, नमस्कार करना, आदि लोक–रीतियाँ हैं। जब कि प्रथाएँ समूह के जीवन एवं विकास से सम्बद्ध होती हैं। इन दोनों में मात्रा का अंतर है। प्रत्येक समाज एवं क्षेत्र में इनमें परिवर्तन–धर्मिता की प्रवृति देती है।

४.५.१४ : रूढियाँ

रूढियाँ वस्तुत: ये भी अनौपचारिक सामाजिक मानदण्ड ही है। क्योंकि इनकी पृष्ठभूमि में भी सामाजिक स्वीकृति ही रहती है। लोक–रीतियों से ही रूढियों का निर्माण होता है। जब कोई लोक–रीति बहुत अधिक व्यवहार में आती है, तो आवश्यक समझी जाती है। और वह रूढि का रूप धारण कर लेती है। रूढियों के बारे में डॉ. कश्मीरीलाल जी का मंतव्य है– ''परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि रूढियाँ समाज की मान्यताएँ प्राप्त करके सुदृढ आधार ले लेती हैं, इनमें परिवर्तन, मूल्य निर्माण रहता है। ये सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रकार की होती हैं। नकारात्मक रूढियाँ ही हैं। स्थान, काल, परिस्थिति आदि के प्रभाव से रूढियों के प्रभावित होने की स्थिति भी देखने में आती है। चोरी नहीं करनी चाहिए, पर स्त्री गमन निषेध, मद्यपान, निषेध इसी प्रकार की निषेधात्मक रूढियाँ है जब कि ईमानदार बनो, सत्य बोलो, बडें का सम्मान करो आदि सकारात्मक रूढियाँ हैं।''[२५] चाहे सकारात्मक हो चाहे निखेकात्मक; साहित्य में इन दोनों का ही चित्रण होता रहता है।

४.५.१५ : नैतिकता एवं धर्म

समाज के लिए सामाजिक मानदंड उपस्थित करने का काम नैतिकता करती है। नैतिक नियमों में चरित्र–निर्माण पर बल दिया जाता है। इसी वजह से न्याय, पवित्रता आदि को दुदृढ

आधार मिलता है। लोक–रीतियाँ और रूढियों की तुलना में ये अधिक स्थिर होती हैं। नैतिकता का सम्बन्ध केवल 'काम' से नहीं होता बल्कि अन्य विभिन्न क्षेत्रों से भी होता है। जैसे अध्यापकों की नैतिकता, चिकित्सकों की नैतिकता आदि।

धर्म नैतिकता से ही सम्बद्ध होता है। कई नीति–नियमों की उत्पति धर्म से होती है इसलिए नैतिक सिद्धान्तों का परिपालन धर्म भय से होता है। दैनिक व्यवहार में धर्म भय के कारण नैतिक नियमों का पालन करना भारतीय संस्कृति का विशेष गुण है।

४.६ : भीष्म साहनी के समाज सम्बन्धी विचार

समाज की इकाइयों को देखने के बाद हम कथाकार भीष्म साहनी जी के समाज सम्बन्धी विचार क्या हैं, यह देखेंगे। भीष्म जी सोचते हैं कि साहित्य लिखने के लिए समाज से प्रेरणा ली जानी चाहिए और उसी समाज का यथार्थ अंकन साहित्य में होना चाहिए। उनके मतानुसार – ''आज के जमाने में साहित्य में 'समाजोन्मुख यथार्थवाद की चर्चा अधिक होने लगी है, और यह मुझे सही और अधिक स्वाभाविक तथा संगत लगता है।'' क्या कहानी की श्रेष्ठता उसके सामाजिक होने में ही है? सुरेन्द्र तिवारी के इस प्रश्न पर उन्होंने स्पष्ट किया – ''जीवन के किसी पक्ष का प्रामाणिक, कलात्मक चित्रण कहानी को श्रेष्ठ बनाता है। सामाजिकता कोई अलग तत्व नहीं है। जीवन से साक्षात् करते समय हम सामाजिक तत्व को दरगुजर नहीं कर सकते। जिस भाँति मनुष्य पूर्णत: आत्मनिर्भर नहीं होता और अपने परिवेश के साथ सैंकडों तंतुओं से जुडा होता है, वैसे ही सामाजिकता के साथी भी उनका अभिन्न सम्बद्ध रहता है। व्यक्ति को समझने के लिए उसे सामाजिक परिप्रेष्य से अलग करके नहीं देखा जा सकता।''[२६] भीष्म जी के उपर्युक्त कथन से उनके साहित्य और समाज के सम्बन्धी विचारों का पता चलता है।

४.७ : भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में चित्रित समाज–जीवन

समाज क्या है? उसकी परिभाषा कौन–सी है? उसके अंग कौन–से हैं? उसके सैद्धान्तिक विवेचन के आधार पर भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में चित्रित समाज कैसा है?

उन्होंने कौन–कौन से अंगो को किस रूप में प्रस्तुत किया है? इन बातों का विवेचन प्रस्तुत शीर्षक के अन्तर्गत देखना उचित होगा।

४.७.१ : तत्कालीन परिस्थिति और समाज

भीष्म साहनीजी का जन्म स्वाधीनता के पहले हुआ और स्वाधीनता के बाद उन्होने साहित्य–सृजन करना शुरू किया। अर्थात् स्वाधीनता के समय को उन्होंने भोगा और परखा था। इसका असर भीष्म जी के अपने व्यक्तितव पर तो हुआ है। परन्तु तत्कालीन समाज को जो कुछ भुगतान पडा, उसका चित्रण भी उनके साहित्य में आया। विशेष वे पंजाब के रहने वाले होने के कारण उन्हें विभाजन की त्रासदी को भुगतना पडा जिसका जिक्र उनकी कई कहानियों तथा उपन्यासों में आया है। अँग्रेजों के जमाने में अंग्रेजों, जमीनदारों, साहूकारों द्वारा सामान्य जनता पर जो अन्याय, अत्याचार होता था, उसका भी चित्रण भीष्म जी करते हैं। सामाजिक राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, साहित्यक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का असर भीष्म जी के अपने व्यक्तित्व और फि साहित्य इन दोनों पर ही पूरी तरह से पडा हुआ दिखाई देता है। इन इकाइयों के आधार पर ही समाज खडा होता है। इन्हीं के आधार पर हम उस समाज की वास्तविक स्थिति का पता प्राप्त कर सकते हैं। इन्हीं के आधार पर हम उस समाज की वास्तविक स्थिति का पता प्राप्त कर सकते हैं। हालांकि इन सभी इकाइयों में सबसे महत्वपूर्ण इकाइर व्यक्ति को माना जाता है। परन्तु अन्य सभी इकाइयाँ भी महत्व की हैं। अब हम इन इकाइयों के आधार पर भीष्म साहनी के कथा–साहित्य का विवेचन करेंगे।

जिस प्रकार समाजशास्त्री 'व्यक्ति' को समाज की सबसे महत्वपूर्ण और सबसे छोटी इकाई मानते हैं ुसी प्रकार भीष्म साहनी भी एक व्यक्ति को महत्वपूर्ण मनते हैं। जब तक व्यक्ति नहीं है उससे समाज का निर्माण नहीं हो सकता। व्यक्ति ही समाज की नींव है। भीष्म साहनी जी ने अपने कथा–साहित्य में कई बार व्यक्ति को महत्वपूर्ण साबित किया है। वह समाज का प्रतिनिधित्व कर सकता है, परन्तु उसके बिना समाज की कल्पना सम्भव नहीं, जैसे–भीष्म साहनी का पहला उपन्यास 'शगडी–बगडी' को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। यह 'शगडी–

बगडी' स्वयं भीष्म साहनी हैं और यह उपन्यास उन्हीं के बचपन का वर्णन करता है। इसलिए पूरे परिवार में छोटा बालक होते हुए भी एक महत्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में वह उभरता है। इस प्रकार भीष्म जी का 'बसंती' उपन्यास बसंती को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। उसके जीवन का ताना–बाना उसी के वजह से सुलझता है और उसी की वजह से उलझता भी है। भीष्म जी का 'तमस' उपन्यास चाहे एक व्यक्ति को केन्द्र में रखकर न लिखा गया है फिर भी उसमें मुराद अली, नत्थू, रिचर्ड, राजों जैसे व्यक्ति अत्यन्त महत्वपूर्ण साबित होते हैं। अर्थात् यहाँ भी व्यक्ति की महत्ता स्थापित होती है। भीष्म जी का महत्वपूर्ण उपन्यास 'मैय्यादास की माडी' शीर्षक की दृष्टि से चाहे 'मैय्यादास' को महत्व देता हो फिर भी उसमें धनपतराय ही अत्यन्त महत्वपूर्ण व्यक्ति साबित हुआ है। दीवन मैय्यादास तो माडी का अतीत दर्शाने उपन्यास में आया है। भीष्म जी का हक ही उपन्यास 'कुंतो' ऐसा हो जो व्यक्ति प्रधान उपन्यास है परन्तु इसमें किसी एक व्यक्ति को महत्णपूर्ण नहीं माना गया है बल्कि, प्रोफेस्साब, जयदेव, कुंतो, सुषमा, गिरीश आदि सभी को महत्व दिया गया है।

भीष्म साहनी की कहानियों में भी कई कहानियाँ ऐसी हैं जिसमें व्यक्ति को केन्द्र में रखा गया है। इन कहानियों में प्रमुख हैं – जोत, शिष्टाचार, रानी मेहतो, समाधि भाई, रामसिंह, ललिता, फूलाँ, खून का रिश्ता, लेनिन का साथी, सीर का सदमा, इलमा, प्रोफेसर गता सहस्सरनाम, निमित, मेड इन इटली, रामचंदानी, शोभायात्रा, ढोलक, पाली, देवेन, चाचा, मंगलसैन, गुर्ग मुसल्लम, सरदारनी, डायन, बीरो, गैारेया, बकबरा–शाह–शेर–अली आदि। इन कहानियों में से कुछ कहानियाँ हेसी हैं, जिनका शीर्षक ही उस व्यक्ति को द्योतित करता है परन्तु कुछ कहानियों के शीर्षक से पता नहीं चलता है कि इस कहानी में किस व्यक्ति को प्रधानता दी गई है। भीष्म जी की एक कहानी 'सलमा आपा' शीर्षक की दृष्टि से देखा जाए तो ऐसा लगता है कि सलमा आपा के अस्तित्व का भी पता नहीं चलता। उसके नाम का सिर्फ आधार लिया गया है।

भीष्म जी ने अन्य भी कई कहानियों में व्यक्ति को प्राधान्य दिया है और समाज में उनके अस्तित्व को प्रस्थापित किया है। समाज को ऐसे व्यक्ति कभी सिखा देते हैं, कभी आदर्श

प्रस्तापित करते हैं। परन्तु भीष्म साहनी ने सिर्फ ऐसे ही व्यक्तियों को महत्वपूर्ण नहीं माना है तो उन्होंने समाज के हर व्यक्ति को उतना ही महत्वपूर्ण माना है। सिर्फ कुछ व्यक्ति अपने गुणों के कारण अलगत्व दिखाते हैं और समाज में उनका महत्व बढ जाता है। उदाहरण के लिए – 'कुंतो' उपन्यास के प्रोफेस्साब अत्यन्त महत्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में देखते हैं और उनके साथ सहज बर्ताव करते हैं जिसके कारण जयदेव प्रभावित होकर सोचता है–''दर्जियों के साथ प्रोफेस्साब कितने हिल–मिलकर बातें कर रहे हैं। कौन ऐसा दर्जी होगा जो अपने ग्राहक से कहे कि तुम चाय तैयार करवाओ मैं तुम्हारा कोट लेकर आता हूँ।'' अर्थात् समाज का हर एक व्यक्ति महत्वपूर्ण है। व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति का महत्व तभी मालूम होता है, जब उस पर कोई विपत्ति आती है, जैसे– 'सरदारनी' कहानी के मास्टरजी को सरदारनी अकेली उसकी जाति के अर्थात् मुसलमानों के मुहल्ले में छोड आती है। यहाँ भी सरदारनी अत्यन्त महत्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में सामने आती है जो फसाद का खतरा देख मास्टरजी की मदद करती है।

इस प्रकार हम यह पाते हैन कि भीष्म साहनी ने समाज के हर व्यक्ति को महत्वपूर्ण माना है।

भीष्म साहनी के प्रथम उपन्यास 'झरोखे' में एक सम्मिलित परिवार का वर्णन है, जिस पर आर्य समाजी संस्कार है। यह परिवार पाप से डरता है और नैतिक बंधनों को स्वीकार करता है। लेकिन व्यापार करने वाले बात का आधुनिक विचारों वाला बेटा व्यापार त्यागकर नौकरी करने जाना चाहता है, जिसके कारण परिवार विघटित हो जाता है। इस परिवार विघटन से सभी दु:खी होते हैं।

भीष्म जी के 'कड्यिाँ' उपन्यास में विघटित–परिवार का ही चित्रण किया गया है परन्तु पति–पत्नी के बिगड्ते सम्बन्धों के कारण वह परिवार और भी विघटित हो जाता है। इस विघटन से परिवार के तीनों सदस्य महेन्द्र, प्रमिला और पप्पू का मानसिक संतुलन बिगड जाता है।

भीष्म जी के 'तमस' उपन्यास में एक साथ कई परिवारों का वर्णन किया गया है। नत्थू और उसकी पत्नी, रिचर्ड और लिजा, लाला लक्ष्मीनारायण का परिवार रघुनाथ का परिवार, हरनामसिंह और बंतो, राजो का परिवार आदि। यह उपन्यास विभाजन और उससे उत्पन्न

साम्प्रदायिकता को चित्रित करने वाला है। अत: इन सभी परिवारों पर इस फिसाद के हुए परिणाम का वर्णन ही इस उपन्यास में अधिक आया है। पारिवारिक सम्बन्धों का वर्णन सिर्फ रिचर्ड लीजा तथा नत्थू और उसकी पत्नी इन दो परिवारों के संदर्भ में ही आया है।

भीष्म जी के 'बसंती' उपन्यास में बस्ती तोडे जाने के कारण बसंती, उसके पिता, माता और भाई इन सभी के बिछड्ने का वर्णन है। जिससे बसंती की जिन्दगी टूट जाती है। फिर वह संभल नहीं पाती और लाख कोशिश कर बनाया गया तंदूर भी जब टूट जाता है तो उसकी फिर एक बार वही स्थिति (अकेलेपन की) हो जाती है जो वस्ती टूटने पर हुई थी।

'मैय्यादास की माडी' में भी कई परिवारों का चित्रण हुआ है परन्तु मूलस्वरूप से मैय्यादास और धनपतराय तथा उसके तीनों बेटे इस परिवार को ही केन्द्र में रखा गया है। इस परिवार के संघर्ष, इस परिवार की वजह से उस कस्बे में होने वाले परिवर्तन आदि का चित्रण इस उपन्यास में हुआ है। अर्थात् इस परिवार के बहाने से कस्बे के सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण उपन्यासकार ने किया है।

भीष्म साहनी जी के 'कुंतो' उपन्यास में भी एक साथ कई परिवारों का चित्रण किया गया है। इस उपन्यास के मूल में ही जयदेव, प्रोफेस्साब, सुषमा ये तीन परिवार हक साथ चित्रित हैं। फिर इन तीनों परिवारों के बदलते सम्बन्धों के आधार पर इसमें चित्रित पात्रों का चरित्र–चित्रण, उनकी समस्याओं का चित्रण किया गया है। बाद में कुंतो और जयदेव अपना अलग घर बसाते हैं।

भीष्म साहनीजी की कई कहानियाँ सम्मिलित परिवार का चित्रण करती है, जैसे– घर की इज्जत, चीफ की दावत, ललिता, खून का रिश्ता, तस्वीर, चाचा मंगलसेन, डायन आदि। इनमें से 'घर की इज़्ज़त' कहानी की छोटी बहू को उसके जेठ की वजह से नाटक में काम करने नहीं दिया जाता। 'चीफ की दावत' कहानी के शामनाथ को पार्टी के समय माँ अड्चन लगाती है। 'ललिता' कहानी की ललिता अपने ससुरालवालों से तंग है। 'खून का रिश्ता' का भतीजा अपने चाचा को उनकी कुछ आदतों की वजह से घर से निकाल देता है। 'तस्वीर' कहानी की बहू को उसके पति के मर जाने के बाद उसके ससुर त्रस्त कर देते हैं। उसको मानसिक रूप से निराश कर देते हैं। 'चाचा मंगलसेन' कहानी के चाचा गरीब हैं इसलिए घर में उनकी कोई इज़्ज़त नहीं

करता। 'डायन' कहानी की माँ अपनी बहू को डायन करार देकर उस पर इलाज कराती फिरती है। अर्थात् यहाँ हर एक पात्र सम्मिलित परिवार की समस्याओं से त्रस्त दिखाई देता है।

भीष्म साहनी ने अपनी कुछ कहानियों में विघटित परिवार का चित्रण भी किया है, जैसे– शिष्टचार, तमगे, क्रिकेट मैच, गंगो का जाया, रानी मेहतो, प्रणय–लीला, अकाल मृत्यु, फूला, सिफारिशी चिट्ठी, एक रोमांटिक कहानी, सिर का सदमा, इमला, पास–फेल, कटघरे, गीता सहस्त्र नाम, ओ हरामजादे, गलमुच्छे, कंठहार, सरदारनी, पाली प्रादुर्भाव, देवेन, झूमर, जख्म आदि। भीष्म साहनी जी की इन कहानियों में कुछ कहानियाँ ऐसी है जिनमें पहले से ही विघटित–परिवार का चित्रण है जबकि कुछ कहानियाँ हेसी है जिनमें पहले से ही विघटित–परिवार का चित्रण है जबकि कुछ कहानियों में बाद में परिवार–विघटन हुआ है, जैसे 'गंगो का जाया' कहानी के अर्थाभाव के कारण छोटे बच्चे से बूटपोलिश करवाता जाता है और वह बच्चा खो जाने के कारण परिवार विघटित हो जाता है। 'पाली' कहानी में देश विभाजन के समय का वर्णन है। मनोहरलाल और उसके परिवार से उनका बेटा पाली विभाजन के समय बिछड जाता है, और परिवार– विघटन हो जाता है। भीष्म साहनी की एक और कहानी 'मुझे मेरे घर छोड आओ' भी विभाजन की त्रासदी का चित्रण करने वाली कहानी है।

इस प्रकार हम यह देखते हैं कि भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में विभाजित परिवार हो या सम्मिलित, दोनों की समस्याओं का करूण चित्रण किया है। इन दोनों की अपनी अलग समस्याओं को प्रस्तुत कर भीष्म साहनी ने समाज में परिवारों की यथार्थ स्थिति पर प्रकाश डाला है और परिवार के कारण मनुष्य सामाजिक कैसे बनता है, इसका चित्रण किया है जिससे समाज में परिवार का महत्वपूर्ण स्थान अंकित हुआ है।

४.७.२ : उच्च वर्ग और समाज

भीष्म साहनी जी ने अपने कथा–साहित्य में उच्च वर्ग का चित्रण बहुत कम किया है। शायद इसका कारण यह रहा हो कि उनका अपना जन्म मध्यवर्गीय परिवार में हुआ है। कारण चाहे जो भी हो समाज के उच्चवर्ग के प्रति उनके मन में घृणा का भाव रहा है क्योंकि यह वगर निम्न वर्ग का शोषण

करता है। भीष्म साहनी पर मार्क्सवाद का प्रभाव भी पडा है। भीष्म साहनी जी के 'झरोखे' उपन्यास में तुलसी नामक नौकर पर जुल्मों का चित्रण है। वह हंमेशा वफादारी से घर का काम करता है परन्तु इसके बदले में उसे उपेक्षा ही मिलती है।

भीष्म जी के द्वितीय उपन्यास 'कड्यिाँ' में वैसे तो मध्यवर्ग का चित्रण हुआ है परन्तु प्रमिला की पडोसन सतवंत का वर्णन करते समय उसकी उच्चवर्गीय मानसिकता को चित्रित किया गया है। ''सतवंत जानती थी कि तरक्की मिलने पर उसके सरदारजी सबसे पहले टेलीविजन सैट लायेंगे। जिस चीज का सरकारी हलकों में जलन हो उसे ज्यादा देर तक तो स्थगित नहीं किया जा सकता। दोनों के घर के 'माइयाँ' सफाई करने वर्तन मलने और कपडे धोने के लिए आती थी।'' अर्थात् उच्चवर्ग की तरह रहने की अभिलाषा ही उसे ये सब कुछ करवाती है।

भीष्म जी के 'तमस' उपन्यास में उच्चवर्गीय व्यक्ति निम्नवर्गीय लोगों पर किस प्रकार रोब जमाता है, अथवा उच्चवगीरय अफसर का निम्नवर्गीय या मध्यवर्गीय मतहत के प्रति रवैया कैसा होता है। इसका चित्रण लीजा एवं रिचर्ड के माध्यम से किया गया है। वे दोनों ही अपने नौकरों के प्रति उपेक्षा का भाव रखते हैं। लीजा की जब किसी बाबू के धर्म को जनने की इच्छा होती है तो वह उसके कपडे उतरवाकर 'हिण्ड्र थ्रेड' ढूंढती है और न मिलने पर साहब को बताने की धमकी भी देती है।

भीष्म जी ने अपने 'बसंती' उपन्यास में भी उच्च वर्ग और निम्नवर्ग के अन्तर को स्पष्ट करते हुए उच्च वर्ग का निम्नवर्ग के प्रति नजरिया कैसा है, इसका चित्रण किया है। जैसे–बसती न तोड्ने के लिए जब बस्ती के कुछ लोग अफसर से मिलने चले जाते हैं और अफसर का कडा रवैया देखते हैं तो वापस लौटकर उन्हीं में से हक व्यक्ति हीरा कहता है – ''तुम्हारे भाग अच्छे थे, तुम अफसर बन गए। हमारे भाग खोटे भे, हम मिस्त्री–मजूर बने, पर भाई, बोलो तो मीठा। हमारा पानी तो नहीं उतारो, हम तुम्हारे द्वारा पर आए हैं, हमारी पगडी तो नहीं उछालो। हमारे बाप–दादा भी जमीन–जायदादवाले थे। अभी राजस्थान में हमारी अपनी खेती है। अब वहाँ सूखा पडे तो हम क्या करें? बाल–बच्चों का पेट पालने के लिए दिल्ली चले आए। पर हमारे साथ बोलो तो मीठा।''

बसंती जब दीनू से गर्भधारण कर बरडू के डर से भागकर श्यामा बीबी के पास आती है तो उनका मन शंकित होने लगता है वह सोचती है– ''अब यह पहले वाली बसंती तो नहीं, अब यह पहले वाली बसंती तो नहीं, अब घाट–घाट का पानी पी चुकी है। अपने आप ही झाडू उठाकर पिछले कमरे में चली गई। वहाँ मेरी कितनी ही चीजें बिखरी पडी हैं। एकाध चीज उठा ले तो मुझे क्या पता चलेगा?

आजकल तो इसे जरूरत भी रहती होगी। क्या मालूम किस काम से आई है। इतने दिन तक नहीं आई, आज ही क्यों दौडी चली आई है? और वह भी दिन–दहाडे क्या मालूम चोरी–चकारी करने लगी हो।'' पहले बसंत्त के बिना जिसका काम नहीं चलता था, आज उसी बसंती पर जब विपत्ति आयी हो उसी पर श्यामाबीबी संदेह करती हैं। बच्चा पैदा हो जाने के बाद जब बसंती अपने बच्चे को अच्छे–अच्छे कपडे पहना देती है तो श्यामाबीबी का संदेह और भी बढ जाता है और वह उसे थैला आँगन में रखकर घर में आने के लिए कहती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वह उसे हर बार सशंक दृष्टि से ही देखती है।

भीष्म जी के 'मैय्यादास की माडी' उपन्यास में माडी के मनचले युवक खोमचेवाले से सौदा लेकर खा लेते हैं और जब वह पैसे माँगता है तो उसे पीटकर उसका खोमचा उलट देते हैं। यहाँ तक कि पुरोहित का मजाक भी उडाते हैं। जब दीवान धनपत मलिक मनसाराम की बेटी की पालकी वापस लौटाकर फिर अपने पगलैटे बेटे का ब्याह करता है तो लोग इसका कारण बताते हुए अलग–अलग मत बताते हैं– ''दीवान धनपत पुरानी अदावत का बदला लेना चाहता था।''(२७)

भीष्म साहनी जी की कहानियों में भी उच्चवर्ग का चित्रण हुआ है, जैसे – रानी मेहतो कहानी की रानी, उच्च वर्ग की होकर भी सामान्य जीवन व्यतीत करती है।'' रानी महेतो, जो अपने हाथ से रसोई बनाती, कपडे धोती, बरतन माँजती और पहाडी नाले पर से पानी खींचा करती।'' उसका इस प्रकार सामान्य जीवन व्यतीत करना लोगों के मन में उसके प्रति श्रद्धाभाव उपस्थित करता था। इसके विपरीत 'गीता रहस्सर नाम' कहानी की चाची का लड्का उच्चवर्गीय होते हुए भी वह अपनी बूढी माँ की उपेक्षा करता है।

'ओ हरामजादे' कहानी का मिस्टर लाल विदेश में रहने वाला लेकिन भारत से प्यार करने वाला उच्चवर्गीय भारतीय इन्सान है। 'साग–मीट' कहानी में उच्चवर्गीय लोगों का नौकरों के प्रति रवैया कैसा है, इसका चित्रण किया गया है। 'गलमुच्छे' कहानी का अफसर एक ऐसा व्यक्ति है जो पहले कामरेड था परन्तु अब बहुत बडा अफसर बन गया है। जब पुराना साथी उसे किसी समारोह के सिलसिले में बुलाने आता है तो वह अपनी हेठी दिखा देता है। 'शोभायात्रा' कहानी वैसे तो बलि–प्रथा के निषेध की कहानी है परन्तु उसमें एक राजा के उच्चवर्गीय जीवन का चित्रण मिलता है। 'शिष्टाचार' कहानी में उच्चवर्गीय लोगों के शिष्टाचार और निम्नवर्गीय लोगों के शिष्टाचार और निम्नवर्गीय लोगों के शिष्टाचार की तुलना की गयी है। यहाँ भी उच्चवर्गीय लोग अपने नौकरों पर कैसा संदेह करते हैं, उसका चित्रण किया है। इस परिवार की श्रीमती जी सोचती हैं कि ''सब मक्कार, गलीज और लंपट होते हैं।

किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। सभी पैसे काटते हैं, और सभी हर वक्त नौकरी की तलाश में रहते हैं, जो मिल जाये तो उसी वक्त घर से बीमारी की चिट्ठी मँगवा लेते हैं।''[२८] नौकरों के प्रति उनका दृष्टिकोण हमेशा ही एक शोषक का रहता है। 'क्रिकेट मैच' कहानी में कहानी की नायिका पुष्पा एक ऐसी उच्चवर्गीय स्त्री है जो अपने पति को अपनी मुट्ठी में रखने के लिह बहुत सारे प्रयास करती है। 'कंठहार' कहानी की मालती अपनी बेटी के अपाहिजत्व को भुलाने के लिए पार्टियों और गहनों में व्यस्त हो जाती है। भीष्म जी की कहानी 'मकबरा–शाह–शेर–अलीद में 'शाह–शेर–अली' अपनी जीबितावस्था में ही अपना सुन्दर मकबरा बना लेता है और उसी के कारण पागल भी बन जाता है। और अंत में मर जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि भीष्म साहनी जी के कथा–साहित्य में उच्च वर्ग का अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया गया है, जिससे उच्च वर्ग की यथार्थ स्थिति का पता चलता है।

४.७.३ : मध्य वर्ग और समाज

आधुनिक काल में जैसे–जैसे मध्यवर्ग का निर्माण होता गया उसमें भी उपवर्गो का निर्माण होता गया। मध्यवर्ग तीन विभागों में विभाजित हो गया–

१) उच्चमध्यवर्ग २) मध्यमध्यवर्ग ३) निम्न मध्यवर्ग।

भीष्म साहनी जी ने अपने कथा–साहित्य में इन तीनों ही प्रकारों को 'मध्यवर्ग' इसी एक ही कोटि में ढाला है। उस वर्ग का चित्रण भीष्म जी का चहेता विषय रहा है। उनका अपना जन्म ही इस वर्ग में हुआ है। इस उपन्यास में मध्यवर्गीय परिवारों में स्त्रियों पर पाप–पुण्य की कल्पना, रूढि–परम्पराएँ, रीति–रिवाज आदि बातों पर नैतिक बंधन का चित्रण किया गया है।

भीष्मजीने अपने 'कड्याँ' उपन्यास में भी मध्यवर्गीय अफसर की इच्छाओं को चित्रित किया है। यह मध्यवर्गीय अफसर, उसकी बीबी हमेशा उच्चवर्गीय बनने के सपने देखते हैं। मध्यवर्गीय लोगों का आर्थिक तना, उनकी समस्याएँ, बाह्य प्रेमसम्बन्ध आदि बातों का चित्रण इस उपन्यास में आया है। मध्यवर्गीय परिवारों में होने वाले पति–पत्नी के झगडों का परिणाम बच्चों पर कैसे होता है, इसका भी चित्रण इस उपन्यास में किया गया है।

'तमस' उपन्यास में लाला लक्ष्मीनारायण, रघुनाथ, राजो, आदि के परिवार मध्यवर्गीय परिवारों के अन्तर्गत आते हैं। इन सभी के परिवारों पर फसाद के कारण जो प्रभाव पडा, उसी का यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में आया है।

भीष्म साहनी के 'कुंतो' उपन्यास में प्रोफेस्साब, जयदेव, सुषमा आदि का परिवार मध्यवर्गीय परिवार है। इन परिवारों में होने वाली रीति, परम्पराएँ, पीढी–संघर्ष, स्त्री पर बनधन, प्रथाएँ आदि का चित्रण अत्यन्त विस्तृत रूप में इस उपन्यास में हुआ है।

भीष्म साहनीजी की कहानियों में भी मध्यवर्गी का चित्रण अत्यन्त सफलता के साथ हुआ है। इन कहानियों में प्रमुख हैं – चीफ की दावत, पहला पाठ, प्रणय–लीला, काँटे की चुभन, एषः धर्मः सनातनः, पाप पुण्य, ललिता, अकाल मृत्यु, फूलाँ, यादे, बीवर, खुन का रिश्ता, बात की बात, लेनिन का साथ, सिफारिशी चिट्ठी, एक रोमांटिक कहानी, सिर का सदका, कुछ और साल, इमला, कटघरे, वाइ्चू, अहं बाह्मास्मि, त्रास, खूँटे, निमित्त, मेड इन इटली, घरोह, लीला नंदलाल की, अशांत रूंह, ऊब, घर की इज्जत, सलमा आपा, दिवास्वप्न, जहूरबख्श, सरदारनी, दहलीज, पाली, प्रादुर्भाव, देवेन, आवाजें, झूमर, ललक, नया मकान, तस्वीर, रास्ता, डोरे, ढोलक, डायन, वीरों, चेहरे, रफ्तार, पर यह क्या वापसी–ब–वापसी, राहत आदि।

'चीफ की दावत' कहानी मनुष्य की स्वार्थी वृत्ति का पर्दाफाश करती है जो मध्यवर्गीय इन्सान की वृत्ति है। 'मेड इन इटली' और 'बीवर' ये दोनों कहानियाँ पाश्चात्यों के अंधानुकरण को दिखाती है। मध्यवर्गीय जीवन में धार्मिकता का महत्व कितना है, यह दिखाते हुए कहानी धर्म के रूप को प्रस्तुत करती है। ऐसी कहानियाँ हैं – ''काँटे की चुभन, पहला पाठ, एषः धर्मः समानतः, पाप–पुण्य, अहं ब्रह्मास्मि, डायन आदि। मध्यवर्गीय स्त्री पर होने वाले कडे बंधन, उस पर होने वाले अन्याय आदि का चित्रण जिन कहानियों में हुआ है, ऐसी कहानियाँ हैं – ललिता, बात की बात, एक रोमांटिक कहानी, सिर का सदका, कटघर, घर की इज्जत, देवेन, तस्वीर, डायन, वीरों आदि। इस प्रकार हम यह देखते हैं कि भीष्म साहनी ने अपने कथा–साहित्य में मध्यवर्ग के सभी अंगो का चित्रण अत्यन्त वास्तविक रूप में किया है। इससे उनके अपने अनुभवों का पर्दाफाश होता है और साथ ही मध्यवर्गीय लोगों की मानसिकता रूढि–परम्परा, आदि सभी बातों का पता हमें चलता है।

४.७.४ : निम्नवर्ग और समाज

निम्नवर्ग हमेशा से ही शोषित एवं पीडित रहा है। उच्चवर्ग के व्यक्ति हमेशा निम्नवर्ग की प्रताडना करते हैं। यह वगर हमेशा अपने आपको दीन, दुर्बल ही मानता है। इस वर्ग के व्यक्ति चाहे जितने पढ–लिख जाएँ समाज का उनकी तरफ देखने का नजरिया अलग ही होता है। भीष्म साहनी जी

की इस वर्ग के प्रति हमेशा सहानुभूति, दया, करूणा की भावना दिखाई देती है। भीष्म साहनीजी ने अपने कथा–साहित्य में निम्न वर्ग के लोगो पर होने वाले अन्याय, अत्याचार का, उनकी समस्याओ का करूण चित्र खींचा है। भीष्म जी के 'झरोखे' उपन्यास का नौकर तुलसी जब कुछ पढ लिख जाता है तो वह घर का काम करने से लजाने लगता है और वह सब काम उससे छूट जाता है। फिर कभी–भी वह सम्भल नहीं पाता। हमेशा ही वह इसी प्रकार बेरोजगार बना रहता है। घर में पिता उस पाखाने का प्रयोग भी नहीं करने देते हैं जिसमें सभी जाते हैं। अर्थात् उसका स्थान एक नौकर का ही रहता है। उसी परिवार का एक सदस्य कभी नहीं माना जाता।

'बसंती' उपन्यास में बसंती कई घरों में चौका–बर्तन करती है परन्तु उसके प्रति सभी हमेशा शासंक बने रहते हैं। उस पर हमेशा भरोसा करने वाली श्यामाबीबी भी उस पर भरोसा करने से इन्कार करती हैं। वह जिसे पति मानकर उसके साथ भागी है, वह दीनू तो उसे बेच देता है। अर्थात् हर कहीं उसे अपमान और अवहेलना को सहना पड्ता है। अंत तक उसकी इस स्थिति से उसका छुटकारा नहीं होता।

भीष्म जी के 'तमस' उपन्यास में नत्थू मुरादअली के कहने पर सुअर मरवाता है लेकिन इस बात का गम उसे हमेशा सताता है। मुरादअली जबरदस्ती उस पर यह काम सौंपता है। नत्थू उसके दबाव में आकर यह काम रखता है। शाहनवाज खान अपने मित्र रघुनाथ की पत्नी के गहने लाने जब उनके घर चला जाता है तो अचानक ही वातावरण के परिणामस्वरूप उठी प्रतिहिंसा की आग की वजह से वह मिलखी को सीढियों से नीचे गिरा देता है। बेचारा मिल्खी समझ भी नहीं पाता कि उसे किस अपराध की सजा दी जा रही है।

इस प्रकार भीष्म साहनी जी की कहानियों में भी निम्नवर्ग का यथार्थ चित्रण हुआ है, जैसे– भाईबंद, बाप–बेटा, माता–बिमाता, अपने–अपने बच्चे, राधा–अनुराधा, अनूठे–साक्षात, जोत, तमगें, मुर्गी की कीमत, नीली आँखे, गंगो का जाया, घर–बेघर, निशाचर, मुर्ग–मुसल्लम, अभी तो मैं जवान हूँ, आदि। 'भाई–बन्द' कहानी का व्यक्ति अपने भाई की बीमार तबियत होते हुए भी अपने ही पैसों के लिए (चपरासी के द्वारा उधार लिए) चपरासी की तकरार करने से डरता है क्योंकि वह उसके गाँव का रहने वाला है। 'बाप–बेटा' कहानी का बाप बेटे को आर्थिक बिबशता के कारण फौज में भरती करवाता है। 'माता–बिमाता' कहानी बालक अधिकार समस्या का चित्रण करती है। 'अपने–अपने बच्चे' कहानी की गीता, 'राधा–अनुराधा' कहानी राधा दोनों ही चौका–वर्तन का काम करती हैं। 'जोत' कहानी का

जनकू अर्थाभाव से पीड्ति रेंजर के दबाव में रहने वाला व्यक्ति है। 'तमगे' कहानी की माँ धोबन है। 'मुर्गी की कीमत' कहानी का मजदूर पैसे इकट्ठा न कर पाने के कारण घर जाने से कतराता है। 'नीली आँखे' के युवक और युवती दोनों ही अर्थाभाव से त्रस्त हैं। युवक बीमार और युवती अस्पताल के बाहर अकेली होने के कारण सभी की निगाहों का शिकार होती है। 'गंगो का जाया' कहानी के गंगो और उसके पति की मजदूरी छूट जाने के कारण विवश होकर छोटे बच्चे को बूट–पोलिश के काम पर लगा देते हैं लेकिन दुर्भाग्य के कारण बच्चे चुराती है। 'निशाचर' कहानी की केसरो और उसकी बेटी दोनों सुबह की धुंध में कागज बटोरती हैं जिससे कम–से–कम एक वक्त का खाना तो उन्हें मिले। 'गुर्ग–मुसल्लम' कहानी में राजनीतिक कैदियों के अनशन के कारण एक होटल के खानसामा को बिना वजह जेल में डालकर उससे खाना पकाया जाता है। और उसका जीवन बर्बाद कर दिया जाता है। 'अभी तो मैं जवान हूँ' यह भीष्म जी की कहानी वेश्याओं के अर्थाभाव से युक्त जीवन की दर्दनाक दास्तान है।

इस प्रकार हम यह पाते हैं कि भीष्म साहनी जी ने अपने कथा–साहित्य में समाज के तीनों वर्गो – उच्चवर्ग, मध्यवर्ग तथा निम्न वर्ग का यथार्थ चित्र खींचा है, जिससे इन तीनों ही वर्गो का यथार्थ रूप प्रकट होता है। साथ ही इन वर्गो में कौन–सी कमिर्या हैं, इनकी विशेषताएँ कौन–सी हैं, इनके कारण समाज कैसे विभाजित हो जाता है आदि बातों का पता हमें चलता है। यह वर्ग–विभाजन समाज की आर्थिक विषमता को प्रस्तुत करता है, कोई उच्चवर्गीय है तो कोई निम्नवर्गीय है। इन्हीं कारणों से उच्चवर्गियों को निम्नवर्गीय लोगों पर जुल्म करने का मौका भी मिल जाता है।

४.७.५ : वर्ण

भारतीय समाज में प्राचीन काल से चली आ रही वर्ण–व्यवस्था धीरे–धीरे खोखली बनती गयी और अँग्रेजों के आगमन, औद्योगीकरण आदि के कारण समाज का आर्थिक दृष्टि से वर्ग विभाजन हो गया। परन्तु आज भी समाज के जनमानस पर उसी वर्ण–व्यवस्था की गहरी छाप है। इसी कारण आज भी लोग ब्राह्मण के शाप से डरते हैं और शुद्र को हीन मानते हैं। भीष्म साहनीजी ने अपने कथा–साहित्य में प्रसंगानुकूल इसका वर्णन किया है।

भीष्म जी के 'झरोखे' उपन्यास में बेटों के यज्ञोपवीत संस्कार के समय लोगों द्वारा दिए गए दान को जब पंड्ित ले जाते हैं तो पहले तो माँ झल्लाती है कि पिताजी ने उसे जाने कैसे दिया, परन्तु जब वे कहते हैं – ''भगवान का शुक्र नहीं करती जो यह दिन आया है, तेरे बेटों का यज्ञोपवित हुआ है।

पंड्ति कोई तेरी जेब से पैसे ले गया है? लोगों के ही तो पैसे थे, उन्हीं का दान था। ऐसे दिन शुभ–शुभ बोलते हैं, तेरे बेटे सलामत रहें....।''[२९] तो कभी शगुन की बात न करने वाले पिता को शगुन की बात करते देख माँ चुप हो जाती है। अर्थात् अन्याय होकर भी उसे चुपचाप सहा है।

'तमस' उपन्यास में भी केवल वानप्रस्थी जी कहते हैं, इसलिए सामे लोग असलाह इकट्ठा करने लगते हैं । गाय की हत्या हुई है। यह सुनकर भी अन्यलोग उतने क्रोधित नहीं होते जितने वानप्रस्थी होते हैं। ये इन युवकों को लडाई के लिए तैयार करते हैं। उनके इस कदम से मुसलमान और अधिक भड्क उठते हैं और फसाद बढने लगते हैं।

भीष्म जी के 'मैयादास की माडी' उपन्यास के ब्राह्मण से तो सभी डरते हैं। वह बुरी नजर का है, उसे पहले से ही घटनाओं के आभास मिलते हैं आदि कई तरह के विचार लोग उसके बारे में सोचते हैं। उसे सभी बुरा–भला कहते हैं। वह प्रश्न लगाता है, मंत्र फूंगता है, जादू–टोना करता है, आदि बातें उसके बारे में फैली होने के कारण लोग डरते हैं– 'सपर उसकी पीठ–पीछे उसे बुरा–भला कहने के बावजूद, उसके मुँह पर किसी ने कुछ नहीं कहा। क्या मालूम हुआ ब्राह्मण 'सराप' दे ही डाले।''

अँग्रजों के आगमन के पश्चात् भारत में वर्णभेद की समस्या भी निर्माण हो गयी। अंग्रेज गौरवर्गीय और भारतीय कृष्णवर्णी होने के कारण वे भारतीयों को तुच्छता से देखते हैं और इसी कारण भातीय उन पर क्रोधित होते हैं। इसका चित्रण भी भीष्म साहनी ने किया है। भीष्मजी के 'कुंतो' उपन्यास में इस वर्णभेद का वर्णन आया है। प्रोफेस्साब और सहदेव एक चीची रस्तराँ में चाय पीने जाते हैं जहाँ सारे गोरे फौजी बियर पी रहे हैं और वे दोनों चाय माँगते हैं– ''कोइर वेटर हमारे पास नहीं आया। रेस्तराँ का चीची मालिक हमारे पास से गुजरा तो सहदेव ने उसे पकड लिया। हमें चाय चाहिए, दो चाय!'' चीनी मालिक ने सहदेव का हाथ झटकते हुए गुस्से से कहा, 'नो टी! नो टी!' और वहाँ से चला गया। इस पर तेरा भाई तो भड्क उठा। उठकर खडा हो गया, 'आई वांट टी' चिल्लाने लगा। मैं बडी मुश्किल से उसे बाजाए खींच ले गया।'' अपने देश में चाल न मिलने का गम सहदेव को ज्यादा है। सहदेव को इसी प्रकार का एक और अनुभव भी आता है जिसे उसने अपनी पत्नी को खत में लिखकर बताया है। और अपमान की भावना उसके मन में नहीं जाती है। कानपुर के रेल स्थान पर सहदेव पूछताछ के काउंटर पर कुछ पुछताछ कर रहा है तो अचानक एक गोरा साहब आकर उसे धकेल देता है और स्वयं वहाँ खडा हो जाता है और सहदेव आपत्ति करता है तो वह उसे धक्का मारकर गिरा देता है; गाली भी देता है। अर्थात् वर्णभेद के कारण, केवल गोरा है इसलिए उसे यह हक है कि वह कुछ भी करें।

इस प्रकार की नीति अंग्रेजो की रही, इसमें दु:ख की कोई वात नहीं। दु:ख तो केवल इस बात का है कि रेल बाबू भी सहदेव को ही दोष देता है।

इस प्रकार हम यह पाते है कि भीष्म साहनी ने अपनी कथा–साहित्य में समाज में प्रचलित वर्ण–व्यवस्था को चित्रित किया है। आज भी उच्चवर्णीय लोग निम्नवर्गीय लोगो पर किस प्रकार रोब जमाते हैं इसका चित्रण भी भीष्म जी ने किया है। भीष्म जी की कहानियों में भी इसका चित्रण मिलता है। ये कहानियाँ हैं– भाग्यरेखा, एष: धर्म: सनातन: आदि। 'भाग्यरेखा' कहानी में तीन ऊँगलियाँ कटे आदमी को ज्योतिषी जब बताता है कि धन मिलेता तो वह उसके गाल पर एक थप्पड दे देता है। और उससे कहता है – ''कब धन मिलेगा? तीन साल से भाई के टुकडों पर पडा हूँ । कहता है, धन मिलेगा।'' कभी–कभी उच्चवर्णीय ब्राह्मण की दशा दयनीय हो जाती है। 'एष: धर्म: सनातन:' कहानी में महंत रामदास जब अपने मंदिर में अछूत चढ जाते है तो दु:खी होकर गाँव छोड चला जाता है और काशी पहुँच जाता है। लेकिन वहाँ जाकर उसे बहुत बुरे अनुभव आते हैं। वहाँ जाकर उसका सामान चोरी हो जाता है, तीन दिन में भीखारी के समान उसकी दशा हो जाती है। उसकी स्थिति इतनी बिगड्ती है कि अंत में एक निम्नवर्णीय भिखमंगे से खील का लड्डु खाता है। अर्थात् दयनीय दशा के कारण उसे इस बात का ख्याल भी नहीं रहता कि वह निम्नवर्गीय है।

इस प्रकार भीष्म साहनी ने अधिकतर उच्चवर्णीय ब्राह्मणों का, उनके द्वारा निम्नवर्णीय लोगों पर किये जाने वाले अन्याय का चित्रण किया है। कभी–कभी उन्हें उल्टा अनुभव भी प्राप्त हुआ है जिससे समाज में वर्णव्यवस्था का उच्चाटन क्यों और कैसे हो रहा है, इसका पता चलता है।

४.७.६ : न्याय अथवा कानून

न्याय अथवा कानून से समाज सुरक्षित रहता है। अपराधी को दण्ड दिये जाने का भय होता है। इसलिए अपराधी अपराध करने से ड्रता है परन्तु पुलिस के हाथ में अधिकार आ जाने के कारण उन अधिकारों का वे दुरूपयोग भी करते हैं जिससे भ्रष्टाचार फैलाता है। भीष्म साहनी ने इस कानून के अनेकानेक रंगो का वर्णन किया है, इसके कई रूप दिखाये है। भीष्मजी के 'तमस' उपन्यास में रिचर्ड जो एक कमिश्नर है, हमेशा हिन्दू और मुसलमानों के बीच होने वाले संघर्ष को देखकर भी अनदेखा करता है क्योंकि वह शासन करना चाहता है और शासन करने के लिए उन दोनों में संघर्ष होना जरूरी है।

भीष्म जी के 'बसंती' उपन्यास में पुलिस को बिना पूछे चीजें ले जाने वाले चौधरी पर पुलिस बिगड्ती है।। सरकार के कब्जे में एक बार जमीन चली जाए तो उस पर होने वाली चीजें चाहे अपनी भी क्यों न हों, उसे उठाने का अधिकार किसी को नहीं रहता। गाँवो में पंचायत लोगों के झगडों को सुलझाने के लिए होती है, यह देखकर उससे फायदा उठाना चाहते हुए पंचायत उससे सहानुभूति दिखाती है। उससे वे दो किलो बूँदी के लड्डू हड्प लेते हैं।

भीष्मजी की कहानियों में भी कानून का वर्णन दिखाई देता है। ये कहानियाँ हैं– वाइ्चू, लीला नंदलाल की, जोत, मुर्गी की कीमत, घर–बेघर, मुर्ग–मुसल्लम, पाली आदि। 'वाइ्चू' कहाई का वाइ्चू बौद्धकर्म का अध्ययन करने वाला एक चीनी बुद्ध है परन्तु उसके हमेशा चीन और भारत आवागमन के कारण चीन और भारतीय सुरक्षा अधिकारियों दो उस पर शक होने लगता है क्योंकि चीन और भारत में हंमेशा संघर्ष चलता रहता है उस निरीह इन्सान को पुलिस बहुत तंग करती है– ''भारत में पुलिस–अधिकारियों के सामने होने का उसका पहला अनुभव था। उसे जामिनी के लिए पूछा गया, तो उसने प्रोफेसर तानशान का नाम लिया, फिर गुरूदेव का, पर दोनों मर चुके थे। सुपरिटेंडेंट ने सभी नाम और पते नोट कर लिये। उसके कपडो की तीन बार तलाशी ली गयी। उसकी डायरी को रख लिया गया, जिसमें उसने अनेक उदाहरण और टिप्पणियाँ लिख रखे थे। और सुपरिटेंडेंट ने उसके नाम के आगे टिप्पणी लिख दी कि इस आदमी नजर रखने की जरूरत है।'' अर्थात् बिना वजह ही उसको तंग किया।

लगभग इसी प्रकार का व्यवहार 'लीला नंदलाल की' कहानी के नायक का स्कूटर खो जाता है, तब पुलिस उसके साथ करती है। वह रिपोर्ट करता है और बार–बार पूछने जाता है तो पुलिस घुड्का देती है। बाद में नायक के पिता की चिट्ठियों की वजह से ऊपर से डॉट पड्ने के कारण नायक के साथ बहुत अच्छा बर्ताव करती है। जब स्कूटर मिल जाता है। परन्तु जैसे ही चोर पर मुकदमा किया जाता है, सालो उसका फैसला नहीं होता। चोर कार में मुकदमे की पैरवी करने आता है और स्कूटर खराब हो जाने के कारण नायक को उसे पैदल घसीटते ले जाना पड्ता है। अंत तक सुनवाई नहीं हो पाती।

'मुर्गी की कीमत' कहानी में एक मुर्गी के लिए एक बूढी औरत को रास्ते में ही चुंगाबाबू रोक देता है और उससे पैसे ऐंठकर ही उसे जाने देता है। चुंगी के ड्र से नायक अपनी मुर्गी को मार देता है। 'घर–बेघर' कहानी की बच्चे चुराने वाली औरत तो एक पुलिस सरकारी क्वार्टर दे देता है परन्तु वह

उसी में डेरा जमाने लगता है। उसकी क्वार्टर देख एक ठेलेवाला भी उसके साथ रहना चाहता है परन्तु वे दोनों भाग जाते है और पुलिस अफसर राहत की साँस लेता है कि कोठरी खाली तो हो गयी।

भीष्मजी की 'मुर्ग–मुसल्लम' कहानी भी पुलिस तथा जेलर के अन्याय की करूण कहानी है। जेल के राजनीति के कैदी अच्छे खाने के लिए हड्ताल कर देते हैं। परन्तु अच्छे खाने के लिए अच्छा बावर्ची चाहिए। वे शहर के नामी होटल के बावर्ची को बिना वजह पकड्कर जेल में डाल देते हैं। उसका पूरा जीवन इससे बर्बाद हो जाता है। उसकी पत्नी और बच्चे सड्कों पर मारे–मारे फिरने लगते हैं और अन्त में कहीं खो जाते है।

इसी प्रकार हम यह देखते है कि भीष्म साहनी जी ने न्याय, कानून तथा पुलिस द्वारा होने वाले अन्याय तथा अत्याचार का चित्रण किया है। उनकी भ्रष्ट व्यवस्था का पर्दाफाश किया है।

४.७.७ : प्रथाएँ परम्परा

भारतीय संस्कृति बहुत प्राचीन काल से चली आयी है। सदियों से भारतीय समाज को धर्म का, ईश्वर का कोप का भय रहा है और इसी वजह से भारतीय लोगों के मन में नीति के बंधन बहुत कडे दिखाई देते हैं। समाज में रहने के लिए समाज के आचार–व्यवहार के नियमों का, रूढियों का, सभी का पालन इन्सान को करना ही पड्ता है। हर वर्ग, जाति, समाज में ये नियम कभी–कभी अलग भी हो सकता है। भीष्म साहनी जी ने तत्कालीन रूढि–परम्पराओं, लोकरीतियों और अंधविश्वासों का यथार्थ चित्रण अपने कथा–साहित्य में किया है।

भीष्म साहनी जी के प्रथम उपन्यास 'झरोखे' में पूरे आर्यसमाजी परिवार के माहौल का वर्णन है। जिसमें नैतिक नियमों को, उसके बंधनों को पालना बेहद आवश्यक माना गया है। आरम्भ से ही धार्मिक विचारों वाली माता हमेशा 'महाराज दया करे' की रट लगाती है और भगवान से बच्चों का कुशल माँगती है और आर्यसमाजी संस्कारों वाले पिता निरन्तर 'शुकर शुकर महाराज मेरी दरगाह' की रट लगाते हैं और भगवान से दया चाहते है।

भीष्मजी के 'तमस उपन्यास में नत्थू जब सुअर मारकर लौटता है तो उसका पैर किसी चीज से टोता है यह देखकर वह घबरा जाता है– ''कुछ त्रिगलियों में लिपटे कंकड और गुँथे आटे का पुतला और उसमें खोंसी हुई लकडी की खपचियाँ थी। कोई बदनसीब औरत अपना क्लेश किसी दूसरे के घर

पर डालने के लिए 'टोना' कर गयी थी। नत्थू ने इसे अपने लिये अपशगुन समझा।'' एक तो वह बहुत बुरा कार करके आया था और ऊपर से इस प्रकार टोने पर पैर पड्ना उसे बहुत बुरा मालूम हुआ।

भीष्म जी के 'तमस' उपन्यास में इस प्रथा का जिक्र किया गया है कि सिख लोग जब युद्ध करने जाते है तो अपने केश खोल देते हैं और उनकी पत्नियाँ जब आत्मत्सर्ग करना चाहती है (युद्ध के समय) तो वे अपनी चुनरियाँ गले में डाल देती हैं।

'बसंती' उपन्यास में भीष्म साहनी जी ने 'बलि–प्रथा' का चित्रण किया है। जब दीनू और रूक्मी बलि चढाने जाते है तो वहाँ के पंड्तिों का स्वार्थ देख दीनू दु:खी हो जाता है।

भीष्म जी का 'मैय्यादास की माडी' उपन्यास ऐतिहासिक है और इसमें ढेर सारी रूढि–परम्पराओं प्रथाओं का चित्रण किया गया है। पुरोहित को हर घर से रोटी मिल जाती है जिसे हंदा उगाहना कहा जाता है इसी से उनकी गुजर–बसर हो जाती है। पुरोहित के बारे में कई तरह की अंधश्रद्धाएँ भी हैं, जैसे–पुरोहित ब्राह्मण के चेहरे की ओर ध्यान से नहीं देखना चाहिए, क्योंकि उनके चेहरों पर सारा वक्त शगुन–अपशगुन का साया डोलने लगा है, बहुत उत्साह दिखाओ तो ऊपर बैठे भाग्य–देवता नाराज हो जाते हैं, आदि। इसी उपन्यास में रूक्मी और पगले कल्ले का तथा उसकी बहन पुष्पा और मँझले का ब्हाय हो जाता है तो मुँह दिखाई की रस्म का उल्लेख आया है। इससे पहले बारात जब टीले पर होती है तो दुंबा मारने की रीत की जाती है। शादी के समय जब मिलनी की रस्म अदा होती है तो बेटीवालों का पानी उतारने के लिह उसे लम्बा खींचा जाता है। जब मलिक मंसाराम की बेटी की शादी दीवान धनपतराय के बेटे के साथ होती है तो–'समिलनी के दौरान उस समय तनिक खिंचाव पैदा हो गया जब दीवान कुंदनलाल तीन–तीन पीढी दूर के सम्बधियों को भी मिलनी–भेंट दिलवाने पर हक नहीं बनता था,वहाँ पर भी मिलनी का आग्रह करने लगा।'' इस रस्म के कारण तनाव की शुरूआत होती है।

भीष्म साहनी के 'कुंतो' उपन्यास में शादी से पहले लड्की को साथ घुमाने की परम्परा न होते हुए भी जयदेव कुंतो को घुमाने ले जाता है तो कोहराम मच जाता है। और जयदेव को उसके पिता ताड्ना देते हैं। क्योंकि ऋषिराम आकर उन्हें खबर दे जाता है।

इसी उपन्यास में धनराज की पत्नी थुलथुल जब जल मरती है तो केवल रस्म के रूप में शोकसभा का आयोजन किया जाता है। न धनराज को ही उसके मरने का गम है, न प्रोफेस्साब को। बस अकेली कुंतो दु:खी है।

भीष्म साहनी की जिन कहानियों में रूढि, परम्परा एवं प्रथाओं का चित्रण है, वे कहानियाँ है– पहला पाठ, पाप–पुण्य, मालिक का बंदा, शोभायात्रा, जोत, भाग्यरेखा, ढोलक, डायन, आदि। 'पहला पाठ' कहानी के आचार्य बच्चों को अस्पृश्य लोगो के साथ अच्छा व्यवहार करने की सीख तो देते है परन्तु अस्पृश्य के समान दिखाई देने वाले लड्के को जब उनका विद्यार्थी छू लेता है तो उसे तमाचा मारकर बताते है कि वह मुसलमान लड्का है। अर्थात् वे मानते है कि मुसलमान उनसे भी गये बीते हैं। यही संस्कार वे विद्यार्थियों पर करते हैं।

'पाप–पुण्य' कहानी के पिता अपने बच्चों आर्यसमाजी विचार रटवाते हैं। लेकिन बच्चो की उम्र तक नहीं देखते। वे उन्हें बताते है कि चड्ढी न पहनने से नरक मिलता है। सादापन जीवन है, दुराचार मृत्यु है आदि।

भीष्म जी की 'शोभायात्रा' कहानी में बलि–प्रथा का चित्रण किया गया है जिसे राजा रोक देता है। कुपथगामियों को रोकने के लिए मानो उन सभी की बलि देकर बलि के बकरे को बचाया जाता है। 'जोत' कहानी का जानकू जब उस पर विपत्ति आती है तो भगवान का प्रकोप मानता है। और उसके सामने मन्नत माँगता है। 'भाग्यरेखा' कहानी में एक ऐसा ज्योतिषी भविष्य बताता है जिसके हाथ में भाग्य–रेखा होते हुए भी उसके भाग्य में दो–पैसों को मोहताज होना ही लिखा है।

'ढोलक' कहानी में शादी–ब्याह के मौके पर की जाने वाली कुछ निरर्थक रस्मों का वर्णन है जिसे नायक भुगत रहा है।'डायन' कहानी में जब माँ को लगता है कि बहू डायन है तो वह उसे डायन करार देकर उस पर कई तरह के इलाज करवाती है।

इस प्रकार भीष्म साहनी जी के कथा–साहित्य में चित्रित इन प्रथाओं, रीतियों, परम्पराओं से तत्कालीन समाज का एक चित्र हमारे सामने प्रस्तुत हो जाता है।

४.७.८ : सामाजिक समस्यायें

साहित्यकार समाज का एक महत्वपूर्ण अंग होने के कारण समाज में घटित होने वाली घटनाओं में वह अपने आपको अलग नहीं कर सकता। जो घटनायें समाज में देखता है, जिन परिस्थितियों को वह भोगता है उन्हीं का यथार्थ अंकन वह अपने साहित्य में करता है। संवेदनशील साहित्यकार को समाज में फैली समस्यायें ही साहित्य लिखने की प्रेरणा देती है। साहित्यकार का साहित्य लिखने का उद्देश्य यह होता है कि समस्याओं का चित्रण कर पाठकों को इन समस्याओं के प्रति सचेत करना। कभी–कभी

साहित्यकार समस्याओं को सुलझाने का भी कार्य करता है। कभी सिर्फ उन समस्याओं का संकेत मात्र करता है तो कभी अपनी तीखी व्यंग्यपूर्ण भाषा में पाठकों को जागृत करने का काम करता है। मानव–जीवन की ये समस्यायें मानव के जीवन को सिर्फ त्रस्त ही नहीं करती तो उसे निराशा की गर्क में धकेल भी देती है। साहित्यकार पाठकों को जागृत करते हुए उन्हें निराशा की गर्क में जाने से रोक भी देता है। अपने प्रतिभा के बलबूते पर वह सामान्य से सामान्य लोगों की समस्याओं को भी समझता है। आधुनिक काल में तो भ्रष्टाचार, चापलूसी, पुलिस का भ्रष्ट व्यवहार जैसी कई समस्यायें निर्माण हो गयी है जिनका रूप समय के साथ–साथ बदलता रहता है। इन समस्याओं को कम करने के लिए साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से कोशिशें करता है। भीष्म साहनी जी भी इस बात के लिए अपवाद नहीं है। भीष्म साहनीने अपने कथा–साहित्य में समाज–जीवन में होने वाली कई सामाजिक समस्याओं का यथार्थ अंकन किया है। जिन समस्याओं को उन्होंने चित्रित किया है, उन्हें निम्नलिखित रूप से विभाजित किया जा सकता है–

४.७.९ : पारिवारिक संघर्ष एवं विघटन

आधुनिक काल में जैसे–जैसे औद्योगीकरण बढता गया, वैसे ही लोग देहातोंसे शहरों की ओर पढने लगे। देहातों में जो सम्मिलित परिवार थे, उनका विघटन होने लगा। इसी वजह से शहरों में विघटित परिवारों की संख्या बढने लगी और उससे कई तरह की समस्यायें निर्माण हो गयी। भीष्म साहनी ने अपने साहित्य में इस समस्या को बखूबी हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

भीष्म साहनी के 'झरोखे' उपन्यास में दिखाया गया है कि बच्चों को माता–पिता पढा–लिखा कर बडा करते है लेकिन जैसे–जैसे उनकी समझ बढती है वैसे ही घर का बडा बेटा अपना पुराना धंधा व्यापार छोडकर नौकरी के लिए बाहर निकल जाना चाहता है। पिता जब उससे बहस करने लगते है तो माँ कहती है– ''देखो जी, जो बच्चे की ब्रारब्ध में लिखा है, इसे मिल जायेगा। तुम इसे क्यों रोकते हो? पंछियों के बच्चों के जब पंख निकल आते है तो क्या वे घोसला में बचे रहते है? वे 'उडारी' मारकर निकल जाते है।''[३०] पारिवारिक संघर्ष में यहाँ माँ की समझौतावादी वृत्ति दिखाई देती है।

'कड्यिाँ' उपन्यास पारिवारिक विघटन एवं संघर्ष का उदाहरण है। इस उपन्यास का नायक महेंद्र अपनी पत्नी प्रेमिला को छोडकर सुषमा के चक्कर में उलझता है तो प्रमिला और उसके अपने वैवाहिक जीवन में दरार पड जाती है। यह दरार इतनी तीखी बन जाती है कि एक दिन वह अपनी पत्नी

को थप्पड मारता है, और उससे कहता है– ''हमारी शादी नाकामयाब साबित हुई मैं इसे और घसीटना नहीं चाहता।''[३१] बाद में तो स्थिति यह हो जाती है कि प्रमिला और महेंद्र अलग हो जाते हैं। प्रमिला पागल हो जाती है। सुषमा की वजह से उनका पूरा परिवार टूट जाता है।

'तमस' में भी यह समस्या चित्रित हुई है किन्तु इसकी वजह दंगो का छिड जाना है। दंगो की बजह से हरनामसिंह का पूरा परिवार बिखर जाता है। उनके बेटे इकबाल सिंह को मुसलमान बनाया जाता है और उनकी बेटी जसबीर कुँए में कूद जाती है। एक पंडित की बेटी प्रकाशो को अल्लाहरक्खा जबरदस्ती अपने घर में बिठा लेता है और उसके साथ शादी कर लेता है। कुछ दिनों के इन दंगो की बजह से कई परिवार तहस–नहस हो जाते हैं। जहाँ विभाजन के परिणाम स्वरूप परिवार विघटन दिखाई देता है।

भीष्मजी की कुछ कहानियों में पारिवाररिक विघटन की समस्या का चित्रण हुआ है। परिवारों के विघटन के कारण चाहे अलग–अलग क्यों न हो। 'डोरे' कहानी परिवार विघटन के एक अलग रूप को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करती है। पति–पत्नी और प्रेयसी के त्रिकोण को इस कहानी में दर्शाया गया है। गिरीश और उसकी पत्नी के संबंधों की अर्चना की वजह से बिखराव आ जाता है इसी बजह से उनका परिवार एकदम टूट–सा जाता है। पारिवारिक जीवन शेष ही नहीं रहता है। इस परिवार विघटन का परिणाम बच्चों को भी भोगना पडता है।

'पाली' कहानी में बँटवारे के समय अलग हुए एक परिवार का चित्रण है। देश–विभाजन के कारण हिन्दु परिवार का एक लडका 'पाली' पाकिस्तान में रह जाता है। उनका पूरा परिवार ही मानो बिखर जाता है। जब पाँच साल बाद पाली मिल जाता है तो पाली के पिता को जैनब के सामने हाथ फैलाकर कहना पडता है– ''बहन मैं तुमसे बच्चे की नहीं, अपनी घरवाली की जान की भीख माँगने आया हूँ। वह अपने दोनों बच्चों को खो चुकी है। पाली के बिना वह पागल हुई जा रही है। वह दिन रात तडपती रहती है। उस पर तरस खाओ।'' क्योंकि इन पाँच सालों में जैनब ने उसे पाला है और उसे मुसलमान भी बनाया गया है। पाली का पूरा परिवार बिखर चुका है। इस परिवार टूटन का परिणाम अकेले पाली को भुगतना पडता है।

''चाचा मंगलसैन' कहानी का भतीजा अपने चाचा को घर ले आता है परन्तु उसका बक्त–बेबक्त बैठक में घुसना, बाहर घूमना, सडक–सडक पर चाय पीना उसके भतीजे की पत्नी को अच्छा नहीं लता है। उनका बाहर घूमना बंद कर देने पर चाचा मंगलसैन वहाँ से भाग जाता है। उसका भतीजा

उसे फिर से ले आता है तो चाचा कहता है– ''मैं उस मरन–कोठरी में नहीं जाऊँगा वीर जी, आप बहुत अच्छे हो, भगवान तुम्हें सलामत रखें, पर मैं नहीं जाऊँगा। तुम मुझे बख्श दो।''[३२] इतना डर उसके मन है। अर्थात् आजकल की बहुओं को बूढे आदमी का घर में होना खलना है, इस बात का चित्रण यहाँ किया गया है।

'चेहरे' कहानी के शंभुनाथ को जब उसकी पत्नी शोभा दबा–कुचला, डरपोक और मरियल इन्सान समझने लगती है और कई ऐसे सामान्य बातों की वजह से उन दोनों में झगडा होने लगता है तो शोभा – ''मैं जा रही हूँ। बच्चों को भी ले जा रही हूँ। अब तुम आजाद हो, जो मन में आये करो।'' कहकर वह घर छोड्कर चली जाती है। परन्तु फिर भी उसके स्वभाव का लिजलिजापन कम नहीं होता। वह अपने पिता द्वारा पुकारे जाने पर भागकर चला जाता है। इसी वजह से उसकी पत्नी उस पर गुस्सा करती है।

अत: हम कह सकते है कि पारिवारिक संघर्ष का परिणाम कभी–कभी परिवार विघटन में हो जाता है, तो कभी उससे बुजुर्गो की उपेक्षा हमारे सम्मुख आ जाती है। कभी यह संघर्ष मनुष्य को अकेला बना देता है तो कभी इस संघर्ष का परिणाम बच्चों को भुगतना पड्ता है। इन्हीं बातों को समस्या के रूप में भीष्म साहनी जी ने अपनी अलग शैली में प्रस्तुत किया है।

४.७.१० : विवाह संबंधी समस्या

भारतीय संस्कृति में विवाह एक श्रेष्ठ संस्कार माना जाता है। कभी–कभी वह भी एक समस्या बन जाती है। आम तौर पर यह तब होता है जब पति–पत्नी दोनों में कोई एकता नहीं हो। अनमेल विवाह होने पर आम तौर पर विवाह असफल हो जाता है। भीष्म जी ने अपने उपन्यास 'कुंतो' में इस समस्या को दिखाया है। उपन्यास के नायक जयदेव की मौसेरी बहन की शादी एक सनकी आदमी गिरीश से तय हो जाती है। उन दोनों की कभी पटती नहीं है और सुषमा गिरीश को छोड्कर शांतिनिकेतन चली जाती है।

भीष्म जी की 'विकल्प' कहानी विवाह के एक और पहलू को हमारी सम्मुख प्रस्तुत करती है और वह है– प्रेम विवाह। प्रेम विवाह तब भी असफल हो सकता है जब शक्की मिजाज का पति हो। वह अपनी पत्नी की किसी भी बात का विश्वास नहीं करता। विवाह के पहले जो अपनी प्रेमिका पर न्योछावर हो जाया करता है वही विवाह के बाद बदल जाता है। जब उसे नई प्रेमिका मिल जाती है तो

वह उसे कहने लगता है– ''तुम्हारे साथ मेरा विवाह बहुत बडी भूल थी, हम एक–दूसरे के लिए नहीं बने हैं, यही आदमी मुन्नी को 'देवी' कहा करता था, और दिन में दो–दो चिट्ठियाँ लिखा करता था और मुन्नी से कहा करता था कि तुम्हारे बिना मेरे जीवन का कोई अर्थ ही नहीं रह गया है।''[३३] औरत को अपने चंगुल में फँसाने के लिए पुरूष बहुत कुछ करता है। परन्तु जब वह अपनी बन जाती है तो उसकी ओर उसका ध्यान ही नहीं जाता, शादी के बाद वह अपना ध्यान उस पर से हटा लेता है जिससे वह क्षुब्द हो जाती है और झगडे बढने लगते हैं। प्रेमविवाह की असफलता का यह कारण भीष्मजी ने चित्रित किया है।

'वापसी–ब–वापसी' कहानी में शिवनाथ उर्फ शिब्बु विदेश जाकर नीली आँखोवाली एक युवती के प्यार में फँस जाता है। जब उन दोनों की शादी हो जाती है तब वह उसे भारतीय बनाने की कोशिश करता है। इसी वहज से उन दोनों में झगडा हो जाता है। यहाँ अंतर्जातीय विवाह की समस्या को चित्रित किया गया है।

इस प्रकार हम यह कह सकते है कि विवाह के असफल होने के कारणों को बताकर साहनी जी ने विवाह समस्या को प्रस्तुत किया है। चाहे अनमेल विवाह की समस्या हो, चाहे प्रेम विवाह के असफलता की हो, चाहे अंतर्जातीय विवाह की समस्या हो सभी को भीष्म साहनी के इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि उससे हमारे मन में उन पात्रों के प्रति सहानुभूति उत्पन्न होती है।

४.७.११ : नौंकरों संबंधी समस्या

आधुनिक काल में नौकरों की समस्या अत्याधिक तीव्रतम बनती जा रही है। नौकरों पर मालिकों के अन्याय–अत्याचार बढते हैं। पहले नौकरों को परिवार का एक सदस्य माना जाता है। लेकिन वर्तमान युग में नौकरों को वही स्थान दिया जाता है। आम तौर पर जब भी कभी घर में चोरी हो जाती है, पहला शक नौकरों पर ही किया जाता है। सभी नौकर चोर नहीं होते हैं, कुछ नौकर काफी ईमानदार होते हैं फिर भी उन पर शक किया जाता है। एक मनुष्य की हैसियत से उनके साथ व्यवहार नहीं किया जाता है।

भीष्म साहनी ने नौकरों की कई तरह की समस्याओं को अपने कथा–साहित्य में चित्रित किया है। 'झरोखे' उपन्यास में पूरी तरह से नौकर की समस्या को ही चित्रित किया है। इस परिवार में तुलसी के बिना कोई काम नहीं होता फिर भी उसे गौण स्थान दिया जाता है। घर में पिताजी के सारे काम

तुलसी ही करता है। फिर भी –''यह खाता बहुत है, आठ–आठ रोटियाँ खा जाता है। ये लोग गधे होते हैं। पिताजी कहते हैं। पिताजी को तुलसी का रफा–हाजत के लिए 'ऊपर' जाना बहुत बुरा लगता है। अंत तक वह सि स्थिति को स्वीकार नहीं कर पाए कि तुलसी उसी सौचालय का इस्तेमाल करे, जहाँ घर के सभी लोग जाते हैं।''[३४] तुलसी जब सुतना है कि पिताजी की कलाई किसी सब्जी वाले ने मरोड दी तो वह भागा–भागा जाता है और उससे लडाई करता है। लेकिन जैसे ही एक दिन माताजी उसके काम न करने पर खफा हो जाती है और उससे भला–बुरा कहती है तो वह स्वयं अपना बाजु काट खाता है। माताजी कहती है –''अब पहले वाली बात तो नहीं है कम–से–कम। पहले तो दूसरों को काट खाता था, हर राह जाने से लडाई मोल लेता फिरता था। अब तो अपने को ही काटता है।'' जब तुलसी यह घर छोड्कर एक औषधालय में काम करने लगता है तो वहाँ औषधालय का काम, वैधजी के घर का काम, सीढिर्या धोना, सब्जी लाना और अन्य भी कई काम करने पड्ते है। वह कई बार कइर तरह के काम करने के लिए निकल पड्ता है और फिर वापस उसी घर में आ जाता है।

भीष्म साहनी ने नौकरों की समस्याओं को अपनी कहानियों में भी चित्रित किया है। भीष्मजी के 'अनूठे साक्षात' कहानी इसी समस्या को दर्शाती है। कहानी का पहलेा हिस्सा 'धर्मो' है। इसमें नौकरों की सुविधा, असुविधाओं को चित्रित किया गया है। कहानी का 'मैं' कहता है– ''नौकर–मालिक के बीच न कभी अपनापन हुआ है, न हो सकता है। यह तो निपट मजबूरी का रिश्ता है। फिर एक दिन तडाक से यह रिश्ता टूटता है और वह अपने हिसाब के पैसे लेकर बक–झक करता हुआ बाहर चला जाता है, और हम पसीना पोंछते हुए चैन की साँस लेते हैं।''[३५]

'छिपे चित्र' कहानी के नौकर हरिसिंह की समस्या यह है कि वह एक ऐसे घर में काम करना चाहता है कि वह घर रैानक वाला हो वहाँ दस–पंद्रह आदमी रहते हों, कोई आए कोई आए। पाँच–छ: बच्चे हों, बडा–सा बंगला हो, बाहर छोटी–सी फुलझाडी हो और बनगले का रंग पीला और दरवाजे हरे रंग के हों। आठ–दस कमरे हों और खिडकियों पर लाल–लाल पर्दे हों। लेकिन उसकी यह इन्छा कहीं भी पूरी नहीं हो पाती और वह हमेशा भी भटकता रहता है।

'साग–मीट' कहानी का नौकर जग्गा 'साग–मीट' बहुत अच्छा बनाता था। लेकिन उसकी पत्नी और मालिक के भतीजे में चक्कर चला। इस बात को जग्गा जब जानता है तब दूसरे ही दिन वह खुदखुशी करता है। यह बात मालूम होते हुह भी दबा दी जाती है।

आजकल लोग नौकर रखना तो चाहते है परन्तु उनके बच्चों से वे परेशान होते हैं। पास–पडोस के पाँच–सात घरों में काम करने वाली 'पिकनिक' कहानी की गौरी भी इसी वजह से परेशान है। वह अपने बच्चों को रास्ते पर खेलने के लिए छोड तो देती है लेकिन हर एक मकान–मालिक उसे फटकारता है कि उनके घर के सामने बच्चों को न छोडें। बच्चे अन्दर न आ जाएं इसलिए फाटक पर कुत्ते रख देते हैं।

'राधा–अनुराधा' कहानी की नौकरानी राधा के पिता कोबी है। वे अपनी बेटी की शादी नहीं करना चाहते क्योंकि अगर उसकी शादी कर दी जाय तो पाँच–छह घरों में चौका–बर्तन का काम कर वह जो पैसे लाती है वह आमदनी बंद हो जायेगी। एक बार उन्होंने पैसों के लालच में उसकी शादी एक बूढे के साथ तय की थी।

'संभल के बाबू' के कहानी में नौकरों में परिवर्तन कैसे होते जा रहे हैं, इस बात का चित्रण किया गया है। पहले भी नौकरों पर मालिकों द्वारा रोब जमाया जाता था और अब भी रोब जमाया जाता है। पीढियों में अन्तर आए परन्तु रोब जमाने की प्रवृत्ति वही रह जाती है। लेकिन आजकल नौकरों ने भी युनियन बना ली है और पाँच छह दिन के बाद अगर किसी वजह से उसे निकाला जाए तो वह पूरे महीने की तनखा एक महीने की तनखा पेशगी ले लेता है।

नौकरों की ओर उच्च वगर के लोग किस दृष्टि से देखते हैं इसका अत्यन्त मर्मस्पर्शी वर्णन 'शिष्टाचार' कहानी में हुआ है। इस कहानी की श्रीमती जी नौकरों के बारे में सोचती हैं– ''सब मक्कार, गलीच और लंपट होते हैं। किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। सभी झूठ बोलते हैं, सभी पैसे काटते है और सभी हर वक्त नौकरी की तलाश में रहते हैं, जो मिल जाए तो उसी वक्त घर से बीमारी की चिट्ठी मंगवा लेते हैं।'' श्रीमती जी के स्वभाव के कारण नौकर बार–बार नौकरी छोड चले जाते हैं।

तात्पर्य अपनी गरीबी के कारण मजबूर बनकर आदमी को दूसरो के घरों में नौकर का काम करना पडता है लेकिन मालिक लोग अपनी मजबूरी का पूरा फायदा उठाने की पूरी कोशिश करते हैं। उनके श्रम का शोषण तो होता ही है साथ ही अहं का शोषण भी होता है। कभी–कभी घर के सारे कामों का बोझ ढोने के बाबजूद भी उसे सम्मान नहीं दिया जाता है। उसके साथ मानवता का व्यवहार नहीं किया जाता है। इस तरह भीष्म जी ने अपने कथा–साहित्य में मालिकों की अमानवीयता और नौकरों की दयनीयता का चित्रण किया है।

४.७.१२ : वेश्या से भ्रष्ट समाज

नारी का यह रूप समाज में हेय माना जाता है। इसी रूप में नारी को निम्न मानकर उसकी भर्त्सना की जाती है। प्राचीन काल में वेश्या रूप में भी नारी का सम्मान होता था, क्योंकि वह राजा को ना गाकर खुश रखती थी। परन्तु आधुनिक काल में इसका अर्थ बदल चुका है। और यह एक विकृत समस्या बन गई है। वेश्याएँ समाज को भष्ट करती हैं। कुछ स्त्रियाँ मजबूरी में इसका शिकार बनती है, तो कभी वेश्या जीवन उस पर लादा जाता है। आम तौर पर कोई स्वेच्छा से इसे नहीं अपनाते हैं। इसमें बुराई होने के बावजूद भी इसको पूरी तरह से नष्ट नहीं कर पाए हैं। भीष्म जी ने इस विदारक समस्या को अपने कथा–साहित्य में चित्रित किया है।

भीष्म जी ने 'कुंतो' उपन्यास में इसी प्रकार की समस्या को चित्रित करने के लिए हक गली का वर्णन किया है। उपन्यास का नायक जयदेव और उसके प्रोफेसर जब हक तंग गली से गुजरते हैं तो कोई दलाल ने प्रोफेसर साहब को पुकारकर उन्हें बताती है कि नसीबों उनका इंतजार कर रही है। प्रोफेसर जयदेव से कहते हैं कि कल अगर वह इस गली से गुजरेगा तो उसी भी वह यही कहेगी। तभी वहाँ से एक वेश्या गुजरती है। संस्कारवश जयदेव मुँह फेर लेता है लेकिन जब प्रोफेसर साहब उस वेश्या को देखकर कहते हैं – ''बला की खूबसूरत लड्की है। वाह! वाह! कैसे वाँकपन से चलती है। है तो वेश्या पर बडी सुन्दर है।'' इस बात पर जयदेव को अचरज होता है। वह बचपन से यह सुनता आया था कि ऐसी औरतों की तरफ देखना भी पाप है। वेश्या को कितनी घृणा की नजर से देखा जाता है इसका पता हमें इस बात से चलता है।

'अभी तो मैं जवान हूँ' कहानी पूरी तरह से इसी समस्या को दर्शाती है। इस कहानी द्वारा एक ऐसे चकले का वर्णन किया है जहाँ सभी वेश्याएँ रहती हैं और जो आठ आने में हासिल की जा सकती हैं। वे अपने ग्राहकों को पाने के लिए उनके सामने गिडगिडाती हैं और उनसे पैसे हासिल करती हैं। पेट की आग उनसे न जाने क्या–क्या करवाती हैं। वे उन्हें देखकर मुस्कुराती हैं, गंदी बातें करती हैं – ''आओ बाबू, आओ, उसने मुस्कुराकर कहा, फिर आँख का इशारा किया– आओ जी, मीठी–मीठी बाते करेंगे। दूर क्यों खडे हो बाबू, इधर तो आओ, प्यार–मुहब्बत की बाते करेंगें....।''[३६] यहाँ वेश्याओं की मजबूरी का चित्रण हुआ है।

अत: आज की वेश्या सिर्फ अर्थ से सम्बन्ध रखने वाली है जबकि पहले वह कला की देवी होती थी। आज वेश्या पुरूषों को फाँसकर अपना मतलब निकालती है। जिनमें से कुछ स्वेच्छा से इन

राह पर चलती है, तो कुछ विवशता से। भीष्म जी ने उनके जीवन का यथार्थ रूप हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया है।

४.७.१३ : भ्रष्टाचार की समस्या

भ्रष्टाचार आधुनिक काल की एक महत्वपूर्ण समस्या बन गयी है। आजकल किसी भी दफ्तर में, अस्पताल में, तीर्थ क्षेत्रों में, राजनीति में यहाँ तक कि शिक्ष जैसे पवित्र क्षेत्र में भ्रष्टाचार चल रहा है। भीष्म साहनी जी ने इस समस्या पर अपनी कथा–साहित्य के माध्यम से प्रकाश डाला है। इसका विदारक रूप भीष्म जी ने पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है। कभी उन्होंने अत्यन्त यथार्थता के साथ उसका अंकन किया है तो कभी उसका समाधान भी किया है। उनकी कई कहानियाँ और उपन्यासों में इस समस्या के अलग–अलग रूप दिखाई देते हैं।

'पटरियाँ' कहानी का नायक केशोराम एक दलाल है, जो अपने चेक को हासिल करने के लिए क्या कुछ नहीं करता परन्तु न तो उसका काम हो पाता है और न दफ्तर में उसे कोई पूछता है। लेकिन जब एक आना माना दलाल आ जाता है, जो भष्टाचारी है, उसे वह क्लर्क की कुर्सी पर बिठाता है, खाना खाने के लिए कहता है। आज कल भ्रष्ट लोगों को कितना सम्मान लिता है इस बात का पता इससे चलता है। लेकिन ऐसे लोगों की वजह से सामान्य आदमी को अपने छोटे–छोटे काम करवाने के लिए कई दिन रूकना पड्ता है।

'फैसला' कहानी में एक ईमानदार जज को सच्चाई का फैसला करने पर क्या इनाम मिलता है। इसका जिक्र किया गया है। शुक्ला अत्यन्त ईमानदारी के साथ, गहरी तहकीकात करते हुए अपना फैसला सुनाते हैं और बेहद खुश होते हैं कि उसके सही फैसला किया है लेकिन थानेदार डिप्टी कमिश्नर के पास जाता है और हाईकोर्ट तक लड्ता है।'' हाई कोर्ट ने अपने फैसले में शुक्ला पर लापरवाही का दोष लगाया और उसकी न्यायप्रियता पर संदेह भी प्रकट किया।'' इसी वजह से उसने तबादले की माँग की और बाद में कॉलेज में दर्शनशास्त्र पढाने लगे। एक ईमानदार जज की आज के भ्रष्ट समाज में क्या स्थिति होती है, इस बात का चित्रण यहाँ हुआ है।

'लीला नंदलाल की' भी भ्रष्टाचार के एक अलग रूप का चित्रण करने वाली कहानी है। नंदलाल बीमा कम्पनी को साल में पाँच लाख का बिजनेस देने वाला आदमी है। उसी के बलबूते पर कहानी का नायक स्कूटर का नायक स्कूटर का मुआवजा हासिल तो कर लेता है परन्तु बाद में स्कूटर चोर का पता

चलता है। वह गाड्यिों में घूमने वाला आदमी है। केस की पैरवी के लिए तीन साल वह स्कूटर को कोर्ट तक खसीटकर ले जाता है परन्तु वह स्कूटर चोर हमेशा गाडी में आता है और अगली तारीख लेकर चला जाता है। अंत में हालात इतने पस्त हो जाते है कि स्कूटर बंद पड जाता है। लेकिन कोर्ट का फैसला नहीं हो पाता। एक चोर की समाज में कितनी इज्जत होती है और सामान्य आदमी चोर, पुलिस और कोर्ट में चककर में कैसे उलझते हैं सि बात का यथार्थ चित्रण हुआ है। अपनी स्थिति के बारे में नायक स्वयं कहता है– ''मुकदमा बराबर अभी भी चल रहा है। सिी बीच मेरी कनपटियों के बाल सफेद हो चुके हैं। इसी बीच मेरी पत्नी दो बच्चों की माँ बन चुकी है। मुकदमें में तीन मजिस्ट्रेट बदले जा चुके है। दो सरकारें बदली जा चुकी हैं, लेकिन मेरे स्कूटर के चोरों का अभी तक सही तौ पर पता नही चल पाया, तहकीकात बराबर जारी है।''(३७)

आजकल भ्रष्टाचार तथा रिश्वत लेने को कितना सम्मान मिलता है, यह भीष्मजी ने अपनी कहानी 'सिफारिशी चिट्ठी' में चित्रित किया है। जब त्रिलोकनाथ की पत्नी को यह मालूम होता है कि कोई उसके पति की सिफारिश करने जा रहा है और उसके पति की तरक्की होने वाली है तो वह खुश होकर पूछती है कि क्या वह रिश्वत लेगा? जब उसका पति इनकार करता है तो वह कहती है – ''इसमें बुरा क्या है? आजकल सभी रिश्वत लेते हैं। ऊपर की आमदनी का अपना रोब होता है। खुद माँगने नहीं जाना, पर कोई दे दे तो इन्कार न करना।'' वस्तुत: पत्नी का यह कर्तव्य है कि पति के इस अनाचार पर रोक लगाए किन्तु वही जब इस प्रकार बढावा देती है तब ऐसी समस्याओं का बढना भी स्वाभाविक बन जाता है।

विभाजन के पश्चात् जब 'पाली' जैसा हिन्दू बच्चा एक मुसलमान के घर में पलता है तो वे उसके मोह में बँध जाते हैं और वे उस बच्चे को उन हिन्दुओं को वापस करना नहीं चाहते हैं। तब पुलिस कैसा भ्रष्टाचार करती है इस बात का चित्रण प्रस्तुत कहानी में किया है– ''फिर एक अजीब आँख–मिचैाली शुरू हो गई। अब सरकारों के मुआइदे तो सरकारों के नेता करते है पर उन्हें अमली जामा तो छोटे लोग ही पहनाते हैं। ऊपर से हुक्मनामा आता कि अमुक लड्के को बरामद किया जाए, थाने का सिपाही सीधा, नाक से सेंघ चलता हुआ सही मकान पर पहुँच जाता। दरवाजा खटखटाता, ड्राता–धमकाता और रूपल्ली हाथ में दबाए वापिस लौट जाता और सम्मन पर लिख देता कि घर पर ताला चढा है, घर के लोग बाहर गए हैं, कुछ मालूम नहीं कब लौटेंगे।''(३८)

भीष्म जी ने 'मरने से पहले' कहानी भी इसी बात को दर्शाती है। इस कहानी का मैं कचहरी में दौड धूप करता है लेकिन उसका काम नहीं हो पाता। आज नहीं तो कल काम हो जाएगा इस आशा में वह बैठता है। काम के पहले दिन ही तहसीलदार की कचहरी में तीन–तीन कारिदों को रिश्वत देने के बाबजूद उसका काम नहीं हो पाता है। कभी किसी चपरासी की ठुडडी पर हाथ रखकर उसकी मिन्नत–समाजत करनी पडती है तो कभी किसी क्लर्क–कारिंदो को सिगरेट पेश करनी पडती है। अपना काम पूरा करने के लिए आदमी को क्या नहीं करना पडता है? यह इस कहानी द्वारा दिखाया है।

तात्पर्य आजकल समाज में भ्रष्टाचार कितना फैल चुका है और अपनी कार्यपूर्ति के लिए इन्सान के द्वारा इन्सान की पूजा किस प्रकार होती है यह दिखाया है। भ्रष्टाचार के विविध रूप दिखाने में लेखक सफल हो गए हैं। भ्रष्टाचार को ही शिष्टाचार माना जाने लगा है, इसका पर्दाफाश भीष्मजीने किया है।

४.७.१४ : पुलिस का भ्रष्ट व्यवहार

पुलिस देश की, समाज की रक्षा के लिए होती है। आम तौर पर उससे इसी प्रकार की अपेक्षाएँ रखी जाती हैं। उसका कर्तव्य निभाते वक्त उसे सिर्फ हुकमों की तामीली करनी पडती है। लेकिन आधुनिक काल में पुलिस और भ्रष्टाचार ये दोनों शब्द लगभग साथ जुड से गए हैं। पुलिस अपनी सत्ता का गलत इस्तेमाल कर सामान्य जनता को लूटती है। अपना हफ्ता बसूलने की चिंता उसे हमेशा लगी रहती है। यहाँ तक कि कुछ चोरों की पुलिस स्वयं मदद करती है और बाद में उनसे पैस ऐंठती है। भीष्म साहनी ने अपने कथा–साहित्य में पुलिस के अनेक भ्रष्ट रूपों को चित्रित किया है।

'बसंती' उपन्यास में जब बस्ती को तोड दिया जाता है तो बसंती का बाप वहाँ से अपनी कुर्सी उठाने के लिए चला जाता है। चौकीदार उसे पहले मना करता है और जब वह चौका उठाने की बात पूछता है तो चौकीदार कहता है– ''ले जाव, जे जाव पूछकर ले जाते तो हम ससुरी कुर्सी को भी ले जाने देते।'' यहाँ पुलिस के अहं को दर्शाया गया है।

'कुंतो' उपन्यास में मनादी करने वाले हीरालाल को पुलिस द्वारा इतना पीटा जाता है कि पहले उसकी नाक से और फिर मुँह से खून बहने लगता है। सहदेव सोचता है– ''सदर बाजार और शहर में कितना अंतर था? यदि यही मनादी हारीलाल ने शहर के अंदर की होती और पुलिस उसकी पिटाई भी करती तो पुलिस चौकी के बाहर बीसियों लोग जमा हो जाते, रात हो या दिन, और उसे पलकों पर

बिठाकर ले जाते। अगर पुलिस चौकी के बाहर लोगों की भीड लगी होती तो वह खूंख्खार थानेदार इस बेरहमी से हीरालाल को पीटता भी नहीं, कि पहले उसके नाक से, फिर मुँह से खून बहने लगता है और अधमरे जीव को उठवाकर चौकी की सीढियों पर डलवा दिया जाता।''[३९]

भीष्म साहनी ने अपनी कई कहानियों में पुलिस के गलत रवैंतों का चित्रण किया है। इन कहानियों में प्रमुख हैं– वाङ्चू, मालिक का बंदा, निशाचर, मुर्ग मुसल्लम, लीला नंदलाल की, बात की बात आदि।

'लीला नंदलाल की' कहानी में जब नायक का स्कूटर खो जाता है तो वह रपट लिखता है। हर बार वहाँ जाने पर उसे तिरस्कृत किया जाता है। लेकिन एक दिन इन्स्पेकट्र उसकी अच्छी–खासी आवभगत करता है तो उसे अचरज होता है लेकिन बाद में पता चलता है कि उसके पिता ने बडे लोगों को खत लिखे थे, जिसका यह असर है।

'बात की बात' में रास्ते में एक छोटा–सा झगडा माचिस को लेकर हो जाता है। हर कोई अपनी तरह से उसे सुलझाने की कोशिश करता है जब सिपाही आ जाता है तो सब कुछ समझ कर पहले खोंचे वाले को ही उस रास्ते से हटा देता है। वह कहता है– ''सडक के किनारे खोंचे वाले नहीं बैठ सकते! उठाओ वरना मैं चालान करूँगा।'' यहाँ सिपाही की अधिकारी वृत्ति को दर्शाया है जो गरीब खोंचेवालों को डाँटता–फटकारता है।

'निशाचर' कहानी में कागज बटोरने वाली स्त्री का चित्रण है। कडी सर्दी में वह रात के तीसरे प्रहर में ही कागज बटोरने निकल पडती है। सबसे ज्यादा डर जमादार का है– ''जमादार के आने से पहले जो हाथ लगे, बटोर लो, एक बार पहुंच गया तो जाने कुछ लग पायेगा या नहीं, जब से जाडा तेज हुआ है, गली का जमादार गली के पहुँचने पर सबसे पहले बिखरी खपचियाँ कागज, थिगलियाँ बटोरकर आग जला देता है, और आग के दोनों हाथ फैलाये बैठ जाता है और आग तापता है, अपना बदन गरमाता रहता है।'' इन गरीबों के पेट का एक मात्र सहारा भी वह बडी बेरहमी से छीन लेता है।

'मुर्ग मुसल्लम' कहानी तो पुलिस वालों के एक और रूप को प्रस्तुत करती है। अंडर ट्रायल कैदी जब अच्छे खाने के लिए हडताल करते हैं तो एक अच्छे होटल के बावर्ची को कैदी बनाकर जेल में रखा जाता है। इससे उसका पूरा जीवन बर्बाद हो जाता है। उसकी बेटी, पत्नी उससे बिछड जाती है, उसे कोई काम पर रखने के लिए तैयार नहीं होता है।

'मालिक का बंदा' कहानी का हवलदार तो स्वयं रेल के गोदाम में चोरी करता है और भगवान का मंदिर बनाता है उसका कहना है कि यह काम करने की प्रेरणा उसे भगवान ने दी हुई है। 'वाङ्चू' कहानी में बौद्ध ग्रंथो के अध्ययन करने वाले अत्यन्त भोले–भाले वाङ्चू पर पुलिस तरह–तरह के आरोप करती है और उसके आने–जाने के कारण पूछकर उसे राजनीति में घसीटना चाहती है। उसे हर महीने हाजिरी लिखने के लिए जब कहा जाता है, तो वह बडा दु:खी होता है। चीन में उसे भारतीय गुप्तचर और भारत में चीनी गुप्तचर समझा जाता है।

तात्पर्य देश के रक्षक ही भक्षक बन जाते हैं तो देश में अराजकता निर्माण होती है। इसमें धनिक वर्ग पैसों के बल पर कुछ भी करने को तत्पर रहते हैं मगर सामान्य लोग इसका शिकार बनते हैं। पुलिस का व्यवहार एक आम आदमी के प्रति कितना रूखा होता है और उससे आम आदमी को कई तरह की समस्याओं का सामना करना पडता है। इसका यथार्थ चित्रण भीष्म जीने किया है।

४.७.१५ : चापलूसी एवं 'जी, हुजूरी' की समस्या

चापलूसी एवं 'जी, हुजूरी' की समस्या की प्रवृत्ति को भी भ्रष्टाचार का एक अंग माना जाता है। अपने कार्य पूर्ति हेतु सामान्य आदमी किसी भी बडे अफसर की हाँ में हाँ मिलाते हैं, इसे ही 'जी हुजूरी' की प्रवृत्ति कहते हैं। भ्रष्टाचार में लेन–देन होती है मगर यहाँ अफसरों की या काम के आदमी की खुशामद करनी पडती है। अफसरों को खुश रखने की यह प्रवृत्ति अँग्रेजों के शासन काल से चली आ रही है। यह बात अधिकतर सरकारी दफ्तरों में दिखाई देती है। अपनी अर्जी को पास करवाना हो, तो अपने फाईल को दूसरी मेज पर पहुचाना हो इस तरह का कोई भी काम क्यों न करवाना हो, मनुष्य को चापलूस के बिना वह साध्य नहीं हो सकता है। साहब से मिलने के लिए चपरासी तक से चापलूसी करनी पडती है। यहाँ तक कि छोटे–छोटे काम करवाने के लिए हमें किसी–न–कीसी की चापलूसी करनी पडती है। भीष्म साहनीजी ने भी अपने कथा–साहित्य में इस समस्या का चित्रण किया है।

''मय्यादास की माडी' उपन्यास में इस समस्या का चित्रण किया है। दीवान धनपत एक विचित्र प्रकार की अपनी अड्चन मालिक मंसाराम के सामने रखता है। वह कहता है कि इसी सायत से दूसरी लड्की की शादी भी होगी। और जब उन्होंने ऐसा फैसला किया कि चौधरी खानदान में लड्की नहीं देंगे तो यह शादी हुई–न–हुई के बराबर है। तो मलिक मंसाराम की पत्नी कहने पर दीवान धनपत की चापलूसी की जाती है और दूसरी लड्की देने के लिए भी वे तैयार हो जाते हैं। लेकिन यह देखकर स्वयं

दीवान धनपत भी शर्माता है और मिलने के औसर पर कहता है– ''मलिक हमारी इज्जत रखें, हम मलिकों की इज्जत रखेंगे। बेटियाँ सबकी साँझी होती है। अब हम एक–दूसरे के समधी हैं, जीना–मरना सब एक साथ होगा।''(४०)

'मय्यादास की गाडी' उपन्यास में दीवान मय्यादास पहले तो राजा अमीरचंद के दरबार में जी हुजूरी किया करते हैं लेकिन बाद में अँग्रेजों की सत्ता बढती जाती है, अंग्रेजों का महत्व उन्हें मालूम होने लगता है और इसी वजह से रेल के गार्ड को अंग्रेजों का अफसर समझकर फर्शी सलाम करते हुए कहते हैं– ''हुजूर का इकबाल बना रहे। बंदा कस्बे के पुराने रईसों में से है, हुजूर के पास इंसाफ की माँग करने हाजिर हुआ है।'' लेकिन लोग उस पर उलटा और ज्यादा व्यंग्य करते है।

'पटरियाँ' कहानी का देशोराम एक दलाल है लेकिन सिर्फ अपना काम करवाने के लिए वह चपरासी अफसर सभी की चापलूसी करता है फिर भी वह अपना काम नहीं करवा सकता। जब वह जबरदस्ती साहब की केबिन में घुस जाता है, तब उसका काम हो जाता है। 'मौकापरस्त' कहानी में हाथ आये मौके का फायदा उठाने की प्रवृत्ति वाले रामदयाल का चित्रण किया है। वह भी हाथ आये मौके का फायदा उठाने के लिए चापलूसी करता है।

'लीला नंदलाल की' कहानी में चापलूसी का एक अलग रूप देखने को मिलता है। यहाँ नायक को उसका चोरी किया हुआ स्कूटर हासिल करने के लिए न जाने किस–किस की चापलूसी करनी पडती है। वह पुलिस स्टेशन चला जाता है तो इंस्पेक्टर उसके प्रति ध्यान नहीं देता । जब उसके पिता ने किसी बडे अफसर को इस संदर्भ में खत लिखा तो नतीजा यह हुआ कि, इंस्पेक्टर उसकी चापलूसी करने लगा ताकि उसकी नौकरी सलामत रहे। इस बारे में नायक कहता है– ''उसने मेरे साथ हाथ मिलाया, मुझे दफ्तर के अंदर ले जाकर कुर्सी पर बिठाया, अर्दली को आवाज देकर मेरे लिए ठंडे पानी का गिलास मंगवाया।''(४१)

अपनी गरीबी के कारण कभी–कभी मनुष्य को चापलूसी करनी पडती है। जैसे 'जोत' कहानी के जानकी की जमीन जब पानी से बहने लगती तो वह गाँव के लोगों के पास जाता है और चौधरी, पटवारी आदि से खेत बचाने के लिए कहता है। जब मंदिर की पूजा के लिए जाने की बात वे करते हैं तो, वह कहता है– 'सजो तुम लोग दया करोगो तो बच जायेगी।'' यहाँ तक कि बाद वह में रेंजर की भी चापलूसी करता है।

'चीफ की दावत' कहानी के एक और रूप को हमारे सामने प्रस्तुत करती है। इस कहानी का नायक शामनाथ अपने साहब को सिर्फ इसलिए अपने घर दावत के लिए बुलाता है कि वह पदोन्नति चाहता है। वह साहब को खुश करने के लिए अपनी माँ का दिल दुखाने के लिए भी तैयार हो जाता है।

'खूँटे' कहानी में भी इसी समस्या को दिखाया है। इस कहानी का एक पात्र विनायक अपने अपने साहब से तंग आ चुका है क्योंकि साहब उसे तरह–तरह के काम करवाता है। लेकिन वह अब सोचता है कि वह रिटायर्ड होने ही वाला है लेकिन जब उसे पता चलता है कि यह साहब अगर उसकी सिफारिश कर दे तो उसे दो बरस और काम करने का मौका मिल सकता है तो वह उसी वक्त अपने साहब के पास जाना चाहता है। वह कहता है– ''जैन सिफारिश कर दें तो काम बन जायेगा।'' वह बुदबुदा रहा था, ''मैंने उनकी बडी खिदमत की है। उनकी बेटी का सारा काम मैने किया था। मुझे दिल्ली पहुंचना चाहिए.....''(४२)

तात्पर्य अपना कार्य निटाने के लिए मनुष्य को 'जी हुजूरी' या चापलूसी करनी पडती है। इसी स्वार्थी प्रकृति के लिए वह अहं, अभिमान दूर रखकर कितना लाचार बनता है, इंसान की इसी लाचारी और बेबसी का दर्शन यहाँ होता है। बडे–बडे अफसर भी उपर से आने वाले दबाव के कारण सामान्य लोगों की चापलूसी करते हैं। भीष्म साहनी जी इस समस्या का चित्रण करने में सफल बन पडे हैं।

४.७.१६ : स्वार्थ

आज कल मनुष्य में स्वार्थ की भावना बढती जा रही है। वह हाथ आये मौके का फायदा उठाना चाहता है। अपने स्वार्थ पूर्ति के लिए वह कुछ भी करने को तैयार रहता है।

'कड्यिाँ' उपन्यास के नायक महेंद्र की स्वार्थी प्रवृत्ति दिखाई देती है। महेंद्र जब अपने बेटे पप्पू के स्कूल में चला जाता है तो वहाँ उसे मिसेज भगत मिल जाती है। मिसेज भगत का खुला स्वाभाव होने के कारण उनसे और बातचीत कर उन पर अपना प्रभाव जमाना चाहता है, इससे उसका स्वार्थ प्रकट हुआ है।

'क्रिकेट मैच' कहानी की पुष्पा अपने पति को अपने शिकंजे में रखने के लिए हर महीने कुछ नया करती है। जैसे भी हारमोनियम बजाती है तो कभी बाल कटवाती हैं, कभी ताश सीखती हैं । परन्तु उसका पति अपने स्वार्थ के लिए हर साल बच्चे के बहाने मायके भेज देता है। वह इस प्रकार उसे भेजने को एक दाँव कहता है।

'खून की छींटे' कहानी में मनुष्य के स्वार्थ का एक अलग ही रूप देखने को मिलता है। इस कहानी में एक बीघा जमीन के लिए अपने ही चाचा के बीमार बेटे को मारकर पागल बनाकर अस्पताल में भरती करवाने निकलता है।

'घर की इज्जत' कहानी के बडे भाई साहब अपने छोटे भाई साहब की पत्नी को नाटक में काम करने से रोकते है और वे बाहर भारतीय नारी के गौरव का गुणगान करते है। अपनी स्वार्थी नीति को कायम रखने के लिए वे अपने छोटे भाई को समझाते हैं। इस प्रकार उनका दोहरा व्यक्तित्व एक ओर उदार और हक ओर स्वार्थी दिखाई देता है।

'बाप–बेटा' कहानी में भी स्वार्थ का एक अलग रूप प्रस्तुत हुआ है। इस कहानी का बाप अपने बेटे को फौज में भर्ती करना चाहता है। क्योंकि इससे बेटे को पैसे प्राप्त होंगे और साहूकार का ब्याज चुकाया जायेगा। वह अपने बेटे को बार–बार हिदायत देता है– ''जो तलब मिले वह सारी–की–सारी पंडित दुकान वाले को भेज देना।''(४३)

'मौकापरस्त' कहानी भी हाथ आये मौके का फायदा उठाने वाली प्रवृति को पेश करती है। इस कहानी में एक शबयात्रा का फायदा उठाकर एक दल का प्रचार किया जाता है। अपना उल्लू सीधा करने के लिए नेता लोग शबयात्रा का भी संबल पकडते है और अपनी स्वार्थ की पूर्ति करते हैं।

तात्पर्य स्वार्थ आदमी को कितना अंधा बना देता है और इन्सानियत को हैवानियत पर ला खडा कर देता है इसके कई उदाहरण साहनी के कथा–साहित्य में दिखाई देते हैं। इन्सान स्वार्थी होने के कारण अधम कृत्य करने के लिए प्रवृत्त होता है और यह एक समस्या बन जाती है, यह दिखाने का प्रयास भीष्मजी ने किया है।

४.७.१७ : अफवाहें

अफवाहें कभी–कभी सामान्य मनुष्य के जीवन को आतंक भरा बना देती है। अफवाहें फैलाने वाले लोग असामाजिक या आतंकवादी ही ऐसी बात नहीं, कभी–कभी सामान्य आदमी भी अफवाहें फैलाते हैं जिससे दहशत फैल जाती है। अफवाहे शहरों में दंगे छिड देते हैं, कई लोगों को अपनी जान तक गँवा देने पर तुली होती है। भीष्म साहनीजीने इन अफवाहों और उससे उत्पन्न समस्याओं को भी चित्रित किया है।

'सरदारनी' कहानी में अफवाहों की वजह से सारा–का–सारा काम कैसे ठप्प पडा रहता है इस बात को चित्रित किया है– ''पिछले कुछ दिनों से शहर में तरह–तरह की अफवाहें फैलने लगी हैं। किसी ने मास्टर करमदीन से कहा था कि शहर के बाहर राजपूत रेजीमेन्ट की तुकडी पहुँच गयी है, कि अब की बार के जुलूस में झाँकी वाली गाडी में ही बर्छे और तलवारें भरी रहेंगी, कि कस्बे में बिना लाइसेसं के चालीस पिस्तौल पहुँच गये है और हिन्दुओं के मुहल्लों में मोर्चेबंदियाँ तेजी से खडी की जा रही हैं, की पाँच–पाँच घरों के पीछे एक–एक बन्दूक का इंतजाम किया गया है।'' इन अफवाहों की वजह से शहर में तनाव बढने लगा और मास्टर करमदीन स्कूल बंद करके वापस आ गया।

'झुटपूट' कहानी में भी एक सांप्रदायिक दंगे का वर्णन किया गया है। पहले तो आगजनी की घटना हुई है इस पर किसी का विश्वास नहीं होता है। फिर भी लोगों में भय फैल जाता है– ''इसके कुछ ही देर बाद दुकानें बंद होने लगी थी। लगभग दस बजे सुनने में आया था कि पिछली बस्ती में आग लगी है शायद इसकी भनक दुकानदारों को पहले से लग गयी थी। तथी बची–खुची दुकाने भी सहसा बंद हो गयी थीं। प्रोफेसर कन्हैयालाल अपने घर की छत पर यह देखने के लिए चढ गया था कि आग सचमुच लगी है या झूठी अफवाह ही फैली है।''(४४)

अत: स्पष्ट है कि अफवाहें मनुष्य के जीवन को आतंकित बना देती हैं। सामान्य मनुष्य इस समस्या से ज्यादा परेशान हो जाता है। स्कूल, बाजार बंद हो जाते हैं, इसी बात को भीष्म जी ने अत्यन्त यथार्थ रूप में हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया है।

४.७.१८ : समाज भय

कुछ भी नया करने से पहले लोगों के सामने यह सवाल रहता है कि लोग क्या कहेंगें? इसी समाज के डर की बजह से ही लोग नया कुछ करना नहीं चाहते। फिर भी समाज से थोडा–सा भी अलग करने से समस्या बन जाती है।

'कुंतो' उपन्यास में जयदेव की माँ को जैसे ही पता चलता है कि जयदेव को वह डर जाती है। जयदेव तो हमेशा ही खुले स्वभाव का रहा है। वह जब कुंतों को लेकर साइकिल सवारी करता है तो कुंतो डर जाती है कि कोई देखेगा तो क्या कहेगा? जयदेव के माता–पिता तक इस बात की सूचना चली जाती है तो माँ उससे कहती है– ''विवाह के बाद, जहाँ मन आये उसे ले जाते रहना, बेटा,

लेकिन ब्याह से पहले कोई ऐसा काम नहीं करो कि शहर के लोग बातें करें, हमारी जग–हँसाई हो।''(४५)

'कड्याँ' उपन्यास का नायक महेंद्र शादी–शुदा होकर भी सुषमा से प्यार करता है लेकिन वह भी समाज से डरता है। वह उसके फ्लैट से निकलते वक्त सभी ओर नजर घुमाकर देखता है।

'राधा अनुराधा' कहानी की राधा जो घर से भागकर शादी करती है, श्यामा बीबी के घर फिल्म देखने जाती है तो श्यामबीबी डर जाती है। ''किसी को पता चल गया, तो दस आदमी यहाँ पहुँच जायेगे। आजकल किसी को कोई ऐतबार नहीं। भागी हुई लड्की। बाप बाहर गली में बैठा है। मैं क्या जानू कौन है, कौन नहीं है। ज्यों–ज्यों श्यामा सोचती जाती उसका घबराहट बढती जाती, उसका डर बढता जाता कि उसके लिए कोई पचडा खडा न हो जाये।''

तात्पर्य समाज भय व्यक्ति पर होना अच्छी बात है जिससे आदमी नियंत्रित रहता है। फिर भी अगर व्यक्ति समाज–भय मन में होते हुए भी कोई विकृत कार्य करता है तो वह समस्या बनती है। महेंद्र का सुषमा से प्यार करना विकृति है। समस्या तब बनती है जब विकृति निर्माण होती है। इसी तरह की समस्याओं का यथार्थ चित्रण भीष्म साहनी ने अपने कथा साहित्य में किया है।

४.७.१९ : वर्ण भेद

जाति–भेद छूआछूत से भी घिनौना रूप वर्ण भेद में होता है। यह समस्याओं अत्याधिक मात्रा में तब भी जब अंग्रेज इस देश पर राज कर रहे थे। भीष्म साहनी जी ने इस समस्या का जिक्र अपने कथा–साहित्य में किया है।

'कुंतो' उपन्यास का एक पात्र सहदेव एकबार कानपुर रेल स्थानक पर पूछताछ की खिड्की पर कुछ पूछने जाता है तो वहाँ गोरा फौजी आकर उसे धकेल कर पूछने लगता है तो सहदेव आपत्ति उठाता है– ''पर गोरे फौजी ने आव देखा न ताव, मुझे गले से पकड्कर जोर से धक्का दिया और प्लेटफार्म पर लुढकता हुआ दूर जा गिरा।'' उससे कोई हमदर्दी भी नहीं जताता। यहाँ तक कि रेलवे का बाबू भी उसे ही दोष देने लगता है।

'रामचंदानी' कहानी में भी इस समस्या का चित्रण हुआ है। पहाड के एक बंगले में राम चंदानी और उसके दोस्त रहेने जाते है लेकिन वहाँ के एक होटल में उन्हें सिर्फ इसलिए खाना नहीं दिया जाता है कि वे काले हैं और वह होटल गोरे लोगों के लिए है। जब उनके बंगले में बावर्ची आकर खाना पकाते

हैं तो उस होटल की मालकिन से यह रामचंदानी पूछने जाता है। वह बताती हैं– ''मेरा अनुमान ठीक था। उससे दबाव में आकर ऐसा किया है कुछ अंग्रेज ग्राहकों ने ऐतराज किया है कि रेस्तृराँ में हिन्दुस्तानी लोगों को क्यों बैठने दिया जाता है।''(४६)

वर्ण भेद की समस्या अंग्रेजों के युग में ही थी ऐसी बात नहीं है, उनके जाने के पश्चात् भी इसका असर दिखाई देता है। भीष्म साहनी जी ने अपने साहित्य में इसका वर्णन किया है क्योकि उन्होने उस समस्या को स्वयं देखा तथा भोगा है। वर्ण भेद की जो स्थिति 'कुंतो' उपन्यास में दिखाई देती है, वह अनुभव तो स्वयं उन्हीं का है। इस प्रकार भीष्म जी ने अपने अनुभवों को ही इस समाज के माध्यम से साहित्य में उतारा है।

४.७.२० : नयी और पुरानी पीढी संघर्ष

नयी पीढी और पुरानी पीढी में संघर्ष तो सदियों से चला आ रहा है। जैसे–जैसे वक्त बीतता जाता है वैसे ही नयी पीढी को पुरानी पीढी के विचार रूढियों से ग्रस्त तथा दकियानूसी लगते हैं। नयी पीढी उनके प्रति अपनी नफरत प्रकट करती हुई अपने नये अंदाज में रहने लगते हैं। यह संघर्ष तो चलता ही रहता है। भीष्म जी ने इसे अपने उपन्यासों एवं कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

'कुंतो' उपन्यास का नायक अपने परिवार के सदस्यों को दकियानूसी कहता है और उनकी प्रोफेस्साब के घर वालों के साथ तुलना करता रहता है। 'मोटी थोबडी नाक, धूप में सँवलाये चेहरे, पिताजी और चाचाजी की बडी–बडी मूँछें, नीचे पाजामा। पाजामा भी कोई पोशाक है, पग्गड भी कोई सिर पर रखने वाली चीज है? जब से वह प्रोफेस्साब के संपर्क में आया था उसे अपना घर पिछडा हुआ और परिवार के लोग दकियानूसी से लगने लगे थे।'' लेकिन इसी उपन्यास के एक महत्वपूर्ण पात्र प्रोफेस्साब, जो कुंतो के बडे भाई हैं, हमेशा मध्यम मार्ग अपनाते हैं। वे न तो नये विचारों का तिरस्कार करते हैं और न पुराने विचारों को छोडने की बात करते हैं। वे कहते हैं– ''यूनान का फससाफा मध्यम मार्ग की शिक्षा देता है, अति से दूर रहने की Neither too much nor too little- The Golden mean मैं इसे मानता हूँ।''

जयदेव को जब एक दिन घर लौटने के लिए देर हो जाती है तो उसके पिता उसके प्रति असंतोष व्यक्त करते हैं कि वह काम नहीं करता और ससुराल में बैठा रहता है। जब जयदेव और कुंतो के मालगाडी के सफर का उन्हें पता चलता है तो वे और भी क्रोधित हो जाते हैं। वे पुराने विचारों को

मानने वाले हैं। जबकि जयदेव हमेशा उल्टा बर्ताव करता है, जिससे वे क्रोधित होते हैं और संघर्ष छिड जाता है।

'झरोखे' उपन्यास में बडा बेटा जब व्यापार छोड देना चाहता है और नौकरी के लिए लाहौर जाना चाहता है तो उसके पिता को यह बात पसंद नहीं आती वे उससे कहते हैं–'' व्यापार का भी कोई अंत होता है? कपडे और चाय का व्यापार नहीं करना चाहते तो किसी दूसरी चीज का कर लो। बाजार में मेरी तीस साल की 'साख' है, मैं जगह–जगह चिठ्ठियाँ लिखकर तुम्हें और एजेंसियाँ दिला दूँगा, तू घबराता क्यों है? लेकिन बेटा टस–से–मस नहीं होता और उन्हें विरोध कर लाहौर चला ही जाता है। उसके पिता अत्यन्त व्यथित हो जाते हैं।

'ढोलक' कहानी के नायक रामदेव की शादी होने जा रही थी। वह पढा–लिखा होने के कारण वह उन पुरानी रीतियों को नहीं मानता। जब उसी चाची और अन्य औरते गाना गाती हैं तो वह उन पर गुस्सा होता है।'' जब से ब्याह का पछडा शुरू हुआ था, उसकी जान साँसत में आ गयी थी। जाहिलों के बीच पड गया था। न पढने को वक्त मिलता था, न कुछ सोचने को और तरह–तरह की अटपटी रस्में, कभी कलाई पर मूली का धागा बाँधा जा रहा है तो कभी हाथों में मेंहदी लगायी जा रही है और कभी खी–खी करती लडकियाँ कमरे में घुस रही है।''(४७)

इस प्रकार आधुनिक काल में पढे लिखे युवक–युवतियों को पुराने रीति–रिवाज एक बाह्याडंबर लगते हैं। वे उनका विरोध करते हैं तब संघर्ष छिड जाता है। पीढियों के बीच होने वाले इस संघर्ष के कारण सनातनी वृत्ति और आधुनिकता में भी संघर्ष दिखाई देता है। आधुनिक पीढी पाश्चात्य विचारों को अपनाना चाहती है। जब कि पुरानी पीढी की मानसिकता अलग होती है। वह अपने पुराने रीति–रिवाजों से चिपके रहते हैं।

४.७.२१ : बुजुर्गो की उपेक्षा

आधुनिक काल में बच्चे बडे होने पर बडों का आदर नहीं करते हैं। बुजुर्गो की वे उपेक्षा करने लगते हैं इस समस्या से पीड्ति अत्याधिक बुजुर्ग अकेलेपन की समस्या का भी शिकार हो जाते हैं।

'बसंती' उपन्यास में चौधरी जब एक जगह अपना आसन जमाता है और ग्राहक का इंतजार करता है तभी एक युवक भी अपना थैला उठाये धंधा करने के लिए वहाँ आ जाता है। चौधरी उसे समझाता है फिर उसका थैला फेंक देता है। वह युवक जिद पर उतर जाता है कि मुझे थैला उठाकर दो

मैं चला जाऊँगा। वह नहीं उठाता इसी वजह से वह युवक चौधरी को उठा कर फेंक देता है। चौधरी बौखलाता है– ''मैं तेरे बाप के बराबर हूँ, बेशरम, बेहया, अपने बाप को भी पटकेगा, हरामी की औलाद....'' वह युवक तब तक नहीं मानता जब तक चौधरी थैला उठाकर नहीं देता।

कभी–कभी घर के बुजुर्गों को एक कोने में जगह दी जाती है। अगर घर में पार्टी हो तो उन्हें तरह–तरह की हिदायतें दी जाती हैं या फिर उन्हें पडोस के किसी घर में जाकर बैठने के लिए कहा जाता है। उनकी आदतें नई पीढी के लिए परेशानी पैदा करती हैं।

भीष्म साहनी जी की कहानी 'चीफ की दावत' भी इसी समस्या को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करती है। शामनाथ के घर में साहब दावत के लिए आने वाले थे, तो शामनाथ के सामने यह समस्या खडी हो जाती है कि माँ का क्या किया जाये? पहले पडोस के घर भेज देने की बात सोची जाती है फिर उसे कमरे में बंद करके रखने की बात सोची जाती है लेकिन माँ खर्राटि भरेंगी इसलिए उसे बालकनी में कुर्सी डालकर बैठने के लिए कहा जाता है और न ऊँघने की सख्त हिदायत दी जाती है।

'अनूठे साक्षात' कहानी में 'भेंट' शीर्षक के अन्तर्गत भी इसी समस्या को प्रस्तुत किया गया है। समीर की माँ उसकी बहू से इतनी तंग आती हैं कि वह कहानी के नायक 'मैं' से आकर कहती हैं–''मैं उनकी आँखो से दूर हो जाऊँगी तो मेरे साथ ऐसा बुरा सुलूक नहीं करेंगे। मैं समीर से कह दूँगी, तेरे लिए तेरी माँ मर गयी है।''(४८)

'खून का रिश्ता' कहानी में चाचा मंगलसैन परिवार के एक बुजुर्ग सदस्य होते हुए भी उनकी हमेशा उपेक्षा नही होती है क्योकिं वे कोइ काम ठीक से नहीं करते। पहले उन्हें अपने भतीजे की सगाई में ही न ले जाने की बात चल रही थी लेकिन बाद में भतीजे की जिद के कारण उन्हें ले जाते हैं। समधी एक चाँदी का चम्मच देना भूल जाते हैं। दो ही चम्मच घर में आते हैं तो घर में कोहराम मच जाता है। सबसे पहले तो चाचा मंगलसैन पर ही आरोप लगाया जाता है।

'जख्म' कहानी में भी इसी समस्या को दिखाया गया है। रेल में सफल करने वाले एक बुजुर्ग से वह युवक इतना तंग आता है कि वह अंत में उसे एक थप्पड मारकर चुप करा देता है।

तात्पर्य आधुनिक काल में युवा वर्ग में नैतिकता का पतन हुआ दिखाई देता है। प्राचीन काल से हम जो रिश्तों में अपनत्व मानते आये हैं, वह अपनत्व ही आज नष्ट हुआ है। वह रिश्ते खून से बनते है परन्तु आज खून की जगह स्वार्थ ने ले ली है। इन सभी बातों को भी भीष्म जी ने यथार्थ रूप में चित्रित किया है।

४.७.२२ : अकेलापन

मनुष्य अगर अकेला हो तो किस प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड्ता है, इस बात को भीष्म साहनी ने अपने कथा साहित्य में चित्रित किया है।

'दहलीज' कहानी में इस समस्या को पीड्ित व्यक्ति को चित्रित किया है। सि कहानी का 'मैं' हर बात से डरता है। वह सिर्फ इसलिए शादी नहीं करता कि कीटाणु न आ जाये। दूसरे व्यक्ति की साँसो से कीटाणु न आ जायें इसलिए वह हवा का रूख देखकर बैठता है, यहाँ तक की छूप में खत रखकर पढता है। इसी अकेलेपन की वजह से उसे अब भ्रम होने लगता है और वह हमेशा सोच में डूबा रहता है।

'अकाल मृत्यु' में भी धनराज जिसकी पत्नी मर चुकी है, उसके अकेलेपन का चित्रण किया गया है। अपनी पहली पत्नी को वह बहुत चाहता था इसलिए दूसरी शादी हो जाने के बावजूद भी वह अपने आप को अकेला महसूस करता है। उसकी तस्वीर देखकर वह कहता है– ''जो तू आज जिंदा होती, अनुराधा, तो मैं जीवन में परास्त न हो जाता, मैं यो न भटकता न फिरता। अब मेरी जीवनयात्रा कितनी कठोर और बीहड हो उठी है।''(४९)

अकेले इंसान के दिल में हमेशा उथल–पुथल मची रहती है। इसी कारण वह चैन नहीं पाता। इस समस्या से वह निरन्तर जूझता रहता है। भीष्म जी ने इस समस्या का यथार्थ चित्रण किया है।

४.७.२३ : यातायात की समस्या

शहरी जीवन अत्याधिक व्यस्त हो रहा है। घडी की सुई के अनुसार लोग काम करते हैं, मानो वे कोई मशीन हो। पूरा शहरी जीवन यंत्रवत् बन गया है। शहरों के रास्तों पर राह चलते आदमियों के साथ–ही–साथ गाड्ियाँ, बसें, स्कूटरें भी दौड्ती हैं फिर भी उनके सभी काम भी अटक जाते हैं। ट्रेफिक जाम तो शहरी जीवन का एक हिस्सा बन रह गया है।

'खिलौने' कहानी के नायक के घर महेमान आने वाले थे। आने में देर हो जाती है। वह अपने मेहमान दोस्त को उसकी देरी का कारण बताता है जिससे हमें उसकी व्यस्तता का पता चलता है– ''आज मैं दफ्तर से निकला तो पूरे साढे–चार बज रहे थे। रोज मेरा यही नियम होता है। साढे–चार बजे दफ्तर से निकला हूँ, चार चालीस की मुझे बस मिल जाती है। वही दफ्तर के नजदीक से ही चलती है।

बस पकडने में देरी हो जाये तो सब बण्टाधार हो जाता है, और मैं हाँफता हुआ घर पहुँचता हूँ। आज वही हुआ।''

आधुनिक काल में शहरी लोगों का जीवन यातायात के कारण कितना व्यस्त हो गया है, इस बात का भीष्म साहनी जी ने अत्यन्त सूक्ष्म के साथ वर्णन किया है।

४.७.२४ : झोपडपट्टी की समस्या

आधुनिक काल में जैसे–जैसे शहरों में आबादी बढती जा रही है, शहरों में कई तरह की समस्यायें निर्माण हो रही है। इन समस्याओं में झोपडपट्टी की समस्या प्रमुख है। जिनके पास रहने के लिए घर नहीं है, मजदूरी करके जो अपना पेट पालते है ऐसे लोग झोपड्याँ बनाकर वहाँ रहते हैं। यहाँ गंदगी, बाल मजदूरी, शिक्षा आदि अनेक समस्यायें भी निर्माण होती हैं।

'बसंती' उपन्यास में दिल्ली में झोपडी बनाकर रहने वाले राजस्थानी मजदूरों का वर्णन किया है। ''कहीं नये मकानों की नीवें खोदी जाने लगती तो आसपास के राज–मजदूरों की छोटी–चोटी अनगिनत झोपड्याँ खडी हो जातीं, लोहा–सीमेंट, ईट, पत्थर के ढेरों, के बीच इन झोपड्यों में मोटी–मोटी रोटियाँ सेंकी जाने लगती, बच्चे रेत–मिट्टी के ढेरों पर खेलने–सोने लगते, और मजदूरी के काम से निबटकर स्त्रियों की टोलियाँ गाती हुई अपनी–अपनी झोपड्यों में लौटने लगती। गारे–मिट्टी की अधकचरी झोपड्यों में भी स्निग्धना आ जाती। पर ज्यों ही पक्के मकानों का महुल्ला बनकर तैयार हो जाता, तो झोपडें वहाँ से उठ जाते, राज–मजदूर हट जाते, जहाँ उनकी झोपड्यों की वजह से प्रदूषण फैलता है। झोपड्यों की पाँते भी रही होंगी।'' इन झोपड्यों की वजह से प्रदूषण फैलता है। झोपडपट्टियों में रहनेवाले लोग आर्थिक दृष्टि से इतने विपन्न होते हैं कि कभी–कभी उन्हें कचरा जमा कर, उसे बेचकर अपना गुजारा करना पडता है।

'निशाचर' कहानी में भी इसी समस्या का चित्रण किया गया है।

महानगरों के जीवन का अभिशाप बनी झोपडपट्टी की समस्या को भीष्म जीने अंकित किया है। इस समस्या के पीछे भी कई कारण हैं परन्तु साथ–ही–साथ इसकी वजह से भी बाल गुनहगार, प्रदूषण, जैसी कई समस्यायें निर्माण हो सकती हैं।

४.७.२५ : बाढ की समस्या

मनुष्य की जीवन में कुछ समस्यायें स्वयं मनुष्य द्वारा निर्मित होती हैं कुछ समस्यायें प्राकृतिक हुआ करती हैं। बाढ की समस्या एक प्राकृतिक समस्या है। इस समस्या का प्रभाव सबसे ज्यादा सामान्य आदमी पर पड्ता है। इसकी वजह से गाँव के गाँव तबाह हो जाते हैं और लाखों का नुकशान हो जाता है।

'अतीत के स्वर' में एक जलप्रपात फूट जाने से पूरा गाँव और प्राचीन मंदिर कैसे नष्ट हो जाता है, इसका चित्रण हुआ है। ''क्षणभर में सारा गाँव उसमें डूब गया था और शीघ्र ही टूटते घरों की लडकियाँ, बल्ले, बचे–खुचे जानवर सभी पानी में बह रहे थे। मंदिर की बाई ओर की दीवार कटकर जलमग्न हो चुकी थी।'' बाढ की वजह से मानों एक विनाशलीला ही वहाँ पर चल रही थी।

बाढ जैसी प्राकृतिक आपत्तियाँ मनुष्य के जीवन को नष्ट कर देती हैं। कभी–कभी मनुष्य इतना टूट जाता है कि कुछ भी नया करने की उसकी इच्छा मर जाती है। भीष्म जी ने जिस बाढ का चित्रण किया है, वह भी एक विनाशलीला है।

४.७.२६ : झूठी प्रतिष्ठा का लालच

आधुनिकीकरण के साथ–साथ मनुष्य में एक और प्रवृत्ति जागृत हो गयी है कि उसे विदेशी चीजों का आकर्षण हो रहा है। एक ओर तो वह जमाना था जब विदेशी चीजों वस्तुओं को तिरस्कृति किया गया और हर कोई ऐसी चीजें खरीदना चाहता है जो विदेशी हो, जिन पर विदेशी मोहर लगी हो। अत: लालची स्त्रियों में यह प्रवृत्ति अधिक दिखाई देती है।

'मेड इन इटली' कहानी की नायिका मीरा जब रोम देखने जाती है तो वहाँ उसे एक बैग बहुत पसंद आती है। वह विदेशी समझकर बैग खरीद लेती है तो और घर पर आने पर उसे पता चलता है कि बैग हिन्दुस्तान की बनी है। वह बैग वापस करने जाती है और दुकानदार का इन्कार देख वह कहती है– ''यह अंदर जो लेबल लगा है उसे कैंची से उतार दो और इसकी जगह 'मेड इन इटली' का लेबल कहींसे उतार कर टाँक दो। फिर मैं इसे ले लूँगी।'' केवल अपना महत्व बढाने के लिए विदेशी चीजेन खरीदना और लोगों के सामाने इठलाना यह प्रवृत्ति जो आजकल बढ रही है।

विदेशी मोहर लगी चीजे खरीदने का चाब सिर्फ इसलिए होता है कि उसका प्रदर्शन कर झूठी प्रतिष्ठा प्राप्त की जाये। इसी बात को भीष्म जी ने अपनी 'मेड इन इटली' कहानी में एक समस्या के रूप में प्रस्तुत किया है।

४.७.२७ : पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण

आजकल पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण करने की प्रवृत्ति बढती जा रही है। उन्हीं की तरह बैड टी लेना, कुत्ते पालना, शराब पीना, बर्थ डे मनाना, डान्स करना, पार्टियों–क्लबों में जाना आदि की वजह से भारतीय संस्कृति का लोप हो रहा है।

'कुंतो' उपन्यास का पात्र धनराज विदेश से लौटकर जब अपनी पत्नी को छोड देने की बात करता है तो सभी भौचके से रह जाते हैं। वह कहता है कि कोई और देश होता तो तलाक हो सकता था जिससे पाश्चात्यों का अनुसरण करते हुए पूरे परिवार को धक्का लगता है।

'बीवर' कहानी का नायक कुत्ता पालता है तो उसे काफी परेशानियों का सामना करना पडता है। यहाँ तक कि म्यूनिसीपालिटी वाले कुत्ते को मारने आते हैं तो वह कहता है– ''मेरे पास एक कुत्ता जरूर था, मगर वह तो मैंने बहुत दिन हुए एक शिकारी दोस्त को दे दिया था।''(५०) अर्थात् वह इतना परेशान हो चुका है कि अपने ही कुत्ते को पहचानने से इन्कार कर देता है।

'चीफ की दावत' कहानी में पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण का एक अलग रूप हमारे सामने प्रस्तुत होता है। इसमें शामनाथ अपने स्वार्थ के लिए चीफ को घर में दावत देता है। पहले पाश्चात्य के अनुकरण के अनुसार शराब का दौर चलाता है। इसी वजह से घर में माँ उन्हें एक अडचन बन जाती है।

इस प्रकार भीष्म जी ने पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण के कारण होने वाली भारतीय संस्कृति के अंधानुकरण के कारण होने वाली भारतीय संस्कृति के ह्रास को तो दिखाया ही है साथ ही विवाह विच्छेद, बुजुर्गो की उपेक्षा आदि समस्याओं का अंकन इन्हीं के माध्यम से किया है।

४.७.२८ : धार्मिँक समस्यायें :

ऐसा कहा जाता है कि विश्व में जितने सारे युद्ध होते हैं, उनमें से अधिकतर युद्धों के पीछे 'धर्म' या 'धार्मिक कट्टरता' का मूलभूत कारण होता है। भारत में तो यह परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है। यह धार्मिक कट्टरता भारत में पहले इतनी तीव्र नहीं थी लेकिन जैसे–जैसे अंग्रेज देश में

आये, वैसे ही धार्मिक कट्टरता बढने लगी। पहले तो मुसलमानों ने हिन्दुओं पर कई तरह के अन्याय, अत्याचार किये और बाद में मुस्लिम धर्म स्वीकार करने के लिए कई हिन्दुओं को मजबूर किया। अंग्रेजों के स्कूल खुलवाये और उसके माध्यम से धमर प्रसार करना शुरू किया और कभी जबरदस्ती भी की। इसी तरह से कई तरह की समस्यायें निर्माण हो गयीं। भीष्म साहनी ने अपनी–अपनी दृष्टि से परिभाषित करने का प्रयास किया है।

नालंदा विशाल शब्दसागर के अनुसार, ''वह वृत्ति या आचरण जो लोक या समाज की स्थिति के लिए आवश्यक हो। वह आचार जिसके द्वारा समाज की रक्षा और सुख–शांति की वृद्धि हो और परलोक में भी उत्तम गति प्राप्त हो।'' जबकि ज्ञान शब्दकोश में धमर को इस तरह परिभाषित किया गया है– ''वह कर्म जिसे वर्ण, आश्रम, जाति, आदि की दृष्टि से करना आवश्यक हो (इसमें पाँच भेद हैं, वर्णधर्म, आश्रमधर्म, वर्णाश्रमधर्म, गौण कर्म तथा नैमित्तिक धर्म)।''[५१]

डॉ. सुरेश गायकवाड जी कहते हैं– ''धर्म का अर्थ नियम, जो स्वयं मानव के हृदय तथा मन में विद्यमान है। यह सदाचार का नियम है। धर्म किसी रिवाजों तथा कर्मकाण्डों का समूह नहीं बल्कि एक ऐसा विश्वास है जो किसी अनंत सर्वातिशायी तत्व या सत्य पर केंद्रित होता है। निसर्ग में होने वाली अत्यन्त पवित्र, मानव जीवन से संबंध जीवन, विश्व तथा निसर्ग, इन पर नियंत्रण रखने वाली अलौकिक शक्ति पर मनुष्य की श्रद्धा होती है। उस शक्ति का सबसे अनुकूल पवित्र तथा घनिष्ठ संबंध स्थापित करने वाली अथवा सामाजिक मन:प्रवृत्ति तथा उससे निर्माण होने वाली आचरण पद्धति को ही धमर कहा जाता है।''[५२]

हर एक धर्म के अपने अलग विचार होते हैं, जीवन की ओर देखने की उसकी अलग दृष्टि होती है। इसी वजह से संघर्ष निर्माण होता है। भारतीय समाज में हिन्दु धर्म में इतनी जाति–पाँति, स्पृश्या–अस्पृश्यता पायी जाती है कि उसके फलस्वरूप भी संघर्ष निर्माण होता है। अंग्रेजों की दोगली नीति के फलस्वरूप भारत में धार्मिक संघर्ष छिड गया और उसी के फलस्वरूप सांप्रदायिकता की समस्या निर्माण हो गयी। भीष्म जी ने अपने कथा–साहित्य में इस समस्या का चित्रण किया है। केवल इसी एक समस्या को लेकर लिखा हुआ उनका 'तमस' उपन्यास और कई कहानियाँ हैं। इस समस्या को देखने से यह जान लेना आवश्यक हो जाता है कि सांप्रदायिकता क्या है?

४.७.२९ : सांप्रदायिकता :

भारत धर्म प्रधान देश है, अनेक धर्मो के लोग इस में रहते हैं। धार्मिक भावना उनमें अधिक मात्रा में दिखाई देती है। प्राचीन काल से ही भारत में धर्म और धार्मिक संप्रदायों का निर्माण हुआ। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार पुरूषार्थो की सिद्धि मनुष्य के लिए महत्वपूर्ण मानी गई है। जो इन चारों का पालन करता है वह सुखी बन जाता है। इन सभी में भी धर्म को अत्याधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राचीनकाल से ही दिया जाता है। धर्म मनुष्य के जीवन को उदात्त बनाकर विश्वबंधुत्व का संदेश देता है। धर्म के साथ भक्ति और मधुर भाव जुडे हुए हैं। इसी भक्तिभावना को आगे बढाने के लिए कई महापुरूषों ने अपने संप्रदायों की निर्मिती की और इन्हीं संप्रदायों की वजह से लोगों की धर्म के प्रति रूचि बढती गयी। अपने–अपने धर्मो, संप्रदायों के प्रति लोगो की कट्टरता बढने लगी। अपने–अपने धर्म ग्रंथों में लिखे वचन उनके लिए महत्वपूर्ण सिद्ध होने लगे। हिन्दुओं के लिए 'गीता' मुसलमानों के लिए 'कुराण' ईसाइयों के लिए 'बाइबल' में जो लिखा है वही धर्म बन गया। इनमें जिस चीज का निषेध किया गया उन्हें वे निषिद्ध मानने लगे। वास्तव में संप्रदाय समाज की अनिवार्य इकाई हैं। जब तक मनुष्य व्यक्ति है, उसकी रूचि में विभिन्नता है तब तक समाज में एकाधिक वर्गो, संप्रदायों का होना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। जब तक मनुष्य के पास मस्तिष्क है, उसमें चिंतन और मनन की शक्ति है तब तक विचार भेद रहेगा। इस विचार भेद और रूचि–भेद की मनुष्य रक्षा भी चाहेता। इसी के लिए वह उन लोगों का साथ ढूंढेगा जो उसके विचारों से सहमति रखते हों। मनुष्य की इसी समान या साथ खोजने की सहजवृत्ति ने ही संप्रदायवाद को जन्म दिया है। आज विश्व का हर देश, हर समाज, विभिन्न जातियों और सांप्रदायिक संगठनों से बँधा है। भारतीय समाज में तो यह जाति–प्रथा तब से है जब से मनु ने समाज के वर्णो की कल्पना को प्रस्तुत किया। इसलिए भारत में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्रों के जाति समूह तो हैं ही, जाट, बनिया,सनातनी, आर्यसमाजी, नामधारी, खालसा, सिया–सुन्नी, आदि अनेक वर्ग विभाग भी है, जिनमें आये दिन संघर्ष होता है परन्तु उतना नहीं जितना हिन्दुओं और मुसलमानों में देखा गया है। इतना विरोध केवल धार्मिक मतभेदों के कारण नहीं अपितु दोनों की एक–दूसरे के प्रति असहिष्णुता सदियों के इतिहास का फल है। मुसलमानों ने भारत में आकर जो लूट–खसोट की, हिन्दुओं को दारूण यातनायें दीं, राजनीतिक दृष्टि से हिन्दुओं पर जो अत्याचार किये, हिन्दु–धर्म को मिटाने के लिए जो बर्बरतापूर्ण कार्य किये, उन सबके फलस्वरूप हिन्दु और मुसलमानों में एक ऐसी

खाई उत्पन्न हो गयी जिसे न तो कबीर के राम–रहीम की एकता की ल्पना पाट सकती है और न ही बापू का अल्लाह–ईश्वर का मधुर जाप।

४.८ : सामाजिक पृष्ठभूमिका

अंग्रेजी शासन के पूर्व भारतीय समाज ग्रामों से भरा किंतु आत्मनिर्भर समाज था। सभी कामों का उचित बटवारा हो गया था। पूरे गाँव पर ग्राम–पंचायत का नियंत्रण रहता था। इसी व्यवस्था से ग्राम जीवन बंधा था। समाज में स्त्रियों को भी कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं था। पूरा ग्रामीण जीवन वर्णव्यवस्था, जातिभेद तथा जाति और वर्ण भेद का आधार पर काम करने वालों पर निर्भर था। इसी से परिणामस्वरूप स्पृश्यास्पृश्य भेद हमेशा बना रहता था। ऊँच–नीच की भावना ने जोर पकड लिया था। इसी वजह से समाज अंधविश्वास, अज्ञान से युक्त था।

अंग्रेजों ने भारतीयों को शिक्षा देना शुरू किया था, मगर वह सिर्फ सस्ते कल्कों के निर्माण हेतु ही। भारतीय संस्कृति को नष्ट कर उसे पाश्चात्य साँचे में ढालने का का इस शिक्षा ने किया। शिक्षित वर्ग रूढियों तथा परंपराओं से मुक्ति पाने का प्रयत्न करने लगा। समाजशास्त्रियों की दृष्टि से समाज के दो आधार स्तंभ पहला संगठनगत और दूसरा वैचारिक स्वीकार किये गये है। पहले में सामाजिक संस्थाएँ; वर्ग तथा दूसरे में रीति–रिवाज, प्रथाएँ, परंपराएँ, मान्यताएँ आदि जाती हैं। औद्योगीकरण के कारण लोग शहरों की ओर दौडने लगे। परिणामस्वरूप मध्यवर्ग का उदय हो गया। जाति–पाति के बंधन शिथिल होने लगे। पूँजीपतियों के एक नवीन वर्ग का उदय हो गया। इतना सब विकास होने के लिए जिन सामाजिक सुधार संस्थाओं, विचारवंतों तथा आंदोलनों ने समाज को सुधारने के प्रयास किये, इनके संबंध में डॉ. हेमेंद्र कुमार पानेरी कहते हैं– ''बीसवीं शताब्दी का प्रारंभिक काल सुधार संस्थाओं का युग था। १९०५ ई. मे. गोपालकृष्ण गोखले द्वारा संस्थापित 'भारत सेवक समाज' ने समाज सेवा एवं देश सेवा को अपना लक्ष्य बनाया। नारी शिक्षा, मजदूरों में सहकारी आंदोलन आदि को प्रोत्साहन देते हुए हिंदू कार्यकर्ताओं द्वारा मुस्लिम बस्तियों में सफाई करवाकर सांप्रदायिक खाई पाडने का प्रयत्न किया''[५३] समाज सुधार कार्य करने वाली संस्थाओं से परिचित होना उचित होगा।

४.८१. : ब्रह्म समाज

सन् १८१२ ई. मे. राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना की। वे मूर्तिपूजा का विरोध करते थे और एकेश्वरवाद को मानते थे। उन्होंने सभी धर्मों एवं धर्मग्रंथो के प्रति आदरभाव रखने के लिए कहा। अत्यंत प्रगत विचारों वाले केशवचंद्र सेन जिन्होंने स्त्री शिक्षा, बाल विवाह, प्रतिबंध, विधवाओं के पुर्नविवाह तथा आंतरजातिय विवाह को प्रोत्साहन आदि अनेक समाज सुधार के कार्य उन्होंने किये। सन् १८५१ के पश्चात् इस संस्था में प्रवेश कर उन्होंने मुंबई में प्रार्थना समाज की स्थापना की।

४.८.२ : प्रार्थना समाज

सन् १८६७ ई. में प्रार्थना समाज की स्थापना हो गयी। इस संदर्भ में डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्गजी ने लिखा है– ''केशवचंद्र सेन की ही प्रेरणा से १८६७ में 'प्रार्थना समाज' के नाम से, जो कि ब्रह्म समाज की ही प्रति छाया थी, एक समाज स्थापित हुआ जिसका नेतृत्व महादेव गोविंद रानडे ने किया। प्रार्थना का उद्देश्य ही वर्णव्यवस्था तथा बाल विवाह को समाप्त करना तथा विधवा विवाह एवं स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन देना था।''[५४] यह समाज मूर्तिपूजा का विरोध तो करता था लेकिन ईश्वर को सगुण मानता था।

४.८.३ : आर्य समाज

स्वामी दयानंद सरस्वती ने पंजाब में सुधार के लिए आर्य समाज की स्थापना की। उन्होंने वेदों को महत्व दिया और वेदों के समय जैसी समाज रचना पर बल दिया था। उनकी धारणा थी कि जाति जन्म के आधार पर न होकर कर्म पर आधारित होती है। धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से भारत में ऐक्य निर्माण करने का कार्य भी उन्होंने किया।

४.८.४ : रामकृष्ण मिशन

पैार्वात्य और पाश्चिमात्य विचारों में समन्वय लाने का कार्य रामकृष्ण मिशन ने किया। यह एक आध्यात्मिक किंतु लोकसेवी संस्था थी। रामकृष्ण परमहंस के नाम से ही इसे 'रामकृष्ण मिशन' नाम पड गया। रामकृष्णजी का मूर्तिपूजा पर विश्वास था। विद्यासागर और केशवचंद्र सेन जैसे आधुनिक विचारवादी भी उनके प्रति आकर्षित हो गये थे। स्वामी विवेकानंद रामकृष्ण परमहंस के परमशिष्य थे।

४.८.५ : थिओसफीकल सोसायटी

थिओसोफीकल सोसायटी की स्थापना इ.स. १८७५ में मैड्म व्लेव्हाटस्की और कर्नल ओटकोट ने न्यूयॉर्क में की थी। नयनतारा सहगल ने लिखा है– 'थिओसोफीकल सोसायटी ने हिंदुओं के मूलभूत आदर्शो को स्वीकार किया और आयरिश महिला अेनी बेसंट ने अपने व्याख्यानो, स्कूलों की स्थापनाओं आदि के माध्यम से इसका प्रसार किया।

अँनी बेसंट ने सन् १८३९ ई. में भारत थिओसोफीकल सोसायटी की स्थापना की। इसके विश्व बंधुत्व और सत्य की खोज ये दोनों उद्देश्य थे। जातिभेद, धर्मभेद न मानना और सभी धर्मो का तुलनात्मक अध्ययन कर जो हमें अच्छा लगे, वही ग्रहण करना इस संप्रदाय का मत था। लेकिन यह ग्रामों तक नहीं पहुँच पाया। सिर्फ उच्च वर्ण ही इससे लाभ हासिल कर सका।

"The search for a common ideal in which all Hindu sects could believe was carried on by the Theosophical society, too and Theosophists led by an Irish woman Anni Besant [1847-1933] spread their teaching through pamphlets lectures and the founding of schools and colleges."(55)

इतनी सारी सामाजिक संस्थाओं ने समाज सुधार के कार्य में अपना योगदान दिया। राजाराम मोहन राय के प्रयासों से ही सतीप्रथा बंद हो गयी तथा विधवा पुर्नविवाह की मान्यता मिली इन दोनों के लिए कानून बनाया गया। व्यक्तिगत रूप से भी कई लोगों ने समाज सुधार के प्रयास किये हैं। इनमें महाराष्ट्र के बालशास्त्री जांभेकर (दर्पण साप्ताहिक), दादोबा पांडुरंग (परमहंस सभा), विष्णुशास्त्री पंडित (इंदूप्रकाश पत्रिका, विधवा पुनर्विवाहोत्तेजक मंड्ल), न्यायमूर्ति रानडे, पंडिता रमाबाई (शारदा सदन संस्था), महर्षि घोंडो केशब कर्बे (निष्काम कर्मठ, अनाथ बालिकाश्रम) आदि ने अपना योगदान दिया।

४.८.६ : सामाजिक पृष्ठभूमि :

स्वातंत्र्योत्तर काल में समाज की स्थिति अत्यंत विकट बन गई दिखाई देती है। सामान्य, लोगों का जीवन अब अत्यंत व्यस्त रहने लगा। समाजिक संस्थाओं के विविध कार्यो की वजह से कई तरह की रीति–रिवाजों पर पाबंदियाँ लगाई गई थी। इस काल में भी सती–प्रथा, दहेज–प्रथा, जैसे प्रथाएँ प्रचलित रही। इसमें कुछ प्रथाएँ तो आज भी हमारे देश में प्रचलित हैं। चाहे अंधविश्वास पर कितनी ही

टिप्पणियाँ क्यों न प्रस्तुत की गई हो, आज भी समाज अंधविश्वास से ग्रस्त दिखाई देता है। इस काल में यह अत्यंत तीव्रता के साथ पाया है कि शुद्रों की जो स्थिति पहले थी अब वैसी नहीं रही। डॉ. आंबेड्कर जैसे लोगों की वजह से शुद्रों को समाज में उनका स्थान मिल रहा है।

आधुनिक मात्रा में लोक शहरों की ओर भागने लगे इसी कारण परिवारों का विघटन होता गया। इन विभक्त परिवारोन की भी अपनी–अपनी समस्याएँ देखी जा सकती हैं। इन्हीं की वजह से शहरों में मकान की समस्या निर्माण हो गई है। इस काल में लोगों में जागृति लाने के लिए ढेर सारे प्रयास किए गए लेकिन कई बार अशिक्षा की वजह से सारे प्रयास विफल साबित हुए हैं। इन काल के समाज में मनुष्य की मानवतावादी दृष्टि अत्यंत कम होने लगी। पडोसी–पडोसी के काम आने के बजाय उसे गढ्ढे में धकेलने की प्रवृत्ति आज बढने लगी हैं। इस प्रकार हम यह पाते है कि समाज में मानवता का ह्रास लगा है। किसी को भी आज किसी के प्रति अपनापन नहीं रहा है। हर एक व्यक्ति में दूसरे के प्रति अनास्था का भाव जागृत हो गया है।

स्वातंत्र्योत्तर कालीन औद्योगिकरण तथा बढती हुई महानगरीय संस्कृति के कारण समाज में प्रचलित दो वर्गो में एक वर्गो में एक और वर्ग जुड गया और वह है मध्यवर्ग। यह वर्ग हमेशा उच्च वर्ग में प्रवेश करने के लिए लालायति रहता है और निम्न वर्ग के लोगों को हेय समझता है।

अनेक सामाजिक संगठनों के कारण इस काल में नारी का ध्यान शिक्षा की ओर जाने लगा। नारी शिक्षा ग्रहण कर अपने पैरों पर खडी होने लगी दिखाई देती है। लेकिन वह चाहे कितनी भी शिक्षित क्यों न हो आज भी उसके बारे में 'अबला' शब्द का प्रयोग किया जाता है। आज उसे हिन नजर से देखा जाता है। ऐसा कहा जाता है कि नारी जागृत हुई लेकिन उसकी यह जागृतावस्था सिर्फ क्लब में जाकर ताश खेलने तक ही सीमित हैं।

आ. रजनीश इस संदर्भ में अपने 'ओशो टाईम्स' में लिखते हैं– ''नारी मुक्ति आंदोलन सही अर्थो में क्रांतिकारी नहीं है। वह सहज प्रतिक्रिया है। और प्रतिक्रिया से कुभ भी नहीं मिलता, सिवाय हताशा और असफलता के। फिर भी बहुत सी स्त्रियाँ अभी तक उसी का झंडा लेकर धूम रही है, क्योंकि उनके पास विकल्प नहीं है।[५६]

स्वातंत्र्योतर युगीन समाज जीवन अत्याधिक भ्रष्ट बनता जा रहा है। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद मनुष्य अधिक अनुशासनहीन बन रहा है। परिणाम स्वरूप समाज में आज भ्रष्ट लोगों का बोलबाला दिखाई देता है। आज कल समाज के सामने किसी भी प्रकार का कोई आदर्श ही नहीं रह गया है। आज

राजनीति को भ्रष्टाचार का पर्याय मान लिया जाता है। इसी वजह से पूरा समाज सिर्फ आर्थिक दृष्टि से ही नहीं बल्कि राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक आदि दृष्टियों से भी पतन के रास्ते पर चल रहा है।

स्वाधीनता के पश्चात् भारत में सांप्रदायिकता बढ गयी। धर्म के नाम पर आतंक फैलाने वाले लोग जबरदस्ती हत्याओं का भय दिखाकर लोगों से कुछ भी करवाते हैं। इस आतंकवाद की वजह से सामान्य आदमी की स्थिति दिन–ब–दिन दयनीय और भयाक्रांत बनती जा रही है। लेकिन ऐसी स्थिति में भी कई सामाजिक संस्थाओं ने समाज सुधार के लिए कई प्रयास किये। दहेज–प्रथा, बाल–विवाह, अनमोल–विवाह आदि को रोकने के लिए कदम उठाये। अन्य भी कई तरह की महामंड्ल की स्थापना की गयी। ३० अक्टूबर, १९५९ में पहला, दूरदर्शन केंद्र शुरू हो गया। सन् १९५३ में आदिवासी विकास महामंड्ल की स्थापना हो गयी।

इस प्रकार हम पाते है कि स्वातंत्र्योत्तर काल में समाज कई तरह से विकसित होता जा रहा है। चाहे औद्योगिकता के फलस्वरूप काल में समाज कई तरह से विकसित होता जा रहा है। चाहे औद्योगिकता के फलस्वरूप परिवार–विघटन, मध्यवर्ग का निर्माण, भ्रष्टाचार जैसी कई समस्याएँ निर्माण हो गयी हो, फिर भी स्वतंत्रता से पहले समाज की जो स्थिति थी उसमें कई संस्थाओं के निर्माण की वजह से विकास होता जा रहा है जिसे नकारा नहीं जा सकता।

४.८.७ : धार्मिक पृष्ठभूमि

स्वातंत्र्योत्तर काल में धर्म की स्थिति में तरह–तरह के परिवर्तन आये हैं। शिक्षा की वजह से लोगों में अब जनजागृति होने लगी और प्राचिन रूढि, परंपराएँ आदि को लोग मानने से इन्कार करने लगे। स्वतंत्र्योत्तर काल में अधिकत्तर वैचारिक जागृति के कारण लोग अंधश्रद्धाओंको अब त्यागने लगे। उस पर से तरह–तरह के कानून बनने लगे जैसे सति प्रतिबंध कानून आदि, जिसकी वजह से धार्मिक दृष्टि से लोगों के विचारों में परिवर्तन कर दिया। लेकिन कुछ राजनेताओं ने लोगों की धार्मिकता को ललकारा और अपनी कुर्सी हासिल करने के प्रयास किए। इसी वजह से धार्मिक संघर्ष छिड गया। स्वातंत्र्योत्तर काल में इसी वजह से कई बार हिंदू–मुसलमानों में झड्पे हो गई।

इस प्रकार हम देखते है कि लोगों की धार्मिक भावना से सबसे अधिक फायदा राजनेता ही उठाते है। लेकिन इतना होने के बावजूद भी आज समाज पूरी तरह से अंधश्रद्धा से मुक्त नहीं हो गया

है। आज जब हम २१ वी सदी की ओर बढ रहे हैं तब भी हमारे बीच कई ऐसे लोग मौजूद हैं, जो अंधश्रद्धा और रूढियों में झकडे हैं।

४.८.८ : आर्थिक पृष्ठभूमि

भारतीय अर्थव्यवस्था का ढाँचा पहले से ही लडखडता रहा हैं क्योंकि अंग्रेजी ने ही इसे कमजोर बताया है। फिर भी आर्थिक दृष्टि से विकास करने के काफी प्रयास भारत में किए गए। डॉ.सिस्टर क्लेमेनट मेरी ने लिखा है– ''स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद का राष्ट्रीय जीवन नए राष्ट्रीय लक्ष्य की ओर राज्यों के विलीनीकरण, जमीदार प्रथा के अंत, अस्पृश्यता निवारण, भूमि सुधार सहकारी खेती, पंचवार्षिक योजनाओं, तलाक विल, हिंदु कोड बिल, दहेज विरोध विल, तटस्थता, पंचशील और सह अस्तित्व पर आधारित विदेश नीति, विश्वशांति में सक्रिय सहयोग आदि एक के बाद एक उठे राष्ट्रीय तथा सांप्रदायिक दंगो तथा तजन्य समस्याओं, कश्मीर पर पाकिस्तान आक्रमण और उतरी सीमा पर साम्यवादी चीन के आक्रमण, गतानुगत मान्यताओं और संस्कारों, आंत्तरिक वर्ग हितों और स्वार्थो तथा विरोध विचारों के टकराव, अनावृष्टि के दैनिक प्रकोपों आदि के अवरोधों के परस्पर संघर्ष जीवन हैं।''[५७]

सन् १९५१ से पहली पंचवर्षीय योजना की शुरूआत हो गई। इन पंचवर्षीय योजनाओं की शुरूवात पं.जवाहरलाल नेहरू ने की थी। अत: हम ९वी पंचवर्षीय योजना के तहत देश का विकास करने में जुटे हुए हैं।

पंचायत राज योजना की शुरूआत वैसे तो देर से हुई लेकिन पहले सन् १९५७ में वलवंतराय मेहता समिति की स्थापना पंचायत राज अमल में लाने के लिए की गई थी।

प्राकृतिक विपत्तियों के कारण भारत को कई बार आर्थिक नुकशानों का सामना करना पडा है कभी सूखा तो कभी अतिवृष्टि आदि। सन् १९६७ में कोयना के आसपास बहुत बडा भूचाल आया। सन् १९७१ में भारत में अकाल पडा था। १९९४ में महाराष्ट्र में किल्लारी और आस–पास का प्रदेश भूकंप की चपेट में आ गया। आंध्रप्रदेश, तमिलनाडू, आदि प्रदेश तो हमेशा ही बाढ की लपेट में आते रहते हैं। पूरी तरह से प्रकृति पर आधारित होने के कारण भारतीय किसान को इन विपत्तियों से लडना पडता है।

स्वातंत्र्योत्तर कालखंड में अदरूनी झगडें को छोड्कर भारत को तीन बार विदेशी आक्रमणों का सामना करना पडा। सन् १९६२ में चीन, सन् १९६५ में और सन् १९७१ में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया। इन युद्धों की वजह से भारत की आर्थिक स्थिति डगमगा गई थी।

इस प्रकार की आर्थिक पृष्ठभूमि स्वातंत्र्योत्तर काल में भारत की रही।

४.८.९ : सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

स्वातंत्र्योत्तर काल में भारतीय संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति का काफी प्रभाव पडा हुआ दिखाई देता है। आज के युवा लोग भारतीय संस्कृति की अपेक्षा पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण करना ज्यादा पसंद करते हैं। इस संदर्भ में डॉ. सिस्टर क्लेमेंट मेरी ने लिखा है।– ''आधुनिक भारतीय समाज चिरंतन और शाश्वत में विश्वास नहीं कर सकता क्योंकि पश्चिमी संस्कृति के संघात तथा नए ज्ञान–विज्ञान ने उसे नई कर्म शीलता तथा नई प्रेतिवादिता प्रदान की है।''(५८)

सांस्कृतिक विकास में सबसे महत्वपूर्ण घटना सन् १९५१ में घटित हो गई। पहले आशियायी खेलों का आयोजन सन् १९५१ में दिल्ली में हो गया था। सन् १९८२ में फिर से यही स्पर्धा दिल्ली में हो गई। ३० अक्टूबर, १९५९ में भारत का पहला दूरदर्शन केंद्र शुरू हो गया और २ अक्टूबर, १९७२ को मुंबई दूरदर्शन की शुरूआत हो गई।

सन् १९६९ से महाराष्ट्र शासन की ओर से खेल में छत्रपति पुरस्कारों की शुरूआत हो गई। सन् १९८० के ओलंपिक में भारत को स्वर्णपदक मिला। सन् १९८३ में भारत ने क्रिकेट का 'प्रुडेंशिअल कप' जीत लिया।

अत: हम यह कह सकते है कि स्वातंत्र्योत्तर काल में भारतीय समाज में चाहे खेल–कूद के क्षेत्र में हो, चाहे दूरसंचार माध्यमों के क्षेत्र में हो, सभी क्षेत्रों में एक क्रांति ही मच गई। हालाँकि यह भी सच है कि पाश्चात्यों के अंधानुकरण देश की आर्थिक स्थिति को दुर्बल करने वाले कुछ कार्यक्रम भी चलाए गए जिसका बोझ आम जनता पर पडा।

४.८.१० :साहित्यिक पृष्ठभूमि

स्वातंत्र्योत्तर काल में हिंदी साहित्य धीरे–धीरे विकास की ओर बढता जा रहा है। उत्तर स्वच्छंदतावाद कालखंड के पश्चात् हिंदी साहित्य में कई नए आयाम देखने को मिलते हैं। ये नए आयाम

नई कविता, नई–अविता नई–कहानी के रूप में विकसित हो गये। सबसे अधिक जो बाद हिंदी साहित्य में इस कालखंड में आए उसमें– मनोविश्लेषणवाद प्रमुख है। मनुष्य का मन एक जटिल गुत्थी है। उसे सुलझाने का प्रयास किया जाने लगा। विज्ञान के संदर्भ में जो साहित्य लिखा गया वह विज्ञानवाद के अंतर्गत आता है। यथार्थता का नग्न रूप यथार्थवाद में आज कल दिखाई देता है। लेकिन आज कल के साहित्यिक अधिकतर सामाजिक संदर्भो से युक्त हेसा लिखना पसंद करते है। लेकिन आधुनिक काल की साहित्यकारों की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि हम उन्हें किसी विशेष कोटी में नहीं ढाल सकते हैं। एक ओर साहित्य के क्षेत्र में नए–नए प्रयोग किए जा रहे है जैसे राजेंद्र और मन्नु भंडारी का 'एक इंच मुस्कान' उपन्यास, धर्मवीर भारती द्वारा लिखित 'सूरज का सातवाँ घोडा' उनके अन्य साथियों ने लिखा 'ग्यारह सपनो का देश' उपन्यास, देवेश ठाकुर का 'काँचघर' तो दूसरी ओर प्राचीनता शैली में लिखने वाले साहित्यकार भी कम नहीं है। नए–नए प्रयोगों के साथ ही प्राचीनता को खिंचा जा रहा है। इसी वजह से उन साहित्यकारों को एक विशेष कोटि में रखना कठिन है।

अर्थात हम यह कह सकते है कि स्वातंत्र्योत्तर काल का साहित्य एक अजीब तरह की कश्मकश में पड गया न तो वह पूरी तरह से आधुनिक हो पाया है और नही पूरी तरह से प्राचीन। इस घेरे से बाहर निकलने के लिए शायद साहित्य को भी कई साल लगेंगें।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि स्वातंत्र्यापूर्व दोनो ही कालखण्डो की परिस्थितियों में काफी अंतर देखने को मिलता है। राजनीतिक क्षेत्र में स्वाधीनता से पहले इतना भ्रष्टाचार, स्वार्थनीति नहीं थी जितनी आज दिखाई देती है। राजनितिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण घटनाएँ भी स्वतंत्रता से पहले घटित हुई है जिनसे हम आज भी प्रेरणा प्राप्त करते है। सामाजिक जीवन में जातिभेद, वर्ण, नारी को गौण स्थान, नारी पर कडे बंधन, स्वतंत्र्यापूर्व समाज में प्रचलित थे लेकिन आज वे कम होते दिखाई देते है। साथ ही समय प्रचलित अंधश्रद्धा, कुप्रथा, रूढि–परंपरा आदि बातें भी नष्ट हो रही है। इसके विपरीत आज समाज में भ्रष्टाचार, रिश्वत, झोपडपट्टी समस्या, बेरोजगारी जैसी समस्याएँ बढने लगी है।

स्वातंत्र्यपूर्व कालखंड में धार्मिक दृष्टि से लोगो को जितना फँसाया जाता था, आज भी उतना ही चाहे फँसाया क्यों न जाता हो, लोगो की श्रद्धा में कोई अंतर नहीं आया है। आर्थिक दृष्टिसे स्वातंत्र्यपूर्व कालखंड में अंग्रेजों ने भारत को उन पर निर्भर बना दिया था परंतु आज भारत एक विकासशील देश हैं। और अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारन का प्रयास वह कर रहा है। स्वातंत्र्यपूर्व कालखंण्ड की तुलना में स्वातंत्र्योत्तर कालखंण्ड में सांस्कृतिक क्षेत्र में विकास कम हुआ है। साहित्य के

क्षेत्र में हिंदी साहित्य स्वाधीनता से पहले एक उच्च शिर्ष पर प्रतिष्ठित हुआ और आज उसका विकास होने लगा है।

इस प्रकार हम यह पाते है कि, स्वातंत्र्यपूर्व कालखंण्ड की अपेक्षा कुछ ही क्षेत्रों में स्वतंत्र्योत्तर कालखंड में विकास पाया जाता है।

४.९ : कहानियों में समाज दर्शन

भीष्मजी सामाजिक चेतना सम्पन्न प्रगतिशील कहानीकार है। उनकी कहानियाँ में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक सभी तरह की समस्याओं का प्रतिपाद्य किया है। कहानियों की समस्याओं में मानसिक तनाव, टूटन– घूटन, जीवन–संघर्ष का चित्रण तो है तो दूसरी ओर उच्चवर्ग या पूँजीपति वर्ग की शोषण व्यवस्था के प्रति आक्रोश एवम् सामाजिक विषमता के प्रति गहरा दु:ख भी व्यक्त है। साहनी जी एक ऐसे कहानी जगत के स्वनाकार है जिन्होंने देश विभाजन की घटना अपनी आँखो से देखी है। इसलिए उनकी अधिकांश कहानियाँ उस समय और घटना तथा परिवेश में बार–बार लौट जाती है जिसका सम्बन्ध हमारे देश के बँटवारे से है। उनकी हर महत्वपूर्ण कहानी में पंजाब केन्द्रस्थान पर है। उन्होंने पंजाब तथा पंजाब के आसपास के गाँवो और महानगरों में बसने वाले निम्न और मध्यवर्गीय लोगों की पूरी जीवंतता के साथ अपनी कहानियों का विषय पसंद किया है। सभी कहानियों में ग्राम संस्कृति, सगाई का प्रसंग, शासकीय कचेरी, पूजा पाठ, सांप्रदायिक दंगे, रेल की यात्रा, राजनीतिक पार्टियाँ, जुलूस, शोभायात्रा, अस्पताल, विवाह का प्रसंग, अंधश्रद्धा जैसे प्रसंगो को उन्होंने अपनी कहानियों में बडी प्राणवत्ता के साथ चित्रित किया है।

आज की कहानी की उपलब्धियों को युगीन चेतना के निष्कर्ष पर ही परखा जा सकता है। साहित्य की किसी भी विद्या की उपलब्धि उसकी संपूर्ण व्यापकता में हिति है। यह व्यापकता ऐतिहासिक और सामयिक बांध के संधर्ष से उत्पन्न परिप्रेक्ष्य में अभिव्यक्त होती है। स्वतंत्रता के पश्चात् देश की जनता एक नये परिवेश में साँस लेने लगी थी। नई परिस्थितियों के गति रचनाकारों ने प्रारंभ में तो उपेक्षा बरती लेकिन कब तक व्यक्ति की आंतरिक स्थिति को व्यापक सामाजिकता से काटकर रचना में रूपायित किया जा सकता है? स्वतंत्रता के बाद देश की पूँजी समाज के कुछ लोगों की मुट्ठी में बंद हो गई और देश की जनता का हक बडा हिस्सा अभावों का शिकार होने लगा। उसे ऐसे मोड पर ला खडा किया गया जहाँ से उसके विद्रोह करने के तमाम रास्ते बंद हो जाते हैं। इसी अन्याय के विरूद्ध आवाज

उठाने का सशक्त माध्यम बना ''साहित्य''। साहित्य समाज का प्रतिबिंब प्रस्तुत करता है। गई कहानी सामाजिक जीवन की पहचान की कहानी है। वह जीवन के भोगे हुए यथार्थ पर बल देती है। अत: नए कहानीकारों ने जीवन की कड्वी सच्चाईयो को अनुभूति के स्तर पर प्राथमिकता देकर बडी तीव्रता के साथ उभारा है। आज के कहानीकार के विषय में डॉ. रामदशरथ मिश्र का कहना है–''आज का कहानीकार आज के कवि के समान ही जीवन को उसकी संनिष्ठता और जटिलता में पकड पाने और आकार देने के लिए आकुल है। यह यथार्थ जीवन का कलाकार होना चाहता है। वह मिथ्या आदर्शो और नैतिकता में विश्वास करना छोड चुका है, क्योंकि वह उसके सतत शून्य परिणामों से अवगत हो गया है। ऐसी भी नहीं है कि आज का कहानीकार सुन्दर जीवन या उच्च कोटि के मानव मूल्यों को नहीं चाहता। वह चाहता है परन्तु वह यथार्थ जीवन के आधार पर प्रतिष्ठित मानव मूल्यों या सुन्दर जीवन की खोज में है। यदि वह नहीं मिल पाता तो वह सुन्दर लाक्षागृह नहीं तैयार करना चाहता जो एक हलकी–सी आँच से ही पिघल जाए और अपने बीच निवास करने वालों को भस्म कर बैठे।''[५९] नई कहानी में सामाजिकता का नया स्वर मुख्य हुआ। पुराने कहानीकारों की तरह नए कहानीकारों की यह सामाजिकता केवल औपचारिक या सतही नहीं थी। गहरी आत्मीयता से युक्त ऐसी सामाजिकता है जो व्यक्यि से प्रारंभ होकर अन्त में समाज से जुड्ती है। नई कहानी में व्यष्टि से समष्टि की ओर निष्ठावान प्रयाण है और सत्य है। संभवत: ऐसा इसलिए हुआ की कहानियों में जीवन का एक खण्ड अर्थात् कोई एक लघु प्रसंग या समाज की कोई एक समस्या ही कथानक बन गई है। जीवन के जो पक्ष पुराने कहानीकारों से अनछुए रह गए थे, वे ही पक्ष नई कहानियों में उद्घाटित् हुए है। कहानी की भाषा के विषय में डॉ. नामवरसिंह के विचार भी उल्लेखनीय है– ''भाषा इधर की कहानियों की काफी बदली है, यह भी कह सकते है कि मेंजी है। यहाँ तक कि हिन्दी गद्य का अत्यंत निखरा हुआ रूप आज की कहानी में ही सबसे अधिक मिलता है। कहानी में एक भी फालतू शब्द न आए, इसके प्रति आज का लेखक बहुत सतर्क है और यह शुभ लक्षण है।''[६०] साहित्य के रूप केवल रूप नहीं है बल्कि जीवन को समझने के भिन्न भिन्न माध्यम है। एक माध्यम जब चुकता दिखाई पड्ता है, तो दूसरे और समाज में है व्यक्ति की यह सामाजिक पहचान उसकी किसी भी उपलब्धि से अधिक महत्वपूर्ण है।

साहनीजी लिखित कहानियों में पहली कहानी से लेकर अंतिम कहानी तक उत्तरोतर विकास हुआ है। उनकी प्रारंभिक कहानियों में ''घटना बहुलता और सम्बन्धो में संक्रमण की पहचान मुख्य है।[६१] लेकिन वे उत्तरोतर कहानी को यथार्थ के धरातल पर रखकर समाज की विडम्बनाओं को

अंतर्विरोधो के साथ प्रस्तुत करते है। व्यक्तिगत और सामाजिक आन्तर्विरोधो को पकड्ने की यह कला उनमें बहुत विकसित हुई है। अब हम साहनीजी की कहानियों की सामाजिक दृष्टिकोण से चर्चा करेंगे।

४.१० : समाज दर्शन के संदर्भ में वस्तु विश्लेषण

साहनीजीकी कहानियाँ तरह–तरह से अंतर्विरोधों विडम्बनाओं और त्रासदियों से भरी है। उनकी कहानियों को वर्ग की दृष्टि और समस्याओं की दृष्टिसे वर्गीकृत करेंगे।

(१) उच्चवर्ग (२) मध्यवर्ग (३) निम्नवर्ग (४) धार्मिक अंधश्रध्धा (५) छूआछूत (६) पूँजीवादी व्यवस्था (७) सांप्रदायिक दंगे (८) राजनीतिक (९) संन्यासी मार्ग (१०) सामाजिक समस्या (११) लोककथा

साहनीजी की कहानियों को उपर्युक्त विभाग में स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे। साहनीजी की सीधी, सच्ची और वास्तविक अनुभूतियों को अपनी पहली कहानी 'नीली आँखे' से लेकर अंतिम कहानी 'आई गई बात' तक की कहानियों में ईमानदारी से अंकित किया है। उन्होंने पहली कहानी सोलह वर्ष की उम्र में लिखी थी, जो 'हंस' में प्रकाशित हुई थी। इस कहानी के सम्बन्ध में स्वयं कहते हैं– ऐसा हुआ कि मैं उन किनों रावलपिंडी में था। अपने पिता के साथ व्यापार में काम करता था। एक दिन लौटते वक्त एक घटना घटी। भीड एकत्र थी। भीड के वक्त एक लड्की धिरी खडी थी। पास ही एक अस्पताल था जिसके बरामदे पर एक बीमार युवक बैठा था। दोनों मेहनत–मजदूरी करने वाले थे। गाँव से भागकर आए थे। लड्की के लिए सिर छुपाने लायक जगह नहीं थी। भीड में से कुछ छेड–छाड कर रहे थे। मैं भी खडा हो गया। इस घटना को लेकर 'नीली आँखे' कहानी लिखी।[६२] मनुष्य का जीवन सामाजिक ढाँचे में ढला हुआ है और सामाजिक ढाँचा आर्थिक ढाचे पर। अर्थ मनुष्य जीवन का मूलाधार है। पेट पालने के लिए आदमी को पैसो की आवश्यकता होती है। किन्तु अथर्वभाव भारतीय समाज की भयंकर समस्या है। शिष्टाचार कहानी वर्तमान समाज में अपने को सभ्य, शिष्ट और सुसंस्कृत माननेवाले सफेदपोरा मध्यवर्ग की तुलना में अशिष्ट, असभ्य और असंस्कृत करार दिया जाने वाला निम्नवर्ग शिष्ट, सभ्य और सुसंस्कृत है। तथाकथित बडो के छोटेपन तथा छोटों के बडप्पन को उभारनेवाली भीष्मजी की शिष्टाचार कहानी मध्यवर्ग की संकीर्ण मानसिकता पर करारा व्यंग्य करती है। समाज का उपेक्षित निम्नवर्ग जहाँ एक ओर अपनी अभावग्रस्त दारूण परिस्थितियों से त्रस्त है, वही दूसरी ओर समाज के संपन्न एवं भद्र समाज की उपेक्षा, घृणा और निर्ममता का शिकार भी है। 'गंगो का

जाया' एक ऐसे ही दीनदु:खी श्रमिक दम्पति की विडम्बना की कहानी है जो कठोर श्रम करने के बावजूद अभाव और दारिद्रय का शिकार है। भारतीय समाज में निम्नवर्ग सदासे शोषित रहा है। अर्थाभाव से पीडित आज के नवयुक्क की लाचारी, बेबसी और उसमें भी हवस से पीडित आज के पुरूष की घटिया जनरिये का जीता जागता नमूना साहनीजी की कहानियों में है। स्त्री की सामाजिक असुरक्षा की पृष्ठभूमि में सामूहिक प्रतिक्रियाओं को कहानी में चित्रित किया गया है। निम्नवर्ग हमेशा शोषित एवं पीडित रहा है। इन पर होनेवाला अत्याचार, अन्याय, और उनकी समस्या का करूण चित्र 'निशाचर' कहानी प्रस्तुत करती है। निम्नलिखित उदाहरण निम्नवर्ग की लाचारी और बेबसी के साथ शोषण करनेवाले लोगो की जीवंत चित्र प्रस्तुत करता है– ''कुछ दिन ही पहले केसरो को पहुंचने में देर हो गयी थी, तो जमादार पहले से रद्दी कागज जलाकर बैठा आग ताप रहा था। उस दिन केसरो सिर से पाँव तक सिहर उठी उसकी ढेर सी रद्दी आँखो के सामने जलकर राख हो रही थी। केसरो का मन हुआ था, अभी भी निपटकर जाये और हाथ बढाकर जितनी रद्दी जलती ढेरी में से खींच सकती है, खींच ले। पर हरामी जमादार, आग तापना चाहता था, उसे देखते ही गालियाँ बकने लगा था। अभी वक्त रहते जो मिलता है, उठा लूँ और जमादार के आने से पहले ही यहाँ से निकल जाऊँ। जमादार का क्या भरोसा, उसके सामने रोते चिल्लाते गिडगिडाते भी रहे तो वह ढेरी में से रही नहीं उठाने देगा, बल्कि तुम्हारे झोले में से भी रद्दी निकालकर जलती आग में झोंक देगा।[६३] वर्तमान समाज व्यवस्था में इस वर्ग की विवशता है कि पीढी दर पीढी बिना थके मेहनत करते जाना, चाहे किसी भी तरह की स्थितियाँ क्यों न हो। 'भटकती राख' कहानी के बहाने भीष्मजीने अतीत के माध्यम से वर्तमान पर रोशनी डाली है। प्रस्तुत कहानी में साहनी जी की मूल्यवान स्मृति जुडी हुई है। झोपडो की दर्द भरी चीखें और कन्दन आए दिन उसे अपनी तरफ खीचते रहते है। इस क्रन्दन को हास्य में बदलते–बदलते एकदिन वह चक्कर चूर हो जाता है। डॉ. सुरैय्या शेख इस कहानी को ''प.नेहरूजी के वशीयत पर लिखी कहानी मानती है। ''इसमें राख पं. जवाहरलाल नेहरू की आत्मा का प्रतीक है। मृत्यु के पश्चात् भी नेहरूजी की आत्मा देश में सुख चैन देखने के लिए आज भी छटक रही है। इसी को भटकती राख कहा गया।[६४] वर्तमानयुगीन पूँजीवादी व्यवस्था में पैसे के बल पर उच्च वर्ग के लोग गरीब लोगों का शारीरिक और मानसिक शोषण करते है। इस तथ्य का प्रभावपूर्ण निरूपण 'सागमीट' कहानी में हुआ है।

निशाचर कहानी में साहनजी ने समाज के निम्न और उपेक्षित वर्ग के संघर्षो को केन्द्र में रखा है। महानगरो में जीवन जीनेवाले सर्वहारा वर्ग के संघर्ष को यह कहानी बडी मार्मिकता के साथ प्रस्तुत करती है।

सिफारिशी चिट्ठी कहानी एक निम्न मध्यवर्गीय कलक की भीरू मानसिकता तथा भविष्य के असुरक्षा भाव के साथ–साथ उच्च मध्यवर्ग की पोथी सहानुभूति को उभारती है। एक सफल कहानीकार के रूप मे, भीष्मजी की असली पहचान उनकी बहुचर्चित और बहुप्रसिद्ध कहानी चीफ की दावत से शुरू होती है। इस कहानी से उन्होंने कहानी आलोचना के पृष्ठो में अपनी जगह बनायी। 'चीफ की दावत' कहानी के अंतर्गत समाज के अंतर्विरोध और खोखलेपन को सूक्ष्मता से उद्घाटित किया है। 'पटरियाँ' कहानी में लेखक ने मानवीय विवशताओं, मजबूरियों तथा आर्थिक अभावों एवं हीन भावना से ग्रस्त मध्यवर्गीय व्यक्ति की छटपटाहट तथा कुण्ठा को कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त किया है। पटरियाँ का केशोराम अपने आप को कोसता है कि,''पहले भी मैं पैर घसीटता था, आज भी घसीटता हूँ। वर्षो से पैर घसीटता चला आ रहा हूँ। जिंदगी में कुछ बना बनाया नहीं है। सारी जिंदगी मिट्टी हो गयी है।[६५] मध्यवर्गीय परिवारो में पीढियों से चली आ रही मानसिकता का दिलचस्प चित्रण 'डायन' कहानी में हुआ है। लेखक ने शिमला प्रवास के दौरान टेक्सी ड्राइवर अपने घर में डायन बनकर आई भौजाई का किस्सा सुनाता है। इस कहानी में लेखक ने दर्शाया है कि समाज में डायन की कल्पना प्राचीन काल से जिस तरह मानी जाती है, आज भी लगभग वही रूप है। उसमें परिवर्तन नहीं आया।

उच्चवर्ग के लोग नौकरों को किस दृष्टि से देखते है इसका हूबहू चित्रण 'शिष्टाचार' कहानी में हुआ है। इस कहानी की श्रीमती जी नौकरो के बारे में सोचती है ''सब मक्कार, गलीच और लंपट होते है। किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। सभी झूठ बोलते है, सभी पैसे काटते है और सभी हर वक्त नौकरी की तलाश में रहते है, जो मिल जाए तो उसी वक्त घर से बीमारी की चिट्ठी मँगवा लेते है।''[६६]

भारतीय जन–जीवन में व्याप्त धार्मिक अंधश्रद्धा और अमानवीय उन्माद का यथार्थ चित्रण 'समाधि भाई रामसिंह' कहानी में हुआ है। कहानी धार्मिक अंधविश्वासोवाली मानसिकता को व्यापक धरातल पर खोलती है। वैसी ही अन्य कहानी में से एक है शोभायात्रा। बौद्धकालीन परिवेश का आधार लेकर लिखी गई 'शोभायात्रा' कहानी धर्म के नाम पर होनेवाले अत्याचार और बाह्याडंबरो को प्रस्तुत करती है। आज भी धर्म के नाम पर बनने ठनने, रोब जमाने और अधिकांशत: व्यय जो हो रहा है, वो

शायद भले ही राजनीति के माध्यम से दबाया जाय पर बलि चढाने की कु–प्रथा कभी न मिटने वाली है, और न ही मिट सकेगी। 'भाग्यरेखा' कहानी में लेखक ने भविष्य बताने वाले एक ज्योतिषी तथा दम से जर्जर मनुष्य के आपसी संवादो को रखकर इस तथ्य को रेखांकित किया है कि मनुष्य का भाग्य उसके हाथ की लकीरो में नहीं, उसके श्रम संगठन में है।

पहला पाठ नामक कहानी आर्यसमाज के विचार एवं जीवन पद्धति के अन्तर्विरोध को स्पष्ट करती है। समाज में व्याप्त जाति–पाँति के भेदभाव और लोगो की अन्ध श्रद्धा पर लेखक ने व्यंग्य किया है। गुरू वानप्रस्थीजी की दी हुई शिक्षानुसार अछूतों से प्रेम करना चाहिए। इसी सीख का पालन देवव्रत ने किया बस्ती के दीन हीन बालक को गले पडा तो उसने पूछा कि मेरा अपराध क्या है? गुरू ने जवाब दिया, ''यह अछूत है? यह तुझे अछूत नजर आता है? यह तो मुसलमान है?''(६७)

पूँजीवादी व्यवस्था के कारण 'खून का रिश्ता' धन के आगे बेकार हो गया है। वस्तुस्थिति यह है कि लोग अर्थ के पीछे पड्कर मानवीय सम्बन्धो को भूल रहे है। जिन्दगी के इस शास्वत यथार्थ की अभिव्यक्ति 'खून का रिश्ता' कहानी में हुई है। जिस व्यक्ति के पास धन–सम्पति नहीं है परिवार में तथा समाज में उसे सन्मान नहीं मिलता है। अर्थप्रधान समाज में एक मात्र समय धन है। 'पटरियाँ' कहानी हमारे समाज की इसी सच्चाई को प्रस्तुत करती है। कहानी का केशोराम इन बदलते सम्बन्धों को उजागर करते हुए अपने आप से कहता है कि ''पिछली बार जब वह अपने ससुर चोपडा साहिब से मिलने गया तो बाते करते हुए चोपडा साहिब ने अपना पैर उठाकर उसकी कुर्सी पर रख दिया था, उसे जताने के लिए कि वह उसकी हैसियत को समझते हैं। क्या वह इस तरह की बात अपने बडे यामाद के साथ ही करेंगे।''(६८)

सांप्रदायिकता आज के भारत की सबसे भयानक त्रासदी है, जो मानव–मानव के बीच भेद रखती हुई आज भी उसी सर्वग्रासी रूप में खडी है, जो आजादी के समय थी। हिंसा और मतभेद का रूप धारण करके सांप्रदायिक माहौल को उजागर करनेवाली भीष्मजी की 'अमृतसर आ गया है' कहानी कौमवादी जनमानस की इसी भयावहता को चित्रित करती है। मध्यप्रदेश के प्रसिद्ध लेखक जहूर बखश के जीवन में घटी अत्यंग त्रासद घटना को प्रस्तुत करने वाली 'जहूर बखश' कहानी एक सच्ची घटना पर आधारित है। स्वयं भीष्मजी ने कहानी के अंत में इसका उल्लेख किया है। 'पाली' कहानी में उस इंसानी रिश्ते को महत्त्व दिया है, जो धर्म संप्रदाय, वर्ग और वर्ण की दीवारे लाँघकर आदमी और आदमी के बीच एकात्म कायम करता है। संवेदना के जिस बिंदु पर पहुँचकर किसी धर्म, जाति, संप्रदाय सब

पृष्ठभूमि में चला जाता है। झुटपुटा कहानी स्व. इंदिरा गांधी की हत्या के बाद होनेवाले सिक्ख विरोधी दंगो की भयावहता और उसमें कही बचे हुए मानवीय मूल्यों की मार्मिकता के साथ प्रस्तुत करती है। 'नौसिखुआ' कहानी में धार्मिकता के नाम पर बढायी जानेवाली सांप्रदायिक भावना से दुवाओं के हृदय में भी घृणा, हिंसा का भाव कैसे फैलने लगता है, इसका वास्तविक चित्रण किया गया है। संस्कारों में व्याप्त धार्मिक तत्व मौका पाकर तत्ववाद तथा सांप्रदायिकता में परिवर्तित हो जाते है और समाज विरोधी कृत्य करने लगते है। यह कहानी इसी भयावह त्रासदी की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करती है।

वर्तमान चुनाव चक्कर में हमें सारी मानवीय संवेदनाओ से शून्य कर दिया है। इस माहौल में त्याग, कुर्बानी, आदि का कोई महत्त्व नहीं है, महत्त्वपूर्व है धन के बल पर कुर्सी हथियाने की होड भ्रष्टाचार, घूस, जातिवाद, सांप्रदायवाद आदि के रास्ते पर चलने वाली राजनीति पार्टियाँ समाजवाद, क्रांति, राष्ट्रप्रेम, भावात्मक एकता आदि आदर्शो का इस्तेमाल चुनाव द्वारा कुर्सी पर पहुँचने के लिए करती है। चुनाव में जीत के लिए कुछ भी किया जा सकता है। आदर्श के नाम पर आदर्श की तिलांजलि दी जा सकती है। 'मौकापरस्त' कहानी आज के राजनीतिक परिवेश में विशेष किस्म चुनाव मानसिकता के विरोध में सशक्त टिप्पणी है। 'वाऽचू' कहानी इसी वास्तविकता को प्रस्तुत करती है कि, वर्तमान आंतर्राष्ट्रीय आदमखोर व्यवस्था में आदमी की पहचान केवल आदमी होने में ही नहीं अपितु उसे उसके देश, धर्म तथा राजनीतिक और भौगौलिक सीमाओ आदि के परिप्रेक्ष्य में रखकर पहचाना जाता है।

'भगोडा' कहानी में मनुष्य का सत्य मनुष्य के ही हृदय में खोजने का प्रयास है। लेखक ने एक साधक की साधना को केन्द्र में रखकर इस साधना की असामाजिकता को उजागर किया है। यह कहानी जीवन से पलायन के विरोध की कहानी है। एक व्यक्ति एकान्त साधना के लिए संसार त्यागता तो है किन्तु साधना में एकाग्र नहीं रह पाता।

'झुमर' कला की सामाजिक उपयोगिता के लिए संघर्षरत रंगकर्मियो की कहानी है। लेखक ने आजादी के दौर में जननाद्रय संघ के एक कलाकार की मनोव्यथा एवं आस्था को चित्रित किया है। 'सिफारिशी चिट्ठी' कहानी वर्तमान की भ्रष्ट नीतियों की पोल को खोलती है। आज सामान्य क्लर्क की नौकरी करनेवाले को उच्चपद पर बिराजमान लोग तरक्की का लालच देकर बहकाते रहते है। इससे छोटी–छोटी खुशियों के लिए तऽपते इस तरह के लोग खुली आँखो से सपने देखने लगते है। इस वास्तविकता का जीता जागता चित्रण प्रस्तुत किया गया है। शिक्षक का भारतीय संस्कृति और समाज में सदा से आदर का स्थान रहा है। प्राचीन काल से हमारे यहाँ धनहीन होने पर भी गुरू, बुद्ध, ज्ञानी, साधु

पुरूषो का आदर होता था परंतु पूँजीवादी व्यवस्था में यह स्थिति पूर्णत: बदल गयी है। भीष्मजी ने इस स्थिति का यथार्थ चित्रण 'ऊब' कहानी में किया है।

मानवीय श्रम की गरिमा में विश्वास करनेवाली रानीमेहतो कहानी काँगडा जिले में प्रचलित लोक कथा को आधार बनाकर लिखी गई है। किसी जमाने में काँगडे में एक विचित्र राजा राज करता था। वह राजा कभी हुआ भी था या केवल किसी मनुष्य की कल्पना ने ही उसे जीवन दान दिया था यह कहना मुश्किल था। उपदेशपरक इस कहानी के द्वारा भीष्मजी यह बतलाना चाहते है कि श्रम और निष्ठा की कमाई ही सुख और शांति ला सकती है।

४.११ : भीष्म साहनी की कहानियाँ में समाज दर्शन

भीष्मजी के लेखन का आरंभ 'नीली–आँखे' नामक कहानी से हुआ है। 'भाग्यरेखा' उनका प्रथम कहानी संग्रह है जो सन् १६५३ में प्रकाशित हुआ। भाग्यरेखा कहानी संग्रह में भिन्न–भिन्न विषयो को लेकर कहानियाँ लिखी गई है। कहानी संग्रह की प्रथम कहानी जोत में एक सभावग्रस्त किसान के जीवन की दयनीय स्थिति की चित्रण बताया गया है। जब बरसात में जानकू की जमीन फिसलने लगी तो वह भागते हुए पटवारी के पास पहुँचता है और हाथ जोड्कर कहता है ''मेरी जमीन बह चली है मालिको कुछ करोंगे तो बच जायेगी।''[६९] गरीब किसानो के साथ होने वाला अमानवीय व्यवहार देखने को मिलता है। इस कहानी संग्रह की कहानी खून की छींटे में भूख और गरीबी से त्रस्त होकर अमानवीय बन गए मनुष्य का यथार्थ रूप दर्शाया है। कहानी में जाट को उसका चचेरा भाई पागल बताते हुए मारता है और कहता है, ''उठ हरामजादे शहर कितना दूर है, उठ जा, नहीं तो जान से मार डलूँगा।''[७०] ऐसा माहौल आज के समाज में भी देखने को मिलता है। शिष्टाचार में घर में काम करने वाले एक नौकर की निष्ठा और नैतिकता को व्यक्त किया है। घर की श्रीमती जी नौकर को देखकर कहती है, ''यह बद्मानस कहाँ से पकड लाए हो? यह कहानी समाज के उन व्यक्तिओ में प्रकाश डालती है जिनकी सोच नौकरो के प्रति खोखली है। समस्या चाहे आर्थिक हो या सामाजिक या राजनीतिक भीष्मजी बडी सहजता से उनको प्रस्तुत करते है। 'गंगो का जाया' कहानी की गंगो नीचे मैदान में से गारे की टोकरियाँ उठाकर छत पर लेजाने का काम करती है। वह गर्भवती थी तो सोचा कि ठेकेदार से कहकर ईट पकड्ने का काम कर लेगी। पर उलटा ठेकेदार उसे खडी देखकर चिल्ला उठा, 'खडी देख क्या रही है? उठाती क्यो नहीं, जो पेट निकला हुआ था, तो आई क्या थी?[७१] उसके मन

में सहानुभूति नहीं थी। लगता है कि आज आदमी इन्सानियत से नाता तोड चुका है। 'घर–बेघर' कहानी में एक नारी का चित्रण किया गया है जो मानसिक रूप से अस्वस्थ है। वह किसीके भी बच्चे को उठा लाती है। हवलदार उसे ना केद कर सकता है ना सुला रख सकता है कोई उससे पूछता है, तो कहता है कि, इस औरत ने नाक में दम कर रखा है, हर तीसरे रोज इसकी शिकायत आती है, न मैं इसे जेल में ठूस सकता हूँ, न खुला छोड सकता हूँ। इस नामुराद पर बच्चे उठा लेजाने की इज्जत लगी है। जहाँ कही इसे अकेला घूमता मिलता, मिल जाए, उसे उठा लाती है।''(७२) इस कहानी में नारी की ममता व्यक्त हुई है तो दूसरी ओर आर्थिक विवशता का मार्मिक चित्रण इस कहानी में हुआ है। 'तमगे' कहानी में लेखकने सत्य या वास्तविकता किस प्रकार से अनेक विडम्बनाओं को लेकर सामने आती है। यह स्पष्ट किया है। राजो धोबन निम्नवर्गीय नारी है। उसका बेटा फौज में भर्ती होता है जल्दी लौटकर नहीं आता। बेटे को तमणा मिलनेवाला हुआ वह जानकर माँ खुश होती है पर तमगा किसे मिलता है इस बात से अनजान है। मीरजबान अपाहिज होकर तमगा लेकर वापस आता है। तमने के पीछे जो जीवन का सत्य छिपा हुआ है उसे उद्घाटित करती है। फौजी को तमगे की नहीं समाज के सहारे और सहानुभूति की आवश्कयता होती है। 'क्रिकेट मैच' कहानी के माध्यम से लेखक ने भारतीय नारी की मानसिकता का चित्रण किया है। 'नीली–आँखे' कहानी में आर्थिक विवशता के कारण पति अपनी पत्नी को अपने पास नहीं रख सकता यह मार्मिक समाज का चित्रण प्रस्तुत किया है। 'भाग्य–रेखा' कहानी संग्रह में समाज के विभिन्न वर्ग में विभाजित लोगो के जीवन का दर्पण प्रस्तुत किया है। समाज के अंग मानेजाने वाले मनुष्य की दारूण परिस्थितियों की सच्चाई प्रस्तुत की है।

भीष्म साहनी का 'पहला पाठ' दूसरा कहानी संग्रह है जो सन् १६५७ में प्रकाशित हुआ। जिनमें विभिन्न विषय पर कहानियाँ लिखी गई है। साहनीजी ने मध्यवर्गीय जीवन की विषमता, खोखलापन और निरर्थकता को उजागर किया है। साथ ही शोषितों की व्यथा, धर्म के नाम पर चलने वाली होड सुशिक्षित नारी की स्मस्यां जैसे विषयों को भी भीष्म जी ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से विश्लेषित किया है। इन कहानियों में समाज की ओर देखने का लेखक का दृष्टिकोण भी स्पष्ट हो जाता है। ''जीवन के विविध पहलुओ एवं समय को सहजता से रच वह मर्म को छू लेते है।''(७३) इस कहानी संग्रह की प्रथम कहानी 'चीफ की दावत' है जो बहु चर्चित कहानी है। वर्तमान जीवन में रिश्ते–नाते और समबन्धो की पहचान भी समस्या बन सकती है; इसे कहानी में दर्शाया गया है। शामनाथ और उनकी पत्नी घर के फालतू सामान को ठिक करने में लग जाते है। लेकिन एक विडम्बना यह भी थी, माँ को

कहाँ रखा जाय? माँ को छिपाने का प्रयास किया, ''श्यामनाथ ने जिस चीज को छिपाया आखिर में वह खुल गई। चीफ ने माँ को देखा ही नहीं बल्कि बुरी हालत में देखा।'[७४] सच यह है कि आज के जीवन में अर्थ ही सब कुछ हो गया है। 'रानी मेहतो' कहानी साहनी जी के प्रगतिशील विचारों के रचनाकार भीष्मसाहनी के इस कहानी के कथ्य को एक रूपक और प्रतीक के अर्थ में स्वीकारते हुए श्रम की महत्ता को ही प्रतिपादित किया है। जहाँ परिश्रम नहीं है वहाँ जीवन में कोई आनंद नही है। साहनीजी की यह कहानी लोककथा के रूप में भी आज के व्यक्ति की मन:स्थिति का यथार्थ रेखांकन करती है। 'पहला पाठ' नामक एक कहानी प्रमुख है। यह कहानी वैचारिक स्तर पर आर्यसमाज में जो अंतविरोधी प्रवृत्तियाँ है उस पर प्रकाश डालते हुए उसकी अर्थहीनता को ही स्पष्ट करती है। डॉ. सुरेश बाबर के मतानुसार, ''भीष्म साहनी धार्मिक रूढियाँ में विश्वास नहीं करते, उन्होंने धार्मिक एवं साम्प्रदायिक संकीर्णता के जीवन विरोधी तत्त्वो को उद्धधाटित किया है।''[७५] यह प्रवृत्ति समाज और देश के लिए कितनी घातक है इसे प्रस्तुत किया है। 'बाप–बेटा' कहानी में एक बाप अपनी जमीन को बचाने के लिए अपने कम उम्र के बेटे को फौज में भर्ती करता है ताकि बेटे की तनख्वाह से जमीन छुडा ली जाए। बेटे की उम्र सोलह साल की थी बाप ने कहाँ फौज में किसीको सोलह वर्ष की बात मत करना बर्ना निकाल देंगे। यह कहानी बाप की मजबूरी की थी कि वह अपनी जमीन पंडित के जाल से बचाना चाहता था। उसके पास दूसरा रास्ता नहीं था। 'काँटे की चुभन', 'एष: धर्म सनातन:' और 'पाप पुण्य' तीनों कहानियाँ धार्मिक विकृतियों और धर्म के नाम पर किये जाने वाले निरर्थक संस्कारो को अंकित करती है। 'कांटे की चुभन' कहानी ने दो ऐसे मित्रो का चित्रण है जो सप्ताह के छ: दिन तो दोस्त रहते है पर सातवें दिन दुश्मन बन जाते हैं। तीनो दोस्तो में एक शिव को मानने वाला, दूसरा आर्य समाजी और तीसरा सनातन धर्मी। इस तरह कहानी में आर्य समाजी और सनातनी मित्रों का संघर्ष चलते रहता है। साहनीजी ने इस कहानी के माध्यम से धार्मिक आडम्बर और अंधविश्वास किस प्रकार मनुष्य को भ्रमित करते है और कैसे भ्रम टूट जाने पर वास्तविकता का ज्ञान होकर मनुष्य सही मार्ग पर चल पडता है यही कहानी में उद्घाटित किया है। पहलापाठ कहानी– संग्रह की 'ललिता' और 'फूला' कहानियों में लेखक ने मध्यवर्गीय जीवन की समस्याएँ, सामाजिक आचार विचार आदि का चित्रण किया है। ब्याह के बाद पहलीबार ललिता घर वापस आयी तब शाम के समय दरवाजे में ललिता खडी थी उसने अपनी माँ से कहा, 'मैं अब वहाँ नहीं जाऊँगी माँ, मैं वहीं से भाग आई हूँ।''[७६] इस कहानी में बतलाया गया है साधारण घर की लडकी जब अत्याधिक धनवान घर में ब्याही जाती है तो उसे किन–किन स्थितियों से

गुजरना पडता है और कैसे स्थितियों के कारण स्त्री बदल जाती है। 'फूला–कहानी' नि:संतान स्त्री की व्यथा और पीडा को मुखरित करने का प्रयास है। नि:संतान नारी का पालतू प्राणियों के साथ मन लगाकर अपनी अंतर्व्यथा छिपाना होता है। फूला आँसू बहाये जा रही थी, रूकने का नाम नहीं ले रही थी और कह रही थी, ''अब माणो नही आयेगी। मैं कहती हूँ अब वह कभी नहीं आयेगी। मैं कलमुँही मैं उसे न जाने को कहनी तो वह क्यों जाती? बस बहनजी, वहाँ पलंग पर वह मेरे साथ बैठी और में उसे कोसने लगी।''(७७) यह रोना फूला का अपनी बिल्ली 'माणों' के लिए था। इस प्रकार इस कहानी संग्रह की कहानियाँ उच्च, मध्य, निम्न वर्गकी समस्याओं को मुखरित करना था। सामाजिक प्रतिबद्धता से साहनीजी की नाता रहाँ है। इस कहानियों में समाज दर्पण बतलाकर सामाजिक विसंगतिय और अंतर्विरोधो पर करारा व्यंग्य किया गया है। इन कहानियों के संदर्भ में ठीक ही कहा गया है, ''प्रगतिशील आंदोलन से सक्रिय रूप से जुडे होने के बावजूद भी निरंतर वह नारे बाजी से स्वयं को बचाते रहे, उनकी कहानियों में सोदेश्यता है, करूणा है, व्यंग्य है और अंतरंगता है।'' (७८)

४.११.१ : भटकती राख

'भटकती राख' भीष्म साहनी जी का तीसरा कहानी–संग्रह है जो सन १६६६ में प्रकाशित हुआ। भटकती राख संग्रह की कहानियों में प्रेम का अंकुर कब और किस प्रकार से विकसित होता है इसे प्रतिपादित किया गया है। इस कहानी–संग्रह में सामाजिक विसंगति, मानवीय व्यवहार, वर्तमान शिक्षा प्रणाली, वृद्ध महिलाओं की दयनीय स्थिति, मातृत्व के विविध रूप जैसे विषयों को लेकर भी लेखक ने बडी ही मार्मिक कहानियाँ लिखी है। कहा गया है कि, ''हिन्दी कथा–साहित्य में भीष्म साहनी का नाम प्रतिमान के रूप में स्थापित हो चुका है। प्रतिमान बन जाने तक की उनकी कथा–यात्रा अनेक पडावों व संघर्षो से होकर गुजरी है। उनके कथा–साहित्य में रूचि रखने वाले पाठक अच्छी तरह से परिचित है कि उनके पास ए विशिष्ट जीवन दृष्टि है।''(७९) यही वह जीवन–दृष्टि है जिसके कारण लेखक ने सामाजिक यथार्थ को अपनी कहानियों में बडी सहज अभिव्यक्ति दी है। भीष्म साहनी जी का यह कहानी–संग्रह कई अर्थो से महत्वपूर्ण है।

भीष्म साहनीजी की 'भटकती राख' नामक कहानी एक ऐसे राजा की है, जिसने अपने जीवन में सदा ही जनसामान्य के हितों और कल्याण को महत्वपूर्ण माना। कहानी के यह संदर्भ उस समय लेखक ने रेखांकित किया है जब गाँव के फसल कटाई पूरी हो चुकी थी, हँसते–चहकते किसान घर

लौट रहे थे। किसानों के कोठे अनाज से भर गए थे। गृहिणियों के होठों पर संगीत की धुने फूट रही थी। राज उतर आयी थी, घर–घर में लोग खुशियाँ मना रहे थे। उसी समय हक घर की खिड्की में खडी एक किशान युवती जो देर तक मंत्र–मुग्ध सी बाहर का दृश्य देख रही थी, जो सहसा चिल्ला उठी, ''देखो तो खेत में जगह–जगह यह क्या चमक रहा है?'' उसका पति भी खेत में झिलमिल करते सोने जैसे चमकते कणों को देख रहा था। पत्नी को संदेह हुआ कि कहीं यह सोना तो नहीं है। पति ने समझाते हुए कहा, 'सोना कभी इस तरह चमकता है क्या?' उसी समय पीछे कोठरी में बैठी किसान की बूढी दादी ने कहा, ''यह सोना नहीं बेटी, यह राजा की राख है, कभी–कभी चमकने लगती है।'' पर बहू को दादी–माँ की बात पर विश्वास नहीं हुआ। वह बाहर गई और सोना बटोरने का प्रयास करने लगी। पहले तो उसे वह सहमी–सहमी देखती रही, फिर हाथ बढाकर उसे उठा लिया और दूसरी हथेली पर रख दिया। पर हथेली पर पड्ते ही वह कण जैसे बुझ गया और उसकी चमक जाती रही। किसान की पत्नी हतबुद्धि–सी इधर–उधर देखने लगी। खेत में अभी भी जगह–जगह कण चमक रहे थे। दादी–माँ ने फिर उसे कहा, 'यह सोना नहीं है बेटी, राजा की राख है।' यह कहकर दादी–माँ ने फिर उसे राजा का किस्सा सुनाया जो उसने अपनी दादी–माँ से सुना था।

यह कहानी भीतर से यह संदेश देती है कि प्रजा के हित के लिए जिस राजा का जीवन व्यतीत होगा वही प्रजा सुखी होगी।

भटकती राख कहानी–संग्रह की दूसरी कहानी 'माता–विमाता' है। यह कहानी हक ऐसी समस्या को लेकर लिखी गई जहाँ संघर्ष इस बात का है कि संतान पर अधिकार जन्म देने वाली माँ का है, या पालन–पोषण करने वाली माँ का है मातृत्व बोध तो दोनों में एक–सा ही होता है, हाँ यह बात और है कि उसमें कुछ सीमा हो। यह कहानी रेलवे प्लेटफॉर्म पर छूटती गाडी के समय आपस में झगड्ती दो औरतों की कहानी है।

इसी समय प्लेटफॉर्म का हवलदार वहाँ पहुँचा और, 'क्या हल्ला मचा रही हो?' कहकर उन्हें डांटने लगा। हवलदार को देखकर दोनों औरतें रूक गई और बच्चे वाली औरत गाडी की ओर लपकी, किन्तु दूसरी ने झपटकर उसे पकड लिया। हवलदार ने फिर से कहा, 'हल्ला मत करो, क्या बात है?' तब एक औरत बोली, ''मेरा बच्चा लिए जा रही है, नहीं दूँगी मैं बच्चा।''

समाज का चित्रण प्रस्तुत करने वाली यह कहानी न केवल माँ की ममता की कहानी है अपितु उस माँ की अंतर्व्यथा भी है जो बच्चे को जन्म न देने पर भी बच्चे को उतना ही स्नेह और ममता देती

है, जितना कि जन्मदाती माँ देती है। कुछ न होते हुए भी आदमी कैसे किसी का सबकुछ हो जाता है यही सत्य इस कहानी के माध्यम से लेखक ने स्पष्ट किया है।

'खून का रिश्ता' इस कहानी–संग्रह की बडी चर्चित कहानी है। भीष्मजी ने इस कहानी में सामाजिक संबंधो की निरर्थकता और खोखलेपन को व्क्त करते हुए यह सिद्ध किया है कि कैसे समय आने पर स्वार्थ और आशंका का हल्का–सा झटका भी सामाजिक संबंधो के झाँचे को ही तोड देता है। इस कहानी में चाचा 'मंगलसेन' नामक ऐसे चरित्र को केन्द्र में रखा गया है जो गरीब है। उसकी गरीबी ही उसके लिए अभिशाप बन जाती है।

यह कहानी मंगलसेन की व्यथा और पीडा की कहानी न होकर अर्थ के महत्ता की भी कहानी है। आज भी सामाजिक जीवन में मनुष्य के छोटे और बडे का मनदण्ड 'अर्थ' ही तय करता है। समाज में व्यक्तियों के पारस्परिक संबंध उसके अच्छे या बुरे, अर्थ पर निर्भर करते हैं। यह भी सच है कि समाज में व्यक्ति की हैसियत उसके ज्ञान, अनुभव या योग्यता पर निर्भर न होकर उसकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर होती है। वर्तमान जीवन का सत्य यह है कि यदि आपके पास पैसा नहीं है तो आप के साथ वही व्यवहार किया जायेगा जैसे नौकरों के साथ होता है। चाचा मंगलसेन के साथ ऐसा ही हुआ ह। डॉ. सुरेश बाबर के शब्दो में, 'सखून का रिश्ता कहानी का मंगलसेन बाबूजी का चचेरा छोटा भाई होने पर भी उसकी स्थिति नौकरों जैसी ही है। उसका घर के नौकरों के सामने अपमान किया जाता है, क्योंकि वह गरीब है।

'लेनिन का साथी' भटकती राख कहानी–संग्रह की एक ऐसी कहानी है जिसमें उस व्यक्ति का चित्रण किया गया है जो अपने आप को लेनिन का साथी बताता है। कहानी में लेनिन के साथी की बात वहाँ से आरंभ होती है जहाँ दफ्तर में उसका व्याख्यान रखा गया।

सि व्याख्यान को जो व्यक्ति बैठकर सुन रहा था वह स्वयं सोनचने लगा कि यह कैसा आदमी है जो बडे–बडे लोगों के साथ अपना नाम जोडे जा रहा है। लेनिन के साथी की बात सुनकर उसे लगा कि जिस ढंग से यह आदमी अपने संस्मरण सुना रहा था, लगता था जैसे अपनी तुच्छता को ही वह बडप्पन माने हुए है।

इस प्रकार कहानी के माध्यम से भीष्म जी ने कुछ लोगों की उस प्रवृत्ति की ओर संकेत किया है जो अपने संबंधो को महापुरूषों के साथ जोड्कर अपनी विशेष पहचान बताने का प्रयास करते हैं।

'सिफारिशी चिट्ठी' इस कहानी–संग्रह की उल्लेखनीय कहानी है। यह कहानी पुनर्वास मंत्रालय के क्लर्क त्रिलोकीनाथ की है। त्रिलोकीनाथ एक मध्यवर्गीय इंसान है। जैसे मध्यवर्गीय इंसान के जीवन में महत्वपूर्ण घटनाएँ शायद ही घटित होती है वैसे ही त्रिलोकीनाथ के विषय में हुआ था।

इस कहानी में लेखक ने मध्यवर्गीय ऐसे व्यक्ति की प्रवृत्ति का चित्रण किया है जो डरपोक है। वह अपने ऑफिस के सुपरिटेण्डेन्ट साहब के डर से, बडे साहब से अपनी तरक्की के लिए सिफारिशी चिट्ठी ले जाने से भी डरता है। मध्यवर्गीय व्यक्ति की मानसिकता कितनी सीमित और संकुचित होती है इस कहानी में बडी मार्मिकता से चित्रित किया गया है।

'भटकती राख' कहानी संग्रह की 'एक रोमांटिक कहानी' अत्यंत महत्वपूर्ण कहानियों में से एक है। महत्वपूर्ण इसलिए कि इस कहानी में लेखक ने भारतीय संस्कृति के त्याग, समर्पण की भावना, सेवा और सहनशीलता की प्रवृत्ति को न केवल सुखी जीवन बनाने का साधन बताया अपितु उसे गौरावान्वित भी किया है। समाज में रहते हुए नारी और पुरूष के संबंध और उसके रूप अनेका–नेक होते है। विशेष रूप से हमारे देश के समाजसुधारकों तथा चिंतकों ने इस बात पर बल दिया है और नारी–पुरूष के आदर्श संबंधो को रेखांकित करने का प्रयास किया है। 'एक रोमांटिक कहानी' इन्हीं संबंधों के आदर्श रूप को प्रस्थापित करने वाली कहानी है। वैसे इस कहानी के विषय में यह कहा गया है कि यह कहानी भीष्म जी के उपन्यास 'मैयादास की माडी' का ही लघु रूपांतर है। भीष्म जी ने 'एक रोमांटिक कहानी' को दादी के माध्यम से यहाँ स्पष्ट किया है जिसे दादी के नाती–पोते कई बार सुनने के बाद भी दोबारा सुनना चाहते है।

यह कहानी रूकमणी के साहस, सेवा और त्याग की कहानी है। पागल और मृगीवाले व्यक्ति के साथ विवाह करने के बाद भी उसने अपने पति को नहीं छोडा। वह उसका साथ निभाते रही। स्वयं शिक्षा–दीक्षा प्राप्त की और पैरों पर खडी हुई। लेखक ने भारतीय नारी के आदर्शो की स्थापना रूकमणी में की है। इसलिह कहानी का शिर्षक रोमांटिक होते हुए भी सामाजिक दर्पण है।

भटकती राख कहानी संग्रह की 'सिर का सदका' एक मार्मिक कहानी है। भीष्म जी ने नारी जीवन की यातनाओं, पीडाओं और सहन–शक्ति की सीमाओं को लांघनेवाली जो कहानियाँ लिखी है। उन्ही में से एक 'सिर का सदका' है। यह कहानी 'ईशरो' नामक एक ऐसी नारी की कहानी है जिसने अपने सारे दु:खों को पी कर अपनी पीडा और यातना को कभी किसी से कहा नहीं है।

वास्तविकता यह थी कि इशरो अकेली रह गई थी। उसकी पहनी और तार–तार हुई साडी उसकी वास्तविकता का बयान कर रही थी।

भीष्मजी की यह कहानी एक ऐसे आदर्श नारी की कहानी है जिसने अपने संबंधो का निर्वाह जीवन के आखिरी क्षणों तक किया। नारी जब किसी के सम्मुख अपना सबकुछ न्योछावर कर सच्चे मन से स्नेह करती है तो उसके आगे वह सब कुछ सहने को तैयार हो जाती है। इशरो की सेवा भावना, कष्ट सहने की क्षमता और सहनशीलता ने उसे एक आदर्श नारी बना दिया।

'प्रोफेसर' इस कहानी–संग्रह की अन्य कहानी है। इस कहानी में भीष्म जी ने समाज किस तरह आज उपयोगितावादी दृष्टि रखकर व्यवहार करता है इसे बताते हुए एक कलाकार के विकास में वैयक्तिक स्वातंत्र्य की आवश्यकता और कला की मूल्यहीनता को स्पष्ट किया है। वास्तव में यह कहानी जितनी एक प्रोफेसर की है उतनी ही उतनी है उनके एक विद्यार्थी कृष्णलाल की है।

यह कहानी समाज की उन मान्यताओं और संबंधो को स्पष्ट करती है जहाँ व्यवहार और आदर्श में एक निश्चित अंतर रखा जाता है। समाज के कला और साहित्य के प्रति जिस प्रकार की भावना वर्तमान है उसका अत्यंत मार्मिक निरूपण लेखक ने किया है।

'कुछ और साल', 'मिला' और 'सायें' इस कहानी–संग्रह की अन्य कहानियाँ है। 'कुछ और साल' नाम कहानी में सेवाकारी से निवृत्त होने के पश्चात सेवानिवृत्त व्यक्ति का जो हाल होता है उसका चित्रण किया गया है। इस कहानी में मधुसूदन जी एक अफसर की नौकरी पर जब तक थे तब तक घर–परिवार में उनका बडा मान–सम्मान होता रहा। पर जब वे सेवा निवृत्त हो गए तो स्वयं उन्होंने यह अनुभूत किया कि परिवार वालोंकी निगाहों में अब उनका अस्तित्व नहीं रहा है।

इस कहानी का मुख्य स्वर यही है कि समाज में उन ही लोगो की है जब तक व्यक्ति आर्थिक दृष्टि से संपन्न रहता है या किसी न किसी काम से जुडा रहता है। यह कहानी जीवन की मूल्यहीनता को ही रेखांकित करती है।

'इमला' इस कहानी में लेखक ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली में किस प्रकार से अवांधित हस्तक्षेप किया जाता है इसका चित्रण करते हुए यह स्पष्ट किया है कि कैसे इसके कारण शिक्षा के क्षेत्र में विपरीत परिणाम हो रहे है। यह कहानी मास्टर रामदास के माध्यम से पाठशाला और मास्टरों की मूल्यहीनता को रेखांकित करती है।

'साये' भटकती राख कहानी–संग्रह की अंतिम कहानी है। इस कहानी में लेखक ने समाज में पति–पत्नी में किस प्रकार के संबंध होने चाहिए यह कहानी के अंत में एक छोटी–सी घटना के माध्यम से स्पष्ट किया है।

यह समाज की वास्तविकता है कि घर में जब पति द्वारा पत्नी की उपेक्षा होती हो पर बच्चों से प्यार मिलता है तो माँ की ममता के लिए उससे बढकर कोई दूसरा सुख नहीं होता। भीष्म जी ने इस कहानी में जीवन के ऐसे बहुमूल्य क्षणों को चित्रित किया है।

'भटकती राख' कहानी संग्रह के माध्यम से भीष्म जी ने हक और जहाम वर्तमान समाज के खोखलेपन को उजागर किया है, तो दूसरी और समाज के गहरे नियमों भी चित्रित किया है। जो माता–विमाता, एक रोमांटिक कहानी और सायें जैसी कहानियों में दिखाई देता है। इस कहानी–संग्रह की कहानियों में लेखक ने भिन्न–भिन्न अनेक समस्याओं को उठाते हुए उनका समाधान देने की कोशिश की है। वर्तमान समाज में किस प्रकार से वृद्ध व्यक्तियों की स्थिति दयनीय होती जा रही है, माँ की ममता के विविध आयाम, मूल्यहीनता आदि समस्याओं को लेखक ने विश्लेषित किया है। भीष्मजी की कहानियों की यह विशेषता है कि वे कहानियों में केवल समस्याएँ या प्रश्न उठाते ही नहीं अपितु अपनी ओर से जहाँ तक हो उसका समाधान या उत्तर देने का प्रयास भी करते है। वास्तव में, ''इस संग्रह की कहानियों में उन्होंने वर्तमान जगत की समस्याओं को अतीत के परिप्रेक्ष्य में रखकर देखने की कोशिश की है, इसीलिए ये कहानियाँ काल के किसी द्वीप पर ठहरती नहीं, वरन निरंतर प्रवाहित इतिहास–धारा का जीवंत हिस्सा बन जाती है। मनुष्य के इतिहास में उनकी यह रूचि किसी आनंद–लोक की सृष्टि नहीं करती बल्कि अभावों व शोषण के अंधकार में भटकती हुई जनता को सही दिशा–निर्देश देने का प्रयास किया है।

४.११.२ : पटरियाँ

'पटरियाँ' भीष्म साहनी का चतुर्थ कहानी–संग्रह है। इसका प्रकाशन सन् १६७३ में राजकमल से हुआ। इस कहानी–संग्रह की कहानियों में सामाजिक और राजनीतिक अनेक समस्याओं को उठाते हुए लेखक ने मध्यवर्गीय व्यक्ति की छटपटाहट, साम्प्रदायिक तनाव, विधवाओं की दयनीय स्थिति, अभावों से ग्रस्त जीवन आदि विषयों को लेकर अत्यंत मार्मिक कहानियाँ लिखी है। ''भीष्म साहनी की कहानियों में मानवीय मूल्यों के नीरंतर हवं सतत प्रवाह की धारा स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है, बावजूद इसके

कि जीवन और समाज में कुरूपताएँ और विद्रुपताएँ भी बनी हुई हैं। दुनिया की इन्हीं कुरूपताओं के बीच जीवन की कोमलता और सौन्दर्य को सतत रेखांकित करते हुए भीष्म जी मध्यवर्गीय लोगों की कहानियाँ कहते है।''[८०]

कहानी संग्रह की प्रथम कहानी 'पटरियाँ' है। इसी कहानी के आधार पर कहानी संग्रह का नाम रखा गया है। पटरियाँ कहानी में मानवजीवन की विवशताओं, कठिनाइयों तथा सर्वसामान्य व्यक्ति की आर्थिक विषमताओं से संघर्षरत जुझासु वृत्ति किया गया है।

वास्तव में यह कहानी मध्यवर्गीय और आर्थिक विषमता में जीने वाले एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो सारी जिंदगी जीवन की विडम्बनाओं को सहता रहा। भीष्म जी ने इस कहानी में एक और केशोराम जैसे अभावग्रस्त लोगों का जीवन चित्रित किया है, तो दूसरी ओर चोपडा साहब जैसे धनी वर्ग के व्यक्तियों का चित्रण किया है। मूलत: यह कहानी भीष्मजी के समाजवादी विचारधारा का ही प्रतिनिधित्व करती है। वर्तमान युग में परिवर्तित और सामाजिक संबंधो को रेखांकित करती यह कहानी भौतिकता के दु:खद परिणामों को ही प्रस्तुत करती है। इस कहानी में भीष्म जी ने आर्थिक विपन्नता में जीने वाले व्यक्ति के साथ निकट के संबंधी भी कैसे अपमानजनक और उपेक्षामय व्यवहारकरते है इसे चित्रित किया है।

'अमृतसर आ गया है' इस कहानी–संग्रह की एक उल्लेखनीय कहानी है। देश–विभाजन वैसे भी भीष्म साहनी जी के लिए बडा संवेदनशील विषय कहा है। इस विषय को लेकर उन्होंने कहानियों के साथ–साथ उपन्यास भी लिखा है। विभाजन की त्रासदी क्या होती है इसे लेखक ने केवल खुली आँखो से देखा अपितु भोगा भी था। इस कहानी में मार खाने वाला पहचानने की कोशिश कर रहा है कि उसे जो मार रहे है वे कौन है? और वे किस अदावत का बदला ले रहे है?

लेखक स्वयं बीते दिनों की याद करता है जब पाकिस्तान बनने का ऐलान किया गया था। इस समय लेखक का वक्तव्य दृष्टव्य है, ''उन दिनों के बारे में सोचता हूँ, तो लगता है, हम किसी झुटपुटे में जी रहे थे। शायद समय बीत जाने पर अतीत का सारा व्यापार ही झुटपुटे में बीता जान पडता है। ज्यों ज्यों भविष्य के पट खुलते जाते है, यह झुटपटा और भी गहराता चला जाता है।''[८१]

किस प्रकार से अमृतसर जाने वाले लोग बैचेनी से और कभी–कभी विवेकहीन होकर व्यवहार कर रहे थे इसका चित्रण लेखकने किया है। रेल के डिब्बे में मात्र फसाद के भय से जो आतंक छा जाता है उसका सजीव चित्रण किया गया है।'' भागते व्यक्ति, खटाक से बंद होते दरवाजे, धरों की छतों पर

खडे लोग, चुप्पी और सन्नाटा, सभी दंगो के चिन्ह थे।'' यह सिर्फ फसाद का भय था। लोग चुप्पी और सन्नाटा, सभी दंगो के चिन्ह थे। यह सिर्फ फसाद का भय था। लोग इस कदर ड्र चुके थे कि पानी के लिए भी नीचे नहीं उतर रहे थे। रेल जब पाकिस्तान में होती तो हिन्दू लोग चुपचाप बैठे रहते थे।

इस कहानी में उस हिन्दू युवक का पश्चात कहानी को और अधिक सशक्त बनाता है। प्रसंगवश व्यक्ति कभी भावना में बह जाता है, पशु बन जाता है लेकिन सामान्य अवस्था में वह व्यक्ति पुन: मनुष्य बन जाता है। प्रतिशोध के कारण ही वह हिन्दु युवक मुसलमानों पर आघात करता है, लेकिन फिर पश्चाताप करता है, ड्र जाता है। इस कहानी के संदर्भ में डॉ. प्रमिला अग्रवाल का विचार अत्यंत सार्थक लगता है, ''भीष्म साहनी की अमृतसर आ गया है ऐसी कहानी है जो स्थिति सापेक्ष क्रुर मानसिकता का बोध जगाती हहै। विभाजन के समय का माहौल कैसे मानवीय संबंधो की सहजता को समाप्त कर उसमें हत्यारी मनोवृत्तियाँ पैदा करता है इसका सटीक चित्रण कहानीकार ने इस कहानी में किया है।

'पटरियाँ' कहानी संग्रह की 'तस्वीर' भीष्मजी की उत्कृष्ट कहानियों में से एक है। इस कहानी में लेखक ने विधवा भारतीय नारी के जीवन की विड्म्बनाओं और विद्रुपताओं का चित्रण किया है। भारतीय समाज में आज भी सबसे दयनीय स्थिति विधवा नारी की होती है। घर के सभी लोग उससे तिरस्कारपूर्ण व्यवहार करते है। 'तस्वीर' कहानी की बहू भी अपने पति की अचानक मृत्यु के कारण विधवा हो जाती है पति के मरने के तरह दिन बाद जब घर खाली हो गया तो इस विधवा नारी की तकलीफें और अधिक बढ गई। वह स्वयं कहती भी है, उसके मरने के बाद मैं और भी त्रस्त हो उठी थी, निराश्रय और त्रस्त। छोटे से कद का मेरा ससुर दुबला–पतला, घुटनो तक लम्बा कोट पहने और सिर पर बडी सी पगडी रखे आगे आगे चल रहा होता, बगल में कागजो की फाइल दबाए, और मैं पीछे पीछे घिसटती जाती। मेरा ससुर बडी बेरूखी से बोलता था। उसे विश्वास था कि मैं ही उसके बेटे की मौत का कारण बनी हूँ।

इस कहानी में विधवा स्त्री अपने दो बच्चों को लेकर अपने ससुर के साथ रहती है। विधवा नारी के लिए तो पति के बाद पुत्र ही सहारा होता है। पति की आकस्मिक मृत्यु के कारण और यदि बच्चे भी छोटे हो तब तो विधवा नारी के जीवन का संघर्ष और भी अधिक तीव्र हो जाता है।

भीष्म जी ने इस कहानी के प्रारंभ में जहाँ भारतीय विधवा नारी के मजबूर और विवश रूप का चित्रित किया है वहाँ कहानी के अंत में, अन्याय को सहने वाली विधवा बहू साहस के साथ अन्याय का

विरोध कर विद्रोह कर उठती है यह भी दर्शाया गया है। भीष्मजी की तस्वीर कहानी भारतीय नारी के बदलते तेवर को ही स्पष्ट करती है

'मौका परस्त' इस कहानी–संग्रह की उल्लेखनीय कहानी है। वर्तमान युग में व्यक्ति कितना मौका परस्त हो गया है और कैसे आदमी हर मौके पर केवल अपने स्वार्थो की पूर्ति चाहता है इसे इस कहानी में बडी मार्मिकता से चित्रित किया गया है। प्रगतिशील विचारों के होने के कारण लेखक ने सामाजिक मूल्य, निष्ठा, प्रेम, सहयोग आदि के प्रति जो उदासीनता व्यवहार में देखने को मिलती है, उसका यथार्थ चित्रण किया है।

इस कहानी में दल, राजनीति, नेता आदि की अमानवीयता चित्रित है तो वही पर शंभू की लाश और उसके परिवार की पीडा भी है। जहाँ दल के नेताओं की खुशी है वहाँ शंभू की पत्नी को दु:ख–दर्द है। शब का राजनीतिक इस्तेमाल करने के बाद थोडे से लोग लाश को लेकर श्मशान–भूमि में जाते है जहाँ उसकी पत्नी घंटो से उसके इंतजार में बैठी है। श्मशान–भूमि में उसका दाह–संस्कार होता है।

भीष्म जी ने इस कहानी में वर्तमान राजनीति किस हद तक गिर सकती है। इसका उद्घाटन तो किया ही है पर साथ ही साथ राजनीति में मानवीय संबंध का गला किस प्रकार से घोंटा जाता है इसे भी दर्शाया है।

'अभी तो मैं जवान हूँ' इस कहानी–संग्रह की नारी जीवन की समस्या को लेकर चलने वाली एक उल्लेखनीय कहानी है। भीष्म जी ने अपनी कहानियों में नारी जीवन से जुडे हुए अनेक विषयों का चित्रण किया है इस कहानी में वे वेश्याओं की समस्याओं को उठाते हुए उनके जीवन की अंतर्वेदनाओं को उद्घाटित करने का प्रयास करते है। सामान्यत: वेश्याओं को पूरा समाज हेय दृष्टि से देखता है। उसके प्रति न तो किसी के मन में स्नेह होता है और न सहानुभूति।

इस कहानी को पढकर ऐसा लगता है कि लेखक ने वेश्या जीवन की समस्या को बडी गंभीरता से लिया है। पेट के खातिर अपने देह का व्यापार करने वाली यह नारियाँ कितनी विवश और मजबूर होती है, इसका लेखकने अत्यंत प्रभावपूर्ण चित्र उपस्थित किया है।

इस कहानी के संदर्भ में डॉ. गणेश दास का यह कथन दृष्टव्य है, 'भीष्म साहनी की 'अभी तो मैं जवान हूँ में वेश्याओं की जीवनचर्या, उनकी समस्याओं, व्यवहार, स्वभाव, कामकाज की प्रक्रिया, वेश्याओं की स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है। वेश्या की जिंदगी का अपना एक अलग संसार होता

है, जहाँ नारी प्रतिदिन अपने लिए ग्राहक ढूँढती है। वहाँ शरीर की सुंदरता, गठन, सुडैलता, कोमलता, आदि के आधार पर व्यवहार अच्छा और बुरा चलता है।

भीष्म जी की इस कहानी में नारी जीवन की विडम्बनाओं का बडा ही विदारक चित्र रेखांकित किया गया है। नारी जीवन के इसी कटु यथार्थ का चित्रण भीष्म जी ने इस कहानी में किया है।

'डोरे' इस कहानी संग्रह की बिल्कुल अलग और मार्मिक कहानी है। यह कहानी संबंधो पर प्रकाश डालती है जहाँ एक नारी जब एक विवाहित पुरूष से प्रेम करती है तो वह इस बात की चिंता नहीं करती कि वह किसी अन्य नारी पर अन्याय कर रही है। यह कहानी पारिवारिक विघटन की गाथा है। पति–पत्नी और प्रेमिका का त्रिकोन कहानी में चित्रित है।

अर्चना जिस विवाहित पुरूष से प्यार करती है उसके दो बच्चे भी है। उसका लडका बिट्टु बारह साल का है और बेटी मालती, बिट्टु से दो साल बडी है। अर्चना को इस बात की चिंता नही है कि उसका प्रेमी गिरीश अपनी विवाहित जिंदगी कैसे बिता रहा है। वह इस बात को अच्छी तरह से जानती है कि गिरीश जब भी उससे मिलने आता है तब उसकी पत्नी अपने घर पर उसका इंतजार करती रहती है। अर्चना केवल इतना ही सोचती है कि जिसके लिए मैने उम्र भर शादी न करने की ठान ली है उसे कैसे छोड दूँ।

नारी जीवन के निमांत भिन्न पहलू को लेकर भीष्म जी ने आधुनिक नारी की मानसिकता को ही स्पष्ट किया है। यह सच है कि अर्चना का पूरा नियंत्रण अपने प्रेमी सदा ही उसके नियंत्रण में रहेगा, यह एक गलत सोच है।

भीष्म जी ने इस कहानी में अर्चना के माध्यम से आधुनिक और समसामायिक स्वतंत्र विचारोंके नारी का जो चित्र प्रस्तुत किया है वह कभी–कभी एकांगी लगता है।

इस कहानी–संग्रह कि ढोलक कहानी महत्वपूर्ण है। इस कहानी में लेखक ने बडे ही व्यंग्य पूर्ण ढंग से जीवन की वास्तविकता को व्यक्त किया है।

लेखक ने इस कहानी में भारतीय आदमी किस तरह से विदेशी मेम के कहने से उन बातों को मान लेता है जिनका वह पहले विरोध करता है, इसे ही दर्शाया हैं यह कहानी भारतीय दासता की मानसिकता को ही रेखांकित करती है।

'भगौडा' इस कहानी–संग्रह की अंतिम कहानी है। इस कहानी में एक ऐसे व्यक्ति का चित्रण किया गया है जो मोक्ष प्राप्ति के लिए और कठोर साधना धे लिए शहर से दूर जंगल में जाकर साधना

करने का प्रयास करता है। मानवीय प्रवृत्तियाँ किस प्रकार की रहती है इसी को भीष्म जी ने इस कहानी में चित्रित किया है। मनुष्य कई बार मानसिक उत्तेजना में कुछ ऐसे निर्णय लेता है जो उसके बस के नहीं होते। हृदय के भीतर के सत्य की खोज में गजानन इतने दिन भटकता रहा अंतत: उसे यही अनुभूत होता है कि वह सत्य उसके हृदय में ही है, उसके बाहर नहीं। हृदय के भीतर के सत्य से साक्षात्कार कराने वाली भीष्म जी की यह कहानी जीवन से भागने वालोंको जीवन का सही रास्ता बनाती है।

इस प्रकार भीष्म जी ने पटरियाँ कहानी–संग्रह में विभाजन के बाद लोगो के दिलों में पैदा हुई दरारें, मध्यवर्गीय युवकों की उदासी और विफलता बांलमन की सूक्ष्मता, जीवन की तलाश में भटकते व्यक्ति, नारी जीवन की विवशता तथा विडम्बना को रेखांकित किया है। इस कहानी–संग्रह की कहानियों में समाज के व्यापक परिप्रेक्ष्य में भिन्न–भिन्न समस्याओं का और उनका सामना करते हुए लोगों का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। ऊपरी तौर पर सीधी सरल लगने वाली भीष्मजी की कहानियाँ कुछ न कुछ विशेष कथ्य लेकर चलती है इसमें संदेह नहीं कि पटरियाँ कहानी–संग्रह की कहानियों में समाज के व्यापक परिप्रेष्य में भिन्न–भिन्न समस्याओं का और उनका सामना करते हुए लोगों का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। ऊपरी तौर पर सीधी सरल लगने वाली भीष्मजी की कहानियाँ कुछ न कुछ विशेष कथ्य लेकर चलती हैं इसमें संदेह नहीं कि पटरियाँ कहानी–संग्रह की कहानियाँ सर्वसामान्य आदमी को केन्द्र में रखकर ही लिखी गई है।

४.११.३ : वाऽचू

भीष्म साहनी जी का पाँचवाँ कहानी–संग्रह 'वाऽचू' है जो सन १६७८ में प्रकाशित हुआ। उनका यह कहानी–संग्रह सबसे अधिक उल्लेखनीय है। सोद्देश्यता तो भीष्म जी की कहानियाँ की मुख्य प्रवृत्ति है ही पर इस संग्रह की कहानियों में सोद्देश्यता निर्वहन के साथ–साथ हृदयग्राही रसमयता भी देखने को मिलती है। जीवन संदर्भो से जुडी हुई इन कहानयिों में एक व्यापक सामाजिक परिवेश है, जिसमें विविधता के साथ–साथ हृदयग्राही रसमयता भी देखने को मिलती है। जीवन संदर्भो से जुडी हुई इन कहानियों में एक व्यापक सामाजिक परिवेश है, जिसमें विविधता के साथ–साथ रचकता भी है। वाऽचू कहानी संग्रह की कहानियों में एक ओर समाज का मध्यवर्गीय तपका है तो दूसरी ओर उच्चवर्गीय लोग और उनका परिवार भी है। साथ ही इन कहानियों में निम्नवर्गीय पात्रों का भी चित्रण किया गया है। जैसे घरों में काम करने वाले नौकर, दाइयाँ, रसोइयाँ आदि। इस कहानी–संग्रह की जिन कहानियों में

निम्नवर्ग और उनकी समस्याओं का चित्रण किया गया है वहाँ लेखक की सहानुभूति भी इसी वर्ग के साथ है।

रमाकांत श्रीवास्तव के शब्दों में, ''इन कहानियों का पढना इस माने में सुखद अनुभव है कि ये स्वातंत्र्य पूर्व काल से लेकर समकालीन भारतीय समाज के जीवन के विविध पहलुओं और कोणों को उजागर करती है।''(८२)

'ओ हरामजादे' इस संग्रह की प्रथम और मार्मिक कहानी है। इस कहानी में विदेशों में रहने वाले व्यक्यिों और परिवारजनों के मन में स्वदेश के प्रति जो आकर्षण और प्रेम होता है उस भावनात्मक स्थिति का चित्रण किया गया है।

इस कहानी के पात्र मि. लाल की यही स्थिति होती है। मि. लाल की मनोदशा का प्रभावपूर्ण चित्रण इस कहानी में हुआ है। मि. लाल जो इंजीनियर है, इस कहानी का मुख्य पात्र है। वह अपनी विदेशी पत्नी और जवान बेटियों के साथ विदेश में निर्वासितो की तरह जीवन गुजार रहा है। कहानी में एक ओर अपने देश के प्रति उसके मन में गहरा लगाव है और यह लगाव किसी ग्रंथि से निर्मित नहीं है बल्किउसकी सारी क्रियाएँ अपने वतन से और जमीन से कटने की पीडा से प्रेरित है। दूसरी ओर कहानी में पति–पत्नी के बीच का बनाव है। अपने वतन तथा घर से दूर रहने वाले मिण लाल की कहानी यह स्पष्ट करती है कि व्यक्ति के जीवन की सार्थकता उसके अपने परिवेश और समाज में है। सामाजिक पहचान ही व्यक्ति की सही उपलब्धि है।

भीष्म साहनी की 'वाइ्चू' और 'ओ हरामजादे' कहानियाँ सिद्ध करती हैं कि यह लेखक अपनी कहानियों में किसी वर्ग की जीवन पद्धति और संस्कृति की केवल आलोचना नहीं करता, ''बल्कि जिन मूल्यों में उनकी आस्था है, उनकी स्थापना भी करते हैं। वैसे तो उनकी आलोचनात्मक कहानियाँ भी मूल्यभावना से ही प्रेरित होती है, पर उनमें वे प्रत्यक्ष रूप से मूल्यों की स्थापना की है।

'साग–मीट' भीष्म जी की एक ऐसी कहानी है जिसमें उच्चवर्गीय परिवेश के साथ–साथ निम्नवर्ग की विसंगत सामाजिक स्थिति का चित्रण किया गया है। यह कहानी एक स्तर पर अफसर व्यक्ति के परिवार की कहानी है तो दूसरे स्तर पर साग–मीट बनाने वाले नौकर जग्गा की कहानी है।

भीष्म जी ने यह कहानी एकालाप शैली में लिखी है जिसमें अफसर की पत्नी अपनी एक सहेली के साथ बातें करते–करते अपने दिल की बातें कहने लगती है। वह यह नहीं जानती कि वह जो कह रही है उससे अफसरी जीवन का सारा पाखंड खुल जायेगा। इस कहानी में अफसर की पत्नी सुमित्रा के लिए

ये सारी घटनाएँ समय बिताने का विषय है। यह कहानी आरंभ से लेक अंत तक पाठकों में एक प्रकार की जिज्ञासा बनाए रखती है। यह कहानी अधिक विस्तारित न होते हुए भी अपना प्रभाव छोड जाती है। इस कहानी में सर्वहारा वर्ग के प्रति शोषक वर्ग कितना कठोर और निर्मम व्यवहार करता है इस बात का चित्रण हुआ है। यह कहानी वर्ग विभाजित समाज में फैल रही अमानवीयता और घृणा को प्रस्तुत करती है।

इस कहानी–संग्रह की 'त्रास' कहानी भी उल्लेखनीय है। वर्तमान समाज में वर्ग संघर्ष के कारण जो अमानवीयता पनप रही है, उसी के परिणाम स्वरूप उच्च वर्ग के लोगों में निम्नवर्ग के प्रति घृणा बढती जा रही है। 'त्रास' कहानी में मोटर चलाने वाले रईस के मन में पैदल चलने वाले और साइकिल चलाने वालों के प्रति एक प्रकार का घृणा का भाव सदा ही रहता है। लेखक यहाँ संकेत करते है कि सम्पत्तिशाली और रईस व्यक्ति के मन में सदा गरीब तबके के प्रति घृणा का ही भाव रहता है। कहानी में मोटर सवार साइकिल वाले को आसानी से बचा सकता था, फिर भी वह साइकिल वाले को कार की ठोकर से घायल कर देता है क्योंकि उसके मन में घृणा है।

भीष्मजी ने इस कहानी में आर्थिक विषमता से जूझने वाले मध्यवर्गीय साइकिल सवार की व्यथा और करूणा का ही चित्रण किया है। लेखक स्वयं प्रगतिशील विचारों से प्रभावित होने के कारण अपनी कहानियों में कहीं न कहीं वर्ग संघर्ष का चित्रण करते है। इस कहानी में भी गाडी सवार के माध्यम वर्ग संघर्ष का चित्रण करते है। इस कहानी में भी गाडी सवार के माध्यम वर्ग संघर्ष का ही चित्रण किया गया है।

'पिकनिक' भीष्म साहनी जी की उन कहानियों में से एक है जिसमें निम्नवर्गीय नारियों के साथ समाज में किस तरह भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता है इसका चित्रण किया गया है। यह कहानी वर्ग विशेष के स्त्री–पुरूषों के अमानवीयता को भी चित्रित करती है तथा समाज के निम्नवर्ग के संघर्ष और जिजीविषा को स्पष्ट करती है।

कहानी में एक स्थान पर यह आता हुआ बदलाव बताया है, जहाँ वकील की पत्नी से वह कहती है, 'उठवा के देख लो, देखे तो हमें कौन यहाँ से उठवाता है।' यह आवाज आधुनिक युग की चेतना है। लेखक ने इस चेतना को एक सीमित मात्रा में ही चित्रित किया है। पर यह संकेत अवश्य किया कि यह आज के समाज का यथार्थ है, जो हमारे जीवन का आवश्यक अंग बनता जा रहा है। इस तरह यह कहानी निम्नवर्ग को अपने अधिकारों के प्रति सजाग करती है।

'राधा–अनुराधा' भीष्म जी की 'पिकनिक' की तरह ही एक ऐसी कहानी है जिसमें दूसरों के घरों में बर्तन मांज कर काम करने वाली निम्नवर्गीय नारी की यथा–शक्ति का चित्रण किया गया है। भीष्म जी ने अपनी अनेक कहानियों में निम्नवर्ग की समस्याओं का चित्रण किया है। राधा–अनुराधा में भी निम्नवर्गीय समस्याएँ है। राधा इस कहानी की हक हेसी नारी है जो निम्नवर्गीय सारी समस्याओं का सामना करते हुए सदा मुस्कुराते रहती है। समस्याओं के प्रति गंभीर होना उसने सीखा ही नहीं। लगता है समस्याओं से जूझते–जूझते उसने जान लिया है कि जीवन का वास्तव यही है। स्वयं लेखक ने उसके विषय में कहा है, तेरह साल की उम्र में ही राधा ने जींदगी का एक बहुमूल्य पाठ सीख लिया था कोई फर्क नहीं पड्ता, किसी बात से कोई फर्क नहीं पड्ता। खाओ, न खाओ। सोओ न सोओ, देर से सोओ, सबेरे जाओ किसी बात से कोई फर्क नहीं पड्ता।

भीष्म जी ने इस कहानी में निम्नवर्ग और मध्यवर्ग की चारित्रिक विशेषताओं को उजागर तो किया ही है पर उसके साथ–साथ जिन मान्यताओं की वे स्थापना करते है वह कहानी में बडी सहजता से हो जाती है। यह कहानी राधा के संघर्ष और जिजीविषा को मुखरित करती है। इस कहानी में उन्होंने राधा के चरित्र को जिस विशिष्ट शैली में ढालकर तराशा है उसके परिणाम स्वरूप राधा का चरित्र बड्ा सजीव बन पड्ा है।

नन्दकिशोर नवल के शब्दों में, ''इस कहानी का राधा एक अद्‌भुत चरित्र है। भीष्म जी ने उसके जीवन में ऊपर से प्रवाहित हास्य और भीतर से प्रवाहित करूणा के संयोग से अत्यंत कुशलता से उसकी मूर्ति का निर्माण किया है। इसके अलावा उसके चरित्र में अन्य विशेषतायें भी मिलती है जो सामान्यत: अन्य किशोरियों में नही होती।''

भीष्म जी ने यह सिद्ध कर दिया कि जिन्हें हम निम्नवर्ग की स्त्री उपेक्षित करते है या हीन भावना से देखते है, उस वर्ग में भी राधा जैसी संघर्षशील नारी जीवन के कटु सत्यों को तेरह साल की उम्र से ही जानने लगती है। वर्तमान समाज में भी नारी को चाहे वह माँ हो, बेटी हो, बहन हो या पत्नी हो। कैसे उपेक्षा की भावना से देखा जाता है यह इस कहानी में स्पष्ट हुआ है।

नि:संदेह 'राधा–अनुराधा' भीष्मजी की श्रेष्ठ और सफल कहानियों में से एक है। इस कहानी के विषय में प्रकाशकीय वक्तव्य में जो कहा गया है वह भी उल्लेखनीय है, राधा–अनुराधा में, ''अभावों और यातनाओं में पली एक निम्नवर्गीय किशोरी नायिका के रोमांस की करूण उच्छवास कथा है।

'वाङ्चू' इस कहानी–संग्रह की सबसे अधिक महत्वपूर्ण कहानी है। इसी कहानी के आधार पर इस कहानी–संग्रह का नामकरण किया गया है। भीष्म जी की उत्कृष्ट और श्रेष्ठ कहानियों में वाङ्चू है। वा्चू के कथ्य के माध्यम से लेखक ने एक ऐसे सत्य का उद्घाटन किया है जिसे आमतौर पर उपेक्षित किया जाता है। वाङ्चू यह कहानी राजनीति से बिमुख बौद्ध भिक्षु की त्रासदी को चित्रित करती है। इस कहानी का केन्द्रीय पात्र वाङ्चू ही है जो एक चीनी शोध छात्र है।

डॉ. रामदरश मिश्र का इस कहानी के विषय में यह मत दृष्टव्य है, ''निश्चय ही यह कहानी बडी ही संश्लिष्ट और सांकेतिक है, कई अर्थ–ध्वनियाँ व्यक्त करती है। दो देशों के आपसी युद्ध के कारण उत्पन्न विभीषका में एक निरीह निरपराध व्यक्ति पिस जाता है। लड्ती है राजनीति और मारी जाती है शिक्षा–संस्कृति।''(८३)

भीष्म जी की यह कहानी संकेत देती है कि साधना, शोध या शिक्षा–दीक्षा का अर्थ यह नहीं है कि हम अतीत के ज्ञान में ही डूबे रहे और अपने शोधछात्र के जीवन की परिणीति क्या हो सकती है इस सत्य को भी भीष्म साहनी ने उद्घाटित करने का प्रयास किया है।

नंदकिशोर नवल का यह कथन बडा सार्थक लगता है, ''वाङ्चू वस्तुत: न चीनी था, न भारतीय। वह मात्र मनुष्य था और इसलिए वह नीची भी था और भारतीय भी। इस बात को गलत राजनीति ने नहीं समझा और मानव–मूल्यों की उपेक्षा की गयी। इस कहानी में जिस भोले–भाले यात्री का चित्रण किया गया है उसकी सहजता और सरलता मात्र कल्पना से निर्मित नहीं की जा सकती।

यह कहानी स्पष्ट करती है कि सामाजिक शक्तियों को समझे बगैर व्यक्ति किसी धर्म को कैसे समझ पायेगा। जीवन से अलग रहकर धर्म को समझ नहीं सकते। वाङ्चू में बौद्ध धर्मदर्शन का आकर्षण है पर भारत और चीन इन दो देशों के युगबोध से वह कटा हुआ है।

वाङ्चू भारत के राजनीतिक, सामाजिक परिवर्तनों से अन्जान रहता है तथा अपने देश की गतिविधियिों से भी बेखबर रहता है।

'खूंटे' इस कहानी–संग्रह की उल्लेखनीय कहानी है। इस कहानी में वर्तमान में जी रहे उस व्यक्ति की वृत्तियों का चित्रण किया गया है जो अभी रिटायरमेंट के करीब आया है। नौकरी करते हुए व्यक्ति कितना लाचार और विवश हो जाता है तथा अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए अपने अधिकारी की चापलूसी किस सीमा तक कर सकता है, इसका यथार्थ चित्रण इस कहानी में किया गया है। 'विनायक' इस कहानी का एक स्वार्थी और सदा ही अपनी बात सोचने वाला कर्मचारी है। वह अपनी नौकरी से

बहुत तंग आ चुका है क्योंकि उसका बोस उसके घर के और बाहर के सभी काम करवा लेता है। इसी कारण विनायक शीघ्र रिटायर होना चाहता है।

इस कहानी में भीष्मजी ने एक ओर जैन जैसे अफसर का चित्रण किया है, जो अपने अफसरी रोब से अपने ऑफिस में काम करने वाले लोगों से घर के सारे काम करवा लेता है। वह एक दृष्टि से शोषण ही करता है तो दूसरी ओर विनायक जैसा सामान्य कर्मचारी है जो आर्थिक विवशताओं के कारण अपने साहब के हर आदेश का पालन करता है। कहानीकार ने इस कहानी में समाज की दो विरोधी वृत्तियों को आमने–सामने रखा है।

यह कहानी स्पष्ट करती है कि किस तरह आज सरकारी नौकरी में अपने सारे अहम्, स्वाभिमान और आशा–आकांक्षा को दूर रखकर साहब की जी–हुजूरी करनी पड्ती है। नौकर–पेशा वर्ग की लाचारी ओर बेबसी का चित्रण इस कहानी में किया गया है।

इस प्रकार भीष्म जी ने इस कहानी संग्रह में आधुनिक जीवन की विसंगतियाँ, मध्मवर्गीय जीवन की आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक समस्याएँ, प्रवासी भारतीयों की मनोव्यथा तथा भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में छायी हुई मोहभंग की स्थितियों का बड्ा ही यथार्थ परख चित्रण किया है। भीष्म जी की यह कहानियाँ उल्लेखनीय है क्योंकि इन कहानियों में कहीं दैनिक जीवन के प्रश्न उठाए गए है तो कहीं मानसिक स्थितियों और प्रवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक विवेचन किया गया है।

४.११.४ : शोभायात्रा

भीष्म साहनी का छठ्ठा कहानी संग्रह जो सन १६८१ में प्रकाशित हुआ इस संग्रह में कुल दस कहानियोँ संकलित की गई है। भीष्मजी के इस कहानी–संग्रह में महानगरीय जीवन की व्यवस्तता, संवेदनाहीन अवसरवादिता तथा गिरते नैतिक मूल्यों का युगीन स्थितियों के संदर्भ में विवेचन किया गया है। ''सीधी–सरल शब्दावली में वर्णित भीष्म जी की कहानियाँ अपनी मूल्यपरक अर्थवत्ता में सदैव विशिष्ट रही है और यह संग्रह इस वैशिष्ट को और अधिक गहराता है। प्रकाशकीय इस वक्तव्य से स्पष्ट हो जाता है कि भीष्म जी की कहानियाँ समाज का दर्शन तो है ही पर उसके साथ–ही–साथ उनमें एक गहरी अर्थवत्ता रहती है।

'शोभायात्रा' कहानी संग्रह की प्रथम कहानी 'निमित्त' है। किस प्रकार से मनुष्य अपने गुण–दोषों को भाग्य और ईश्वर पर छोड्कर यथार्थ परख दृष्टिकोण से दूर हो जाता है, यही इस कहानी का

मुख्य प्रतिपाद्य है वास्तव में यह कहानी एक ऐसे बुजुर्ग की कहानी है, जो हर चीज को भाग्य के आधार पर छोड देते है। उनका यह तकिया कलाम ही है, ''मैं तो यह मानता हूँ कि दाने–दाने पर मोहर होती है।

देश–विभाजन की व्यथा को भीष्म जी ने स्वयं भोगा है इसलिए कहानी में प्रसंग आने पर वे इसका उल्लेख अवश्य करते है।

यह कहानी एक ऐसे भाग्यवादी बुजुर्ग व्यक्ति की मानसिकता को स्पष्ट करती है जो हर चीज को भाग्य पर छोड देते है। मूलत: यह कहानी उन सभी पर कटु व्यंग्य करती है जो मात्र भाग्य के भरोसे हाथ–पर–हाथ रख कर बैठे रहते है।

'खिलौने' कहानी मध्यवर्गीय नौकरी–पेशा वर्ग की समस्याओं को चित्रित करने वाली कहानी है मध्यवर्ग की समस्याओं के साथ–साथ इस कहानी में शहरी जीवन की व्यस्तता को भी चित्रित किया गया है। लेखक ने कहानी में आधुनिक जीवन में किस प्रकार की धारणायें और मान्यताएँ बनती जा रही है उसका भी निरूपण किया है। इस कहानी में दिलीप और वीणा प्रमुख पात्र है ये दोनों आधुनिक जीवन की आपा–धापी में इस तरह व्यस्त हुए कि उनकी संवेदनाएँ ही संकुचित होते गई। लेखक ने इस कहानी में नौकरी–पेशा वर्ग की यथास्थिति और मानसिकता का वास्तविकता निरूपण किया है। महानगरों में नौकरी–पेशा वर्ग में मानवीय संबंधो में जो औपचारिकता आ गई है उसी का उद्‌घाटन कहानी में हुआ है।

'फैसला' भीष्म साहनी जी की श्रेष्ठ कहानियों में से एक है। इस कहानी में वर्तमान समाज व्यवस्था में मानवीय संबंध किस प्रकार से खोखले होते जा रहे है इसका चित्रण किया गया है। यह कहानी स्पष्ट करती है कि वर्तमान युग में सच्चाई और ईमानदारी का दामन पकड्कर चले वालों का हश्र बुरा होता है। राजनीतिक स्तर पर तो भ्रष्टाचार अपनी सीमाओं को लांध ही चुका है। यह कहानी एक ईमानदार और सच्चाई के मार्ग पर चलने वाले शुक्ला नामक जज की है। उन्होंने अपनी माँ को जो वचन दिया था, उसमें खोट न आए। उन्होंने वचन यह दिया था कि, ''वह किसी बेगुनाह को सजा नहीं देगा।''(८४)

भीष्म जी की यह कहानी मात्र न्यायमंदिर में चल रहे भ्रष्ट व्यवस्था की ओर संकेत ही नहीं करती बल्कि सारे तंत्र और न्याय व्यवस्था पर प्रश्नचिन्ह लगाती है।

इस कहानी–संग्रह की 'शोभायात्रा' सबसे अधिक उल्लेखनीय कहानी है। इसी कहानी के आधार पर इस संग्रह का नामकरण किया गया है। भीष्मजी ने बडी कलात्मकता से इस कहानी में युग सापेक्ष सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्त किया है। यह कहानी मूलत: एक ऐसे संदर्भ को लेकर चली है, जो बीते युग के एक विशिष्ट काल को रेखांकित करती है वास्तवमें यह कहानी एक 'रूपक' ही है जिसमें उदयगिरि नामक राजा के धर्मोन्मुख होने की कथा का आधार लिया गया है।महाराजा उदयगिरि ने वर्षो तक दृढता से राज्य संचालन करने के बाद धर्मसेवा और जनसेवा करने की बात ठान ली। वे सोचने लगे कि, ''धर्म के जिस प्रकास से मेरी आँखे खुली है, उसी से मैं अपनी प्रजा की आँखे भी खोलूँगा, उसे सन्मार्ग पर लाने की चेष्टा करूँगा, अज्ञान और मोहमाया के पंक में से उसे निकालूँगा।

भीष्म जी यह कहानी धर्म के नाम पर किए जाने वाले अनाचार और अन्याय को उद्घाटित करती है। लेखक ने जिस रूपक को लेकर कहानी का ढाँचा खडा किया, वह ढाँचा मानवीय संबंधो की सार्थकता पर सोचने के लिए बाध्य करता है। 'अहिंसा परमो धर्म:' को स्वीकार करने वाले महाराज बलि के बकरे को बचाने के लिए अन्य धर्मवलम्बियों की खून की धारा बहते हुए देखकर कुछ नहीं कहते। उन्हें संतोष इस बात का है कि बलि के बकरे के प्राण बच गए। लेखक मार्क्सवादी विचारों के होने के कारण धर्म जैसे विषय पर मात्र तटस्थ रहकर अपने विचार व्यक्त नहीं करते अपितु धर्म और अहिंसा के नाम पर किए जाने वाली हिंसा को भी कलात्मकता से प्रस्तुत करते हैं।

'लीला नन्दलाल की' इस संग्रह की ऐसी कहानी है जिसमें एक मामूली–सी घटना को लेखक ने माध्यम बनाकर मानवीय स्वभाव और संबंधो पर प्रकाश डाला है। कहानी एक स्कूटर की चोरी पर केन्द्रित है। स्कूटर का चोरी हो जाना वर्तमान युग में साधारण सी बात है। पर इस घटना के कारण एक मध्यमवर्गीय परिवार किस तरह से परेशान और त्रस्त होता है, इसका यथार्थ चित्रण कहानी में किया गया है।

भीष्म जी का कहानी कौशल्य सपाटबयानी को लेकर चलता है, पर साथ ही बीच–बीच में जो चिकोटियाँ वे लेते हैं, उससे कहानी का अर्थगांभीर्य बढ जाता है। आज हमारे देश में न्याय–व्यवस्था कितनी अस्त–व्यस्त और भ्रष्ट हो चुकी है, इसे भी कहानीकार ने रेखांकित किया है।

इस कहानी में लेखक ने एक ऐसी घटना का भी चित्रण किया है, जिसमें वर्तमान युग में चापलूसी करके कैसे काम निकाला जाता है, यह स्पष्ट होता है। इसी सिलसिले में लेन–देन का काम

करता है। नन्दलाल के कारण ही 'मैं' को जीवन बीमा–निगम से स्कूटर के भुगतान का चेक प्राप्त होता है इसलिह कहानी को नाम ही 'लीला–नंदलाल की' दिया है।

भीष्म जी की यह कहानी वर्तमान युग की अनेक कुव्यवस्थाओं घर प्रकाश डालती है। वैसे कहानी का मुख्य लक्ष्य न्यायालय में चल रहे भ्रष्टाचार को उजाँगर करना है। किन्तु इसके साथ ही लेखक ने भिन्न भिन्न क्षेत्रो में किस तरह रिश्वतखोरी का बाजार गर्म होता जा रहा है, इसका भी चित्रण किया है।

'शोभायात्रा' संग्रह की अन्य कहानियों में 'मेड इन इटली', 'धरोहर' तथा 'अनूठे साक्षात' जैसी कहानियाँ भी संकलित की गई है। 'मेड इन इटली' कहानी में पाश्चात्य संस्कृति के बढते प्रभाव को लेखक ने रेखांकित किया है। कहानी का शीर्षक ही यह स्पष्ट करता है कि आज भी हमारे देश में जिन वस्तुओं पर मेड इन इटली का लेबल लगाया हुआ होता है वह किमती मानी जाती है। इस कहानी में 'मीरा' नामक एक ऐसी भारतीय नारी का चित्रण है जो रोम के बाजार से एक बैग खरीदती है। उस बैग पर मेड इन इटली का लेबल लगाया हुआ है। पर मीरा को यह ज्ञान होता है कि वह बैग हिन्दुस्तान में ही बना था। वह फिर से बैग को लेकर उस दुकान पर जाती है और दुकानदार से कहती है, ''यह अंदर जो लेबल लगा है उसे कैंची से उतार दो और इसकी जगह मेड इन इटली का लेबल कहीं से उतारकर टांक दो। फिर मैं इसे ले लूँगी।

'धरोहर' कहानी में एक ऐसी बूढी माँ का चित्रण है जो अपने आंगन में आम का पेड लगाती है और चाहती है कि वह पेड अच्छी तरह से फले–फूले। किन्तु उसके बेटे और बहू को उसी पेड से परेशानी होती है। वे नहीं चाहते हैं कि बच्चे और पडोसी उनके आम के पेड का फल खाए। इसलिए वे आम के वृक्ष की टहनियाँ कटवाते हैं। माँ को लगता है कि कुल्हाडी का घाव टहनियों पर नहीं अपितु उसके मन पर पड रहा है। पर बच्चों को इसकी चिंता क्या? वो तो हर चीज को फायदा और नुकसान की नजर से देखते है। माँ कहती भी है, ''मैं तो इसका फल नहीं खाऊँगी, पर कोई तो खायेगा! काई तो इसके छांव में बैठेगा! माँ उस पेड को धरोहर समझकर संजोए रखना चाहती है और उसी का बेटा आम के वृक्ष को संकट समझकर उसे तोड्ना चाहता है, ताकि माँ की इस धरोहर से हमेशा के लिए पिंड छूट जाए।

इस कहानी में लेखक ने दो पीढियों के बीच वैचारिकता और मान्यताओं का जो अंतर है, उसे बडी मार्मिकता से स्पष्ट किया है। इस प्रकार इस कहानी में भीष्म जी ने दो पीढियों की जीवन संबंधी मान्यताओं को ही उद्घाटित किया है।

'अनूठे साक्षात' इस संग्रह की एक ऐसी कहानी है जो तीन भागों में विभाजित की गई है। इसका पहला भाग 'धर्मो' है। इस भाग में लेखक ने नौकरी करने वाली की समस्या पर प्रकाश डाला है। नौकरी करने वाली नारियों को अलग-अलग स्तरों पर कैसे संघर्ष करना पडता है, यह इस भाग में धर्मो नामक नौकरानी के माध्यम से चित्रित किया गया है। कहानी का दूसरा भाग 'बनारस' है। इस भाग में लेखक ने दीन-हीन अवस्था में रहने वाले वगर की व्यथा और पीडाओं को व्यक्त किया है। एक रिक्शावाला किस प्रकार से अनेक कठिनाइयोन का सामना करते हुए अपना जीवन गुजारता है इसे रेखांकित किया गया है। कहानी का तीसरा भाग 'भेंट' है। इस भाग में लेखक ने सास-बहू में चलने वाले विवाद को चित्रित करते हुए माँ के निष्पाप प्रेम का भी निरूपण किया है।

भीष्म साहनी जी का कहानी-संग्रह 'शोभायात्रा' समकालीन परिदृश्य मे व्यवस्था के तीमारदारों की यथार्थ स्थिति को उद्घाटित करते हुए मध्यवर्गीय संघर्ष और द्वन्द्व को भी ईमानदारी से अभिव्यक्त करता है। जनधर्मी भाषा और अभिव्यक्ति की सादगी के कारण इस संग्रह की कहानियाँ आज भी पठनीय लगती है, पर डॉ. पुष्पलाल सिंह जैसे समीक्षक शोभायत्रा संग्रह की कहानियों से संतुष्ट नजर नहीं आते। उनके विचारानुसार ''शोभायात्रा की कहानियाँ हमें इस सोच से हटती दिखाई देती हैं, जिनमें से अधिकांश कोई संशक्ति दिखाई नहीं देती।

इस संग्रह का प्रकाशकीय वक्तव्य दृष्टव्य है, ''अपनी जनोन्मुख दृष्टि, वस्तुगत यथार्थ और रचनात्मक सादगी के लिए इस संग्रह की अधिकतर कहानियाँ क्लासिक का गौरव प्राप्त करने योग्य है। यह कथन इस संकलन की कहानियों की महत्ता को ही प्रतिपादित करता है।

४.११.५ : निशाचर

भीष्म साहनी का सातवाँ कहानी-संग्रह 'निशाचर' है जो १६८३ में प्रकाशित हुआ। चौदह कहानियों के इस संकलन का नाम इसमें संग्रहित एक कहानी निशाचर के नाम पर ही 'निशाचर' रखा गया है। भीष्म साहनी का यह कहानी-संग्रह समकालीन कहानी साहित्य में महत्वपूर्ण है। इस संग्रह की कहानियों में आर्थिक विसंगति और उसकी त्रासदी से गुजरता निम्न-मध्यवर्ग, शोषित और शोषकों का

संघर्ष, भारतीय नारी की मानसिकता आदि विषयों को लेकर लेखक ने विस्तार के साथ कहीं उत्तर दिए, तो कहीं विश्लेषित किया है। यह सच है कि, ''भीष्म जी के पास एक साफ–सुलझी जीवन दृष्टि है, जो उनके अनुभवों को तार्किक व्यवस्था प्रदान करती है। सीधी–सादी शैली में चित्रित इन कहानियों के पात्र परिस्थितियों से आक्रांत होकर किसी काल्पनिक दुनिया में पलायन नहीं करते, बल्कि जिंदगी के कड़ुवाहट भरे यथार्थ से साहस के साथ टकराते है। नि:संदेह इस संग्रह की कहानियाँ लेखक की सृजनशीलता के नए आयामों को ही रेखांकित करती है।

इस कहानी–संग्रह की प्रथम कहानी 'चाचा मंगलसेन' है। इस कहानी में लेखक ने मानवीय संबंध, समय और परिस्थिति के अनुरूप किस प्रकार से परिवर्तित होते हैं और संबंधो में कैसे खटास आ जाती है, इसका बडा ही मार्मिक चित्रण किया है। चरित्र प्रधान इस कहानी का प्रमुख पात्र 'चाचा मंगलसेन' है। चाचा मंगलसेन ऐसी गली में रहते थे, जहाँ केवल पैदल ही जाया जा सकता था। यह जगह गंदगी से भरी हुई थी। चाचा मंगलसेन के भतीजे बलराम को जब किसी ने यह कहा कि, 'तुम्हारे चाचा ने खाट पकड ली है।' तो उसने चाचा मंगलसेन को घर लाने का विचार किया। उसने यह भी सोचा कि बुढापे में चाचा को घर लाकर रखना आसान काम नहीं है और फिर उसे पत्नी का भी ख्याल आया। लगा वह भी नहीं मानेगी और यही कहेगी कि, ''तुम्हें अपने चाचा की बहुत फिक्र होने लगी, मेरे माँ–बाप की कभी तुमने सुध नहीं ली, और इधर दूर–पास के किसी चाचा को लाकर मेरे छाती पर बिठा दिया। तुम तो दिन–भर बाहर रहोगे, पिसूँगी तो मैं।

सामाजिक संबंधो पर प्रकाश डालती यह कहानी उन संदर्भो को रेखांकित करती है, जहाँ आदमी अपनी स्वतंत्रता पर किसी भी प्रकार का कोई नियंत्रण पसंद नहीं करता। चाहे वह बूढा मंगलसेन क्यों न हो। भीष्म जी की चरित्र प्रधान कहानियों में 'चाचा मंगलसेन' यह कहानी उल्लेखनीय है।

इस कहानी–संग्रह की 'निशाचर' कहानी सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। आर्थिक विपन्नता में रहते हुए जिन संघर्षो से स्त्री को गुजरना पडता है इसका अत्यंत मार्मिक चित्रण इस कहानी में केसरों नामक एक कागज बटोरनेवाली स्त्री के चरित्र के माध्यम से किया गया है। गरीबी और लाचारी से जूझता हुआ हमारे देश में ऐसा वर्ग भी है जिसका गुजारा रद्दी बटोरने के काम से होता है। सडक पर जो रद्दी मिले उसे कंधे पर लटकाये बडे से थैले में डालना, इस वगर का काम है।

क्या मनुष्य का जीवन आर्थिक समस्याओं के कारण इतना संवेदनहीन हो चुका है कि ठंड से ऐंठी हुई बेटी को होश में लाने के लिए उसे अपनी रद्दी बेकार में जलने का दु:ख अधिक है। केसरो की

स्थिति बिल्कुल ऐसी ही हो चुकी है। उसने अपनी सारी रद्दी इसलिए तो नहीं जुलाई कि बेटी की ठंड से रक्षा हो अपितु इसलिए जलाई कि जमादार जाएगा तो खुद रद्दी को जलाकर आग तापने बैठ जायेगा। आर्थिक दृष्टि से विवश रद्दी बटोरने वाली स्त्री की यह करूण कथा समाज अर्थहीनता को सिद्ध करती है। इस कहानी से स्पष्ट होता है कि निशाचर की तरह घूमने वाली केसरो के लिए रद्दी बटोरकर बेचना महत्वपूर्ण है न कि अपनी बेटी को ठंड से बचाना। अर्थ की महत्ता तथा भूख की समस्या किस अमानवीय स्तर तक पहुँच चुकी है निशाचर कहानी जीवन के इस कटु सत्य को ही उद्घाटित करती है। भीष्म जी ने इस कहानी में निम्नवर्ग की आर्थिक समस्याओं का चित्रण करते हुए मानवीय संबंध कितने निष्ठुर होते जा रहे है, इसे दर्शाया गया है।

'संभल के बाबू' इस कहानी में लेखक ने घरो में काम करने वाले नौकर वगर में जो चेतना जाग रही है, उसका चित्रण किया है। साथ ही साथ भीष्म जी ने वर्तमान और बीती पीढी में जो समझ का अंतर है उसे भी पिता और पुत्र को आमने–सामने रखकर स्पष्ट किया है। साम्यवादी विचारों का प्रभाव होने के कारण लेखक ने श्रमिक वर्ग की समस्या को मुखरित करने का प्रयास किया है। लेखक यहाँ यह भी संकेत देना चाहता है कि वर्तमान युग में नौकर वर्ग के साथ यदि ठीक से बर्ताव नहीं किया गया तो वे अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए काम छोड्कर चले जाते है। श्रमिक वर्ग के भीतर अपने अधिकारों के प्रति जो जागृति हुई है उसी का चित्रण लेखक ने इस कहानी में किया है।

'जहूर बख्श निशाचर कहानी–संग्रह की एक अतिसंवेदनशील और मार्मिक कहानी है। सांम्प्रदायिकता का भूत जब मनुष्य के सिर पर सवार होता है तो वे न आगे देखता है ना पीछे। वह अपनी धुन में न जाने क्या–क्या कर डालता है। 'जहूर बख्श' की कहानी साम्प्रदायिक दंगो के दुष्परिणामों की कहानी है। स्वयं लेखक ने इस कहानी के अंत में यह कहा कि यह एक सच्ची कहानी है जिसे उन्होंने सुभद्रा जोशी के मुँह से सुनी थी।'[८५] जहूर बख्श के विषय में लेखक ने ही कहा है कि, ''इस नाम के तो सैकडो–हजारों लोग होंगे। नहीं, मेरी मुराद उस जहूर बख्श को कभी नहीं भूल पाओगे। वह तुम्हारे दिल में उतर जायेगा और तुम्हारा दिल भी मेरी तरह उसे याद करके भर आयेगा।

भीष्म जी की यह कहानी समाज की भीड में न सिर्फ गुम होते हुए देखती है, बल्कि आदमी किस तरह आदमी की पहचान खो बैठता है, यह भी स्पष्ट करती है। जहूर बख्श ने सपने में भी नहीं सोचा था कि जिस भाषा से उसे लगाव है, और जिस हिन्दी से उसे प्रेम है वही लोग उसे 'म्लेच्छ'

कहकर तिरस्कृत करेंगे। वास्तव में, ''एक कहानी वह होती है जो लेखक लिखता है, एक कहानी वह होती है जिसे वह जीता है, तिल–तिल कर जीता है। और जहूर बख्श यही कहानी जी रहा था।

निशाचर कहानी–संग्रह की 'मुर्ग–मुसल्लम' एक बडी रोचक कहानी है। इस कहानी में देश की वर्तमान खोखली राजनीति पर जहाँ प्रकाश डाला गया है, वहाँ देश के जेलखानों की यथास्थिति का चित्रण करते हुए अन्डर–ट्रायल कैदी किस तरह अपना जीवन बिताते है इसका भी दिलचस्प निरूपण किया गया है। इसी कहानी के माध्यम से लेखक यह भी कहना चाहते है कि आजादी से पूर्व जब लोग जेल में जाते थे, तब उनके सामने देश को दासता के बंध से मुक्त करने का विशिष्ट प्रयोजन हुआ करता था। किन्तु आजादी के पश्चात लोग जेल में इसलिए जाते है कि वहाँ उन्हें अय्याशी का जीवन जीने का अवसर मिलेगा। इस तरह यह कहानी बावर्ची की कथा–व्यथा भी व्यक्त करती है। भीष्म जी ने इस कहानी के द्वारा वर्तमान विविध क्षेत्र में और व्यवस्था में जो भ्रष्टाचार चल रहा है उसे रेखांकित किया है।

'सलमा आपा' और 'सरदारिनी' इस संग्रह की दोनों ऐसी कहानियाँ है, जिसमें पाकिस्तान के निर्माण के पश्चात हिन्दू और मुसलमानों में दुश्मनी की दरारें पडने के बाबजूद, जो स्नेह और इंसानियत बाकी थी इसी का उद्घाटन लेखक ने इन कहानियों में किया है। 'सलमा आपा' कहानी में सामाजिक का एक ऐसा रूप देखने को मिलता है जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। यह कहानी सिद्ध करती है कि देश–विभाजन की खून बहाने वाली प्रक्रिया के बाद भी मानवीयता जीवित है। और कुछ मानवीय संबंध ऐसे होते है जिन पर किसी भी प्रकार का लेबल नहीं लगाया जा सकता।

एक स्थान पर कहा भी गया है, 'समुचे देश लौटे वर्षो बीत चुके है, जिंदगी कितने ही मोड काट चुकी है, लेकिन सलमा आपा के भाई का चेहरा बार–बार आँखो के सामने आ जाता है। वह इंसान नहीं, फरिश्ता थे। यह कथन स्पष्ट करता है कि हिन्दू और मुसलमान इस जाति के रिश्ते को तो हमने बनाया है। पर एक धरातल पर ये दोनों सिर्फ इंसान हैं। इंसानियत का तगाजा यह है कि मानवीय संबंध स्थापित करते हुए एक–दूसरे के प्रति प्रेम का भाव बढाए। भीष्म जी की कहानी 'सलमा आपा' यही संदेश देते हुए सामाजिक संबंधो की विधायक पहचान को और अधिक विधायक बनाना चाहती है।

'सरदारनी' कहानी के केन्द्र में हिन्दू और मुसलमान जाति के दंगे और फसाद है। यह सच है कि दंगे या फसादों में हिंसा, अमानवीयता, क्रुरता आदि अपने पूरे उभार पर होती है। दंगाग्रस्त लोगों की मानसिकता असंतुलित और घातक होती है। किन्तु कई बार ऐसे अमानवीय और घातक प्रसंगोमें भी मानवता और मानवीय संबंधों का वह रूप देखने को मिलता है जिसके सम्मुख हर आदमी नत–मस्तक

हो जाता है। 'सरदारनी' कहानी ऐसी ही सत्य घटना पर आधारित है। इस कहानी में एक सरदारनी का चित्रण किया गया है। सर्वसामान्य–सी दिखाई देने वाली सरदारनी ने यह सिद्ध कर दिया कि नारी दुर्बल और असहाय नहीं होती।

भीष्म जी ने कहानी में नारी जाति के दृढ निश्चय और साहस को जिस रूप में व्यक्त किया है उससे स्पष्ट हो जाता है कि स्त्रियाँ दुर्बल नहीं होती। यदि उनमें दृढ निश्चय है तो वह परिस्थिति और पुरूषों के हुजूम को भी अपने सामने झुकने के लिए विवश कर देती हैं। दंगा और फसाद इन कहानी का मुख्य विषय है पर उसके माध्यम से लेखक ने मानवीय संबंधो के ऐसे पहलू को उजागर किया है जात–पात और धर्म सम्प्रदाय से ऊँचा उठा हुआ है।

भीष्म साहनी का यह कहानी–संग्रह एक लेखक की सृजनशीलता ने नए आयामों को रेखांकित करता है। इस संग्रह की कहानियों में विषय की विवधिता भी देखने को मिलती है। कहीं आर्थिक विषमता का चित्रण है तो कहीं सामाजिक विद्रुपताओं को उद्घाटित किया गया है। किसी कहानी में मनुष्य के आत्मिक संबंधो पर प्रकाश डाला गया है तो कहीं शोषक और शोषितों के संघर्ष को चित्रित किया गया है। विषय, कथ्य और पात्रों की दृष्टि से भीष्म जी का यह कहानी संग्रह महत्वपूर्ण है। ''इस संग्रह की कहानियाँ समाज के बदलते–बिगड्ते रूपों को जिस आत्मीयता के साथ हमारे सामने उभारती है, वह हिन्दी कथा–साहित्य की अमूल्य निधि है। वास्तवमें सीधी–सादी और सरल शैली में लिखी गई भीष्म जी की ये कहानियाँ ऐसे पात्रों का सृजन कर गई जो विपरीत स्थितियों से पलायन न कर साहस के साथ संघर्ष करते है। इसी कारण यह कहानी–संग्रह उल्लेखनीय है। इस कहानी–संग्रह की एक और विशेषता इसकी सहज और स्वाभाविक भाषा शैली है।

४.११.६ : पाली

भीष्म साहनी का आँठवाँ कहानी–संग्रह 'पाली' है। जो सन १६८६ में प्रकाशित हुआ। 'पाली' इस संग्रह की पहली कहानी है और इसी के आधार पर इस कहानी–संग्रह का नामकरण किया गया है। इस कहानी–संग्रह की कहानियों में भी विषय की विविधता के साथ–साथ कई समसामयिक ज्वलंत प्रश्नों को उकेरा गया है। आधुनिक युग में बढती मूल्यहीनता, धार्मिक परम्परा और रूढियाँ, रचनाकार की सृजनशीलता जैसे महत्वपूर्ण विषयों को लेकर भीष्म जी ने इस संग्रह में उत्कृष्ट कहानियाँ लिखी है।

साहित्य के प्रति भीष्म जी का दृष्टिकोण ही मूलत: मानवतावादी होने के कारण मानवीय संबंधो को विभिन्न स्तरों पर उन्होंने विश्लेषित किया है।

इस कहानी–संग्रह की शीर्षक कहानी 'पाली' देश–विभाजन की त्रासदी पर आधारित है। पाकिस्तान की निर्मिती और देश–विभाजन ने एक बहुत बडी समस्या हमारे सामने उपस्थित की थी। यह समस्या थी शरणार्थियोंकी। भीष्म साहनी विभाजन की समस्या को खुद भोग चुके है और बंटवारे की त्रासदी कितनी भयानक होती है, इसी का चित्रण 'पाली' कहानी में हुआ है। लेखक ने कहानी के प्रारंभ में ही मानवीय जीवन के कटु यथार्थ को व्यक्त करते हुए कहा है कि, ''बात कभी खत्म नहीं होती। जिन्दगी के छोर कभी एक–दूसरे से नहीं मिलते, न जीवन में, न कथा–कहानियाँ में। हम केवल इस आशा में जीते रहते है कि एक दिन वे मिलेंगे और कभी–कभी हमें ऐसा भ्रम होने लगता है कि वे सचमुच मिल गए है।

भीष्म साहनी की यह कहानी अनेक स्थलों पर समाज को अंकित करती है विभाजन के समय न जाने कितनी त्रासद घटनाएँ हुई होंगी जो समाज के संबंधो को नया अर्थ दे गई। यह कहानी जहाँ मनोहरलाल और कौशल्या के विदीर्ण हृदय की करूण पुकार है वहाँ जैनब की आँखो से बहते आँसुओं की वह पीडा और वेदना भी है, जिसकी कीमत केवल सूनी गोद वाली जैनब ही जानती है।

'झुटपुटा' इस कहानी–संग्रह की दंगे और फसाद को लेकर लिखी हुई कहानी है। 'झुटापुटा' में दिल्ली में सिक्खों के विरूद्ध जो दंगे हुए उसका चित्रण किया गया है। पर दंगे, दंगे ही होते है। क्योंकि दंगो के पीछे जो तत्व सक्रिय रहते है, वे असामाजिक और विनाशकारी होते है।

भीष्म जी ने इस कहानी में यह तो स्पष्ट किया ही है किस तरह अफवाहें फैलती हैं या फैलायी जाती है तो जनसामान्य आतंकित होता है। आम आदमी इस तरह की वारदातों से परेशान हो जाता है। बाजार, पाठशालाएँ और अन्य सामाजिक गतिविधियाँ रूक जाती है तो साथ ही हिंसा का ऐसा रूप दिखाई देता है, जिसकी हम कल्पना नहीं कर सकते। पर ऐसे अवसरों पर भी कोई न कोई बच्चों के लिए दूध की गाडी लेकर आने वाला मिल ही जाता है।

'मरने से पहले' इस संग्रह की एक उल्लेखनीय कहानी है। इस कहानी में लेखकने तिहत्तर वर्ष के एक बूढे की मानसिकता को बडी मार्मिकता से व्यक्त किया है, जो भिन्न–भिन्न कार्यालयों के चक्कर काटते–काटते थक गया था। व्यक्ति सोचता कुछ और है और होता कुछ और है। मरने से पहले मनुष्य मनसूबे बांधता है और योजनाएँ बनाता है। पर अचानक जब मौत सामने खडी हो जाती है तो सब कुछ

छूट जाता है। कहानी में तिहत्तर वर्ष के बूढे को मरने से एक दिन पहले तक अपनी मौत का कोई पूर्वाभास नहीं हुआ था। इतना अवश्य है कि उसे थोडी थकान थी और थोडी–सी–खीज थी। फिर भी वह अपने जमीन के टुकडे को लेकर तरह–तरह की योजनाएँ बनाता था।

भीष्म जी यह कहानी एक बूढे के संघर्ष के पराजय की कहानी नहीं है, बल्कि यह कहानी है समाज में फैले उस भ्रष्टाचार की जहाँ हर चीज की कीमत पैसा ही है। विविध सरकारी कार्यालयो में भ्रष्टाचार किस तरह पनप रहा है इसकी ओर लेखक ने संकेत किया है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में हर शासकीय कार्यालय में भ्रष्टाचार ऐसे पनपा कि भ्रष्टाचार ही शिष्टाचार हो गया। भ्रष्ट तंत्र का यह कहानी पर्दाफाश करती है।

इस कहानी–संग्रह की 'देवेन' एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो जीवन में अकेला अपनी माँ के साथ रहते हुए दिन बिताता है। इस व्यक्ति का नाम देवेन है। देवेन को देखते ही सबसे पहले दिल में कुछ अकुलाहट–सी महसूस होती है। सड्क पर उसे चलते हुए देखे तो उसकी चाल–ढाल से लापरवाही झलकती है।

देवेन की माँ समतल विचारों की संतुलित नारी है। वह हमेशा विवेकपूर्ण और तर्क संगत बोलती थी। देवेन को अपनी माँ से शिकायत भी थी। एक स्थान पर वह कहता था कि,''वह पैसे को दांतो से पकड्ती है। वह समझती है मैं घर–बार बेचकर कहीं भाग जाऊँगा। उसे सारा वक्त इसी बात की चिंता लगी रहती है। यह सब कहने के बाद भी देवेन को सबसे अधिक चिंता अपनी माँ की ही थी। देवेन कुछ लिखने के लिए घर से निकला था। पंद्रह दिन के बाद वह घर की ओर लौटा पडा। घर पर आया तो माँ की जांध की हड्डी टूट चुकी थी। माँ ने उसे देखते ही कहा, 'अच्छा हुआ जो जांध की हड्डी टूट गई थी। अब तू कुछ दिन घर पर तो रहेगा।' यह कहते–कहते उसकी आँखे भर आई और उसने कहा, 'तुम्हें ज्यादा दिन तक नहीं रोकूँगी, बच्चा। तू जल्दी ही आजाद हो जायेगा।'

भीष्म जी की यह कहानी वर्तमान काल में खून के रिश्ते कैसे परिवर्तित होते जा रहे हैं इसका चित्रण करती है। साथ ही में यह भी स्पष्ट करती है कि बदले हुए इन रिश्तों में जहाँ घृणा है वहाँ आत्मीयता भी है। माँ–बेटे के माध्यम से लेखक ने सामाजिक संबंधो को विशिष्ट संदर्भ में कहानी चित्रित किया है। देवेन जैसे लेखक के जीवन में आर्थिक अभाव के कारण जो विषम स्थितियाँ बन गई थी लेखक ने उसका भी मार्मिक चित्रण किया है यह कहानी समाज के एक विशिष्ट वर्ग की सामाजिक स्थिति पर प्रकाश डालती है। देवेन जैसे कई नवयुवक हमें वर्तमान समाज में देखने को मिलेंगे। साथ ही

इसमें लेखक ने यह भी दर्शाया है कि वर्तमान समाज में लेखक को कितनी उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है।

'खुशबू' आर्थिक शोषण और विषमता को दर्शाने वाली भीष्म जी की एक उत्कृष्ट कहानी है। भीष्म जी की अधिकतर कहानियों में हम देखते है कि लेखक दायित्वबोध से जुडा होने के कारण सामाजिक परिवेश से जुडा हुआ है। इसी कारण साधारण लोगों के जीवन की छोटी–छोटी घटनाओं को लेकर उन्होंने यथार्थवादी कहानियाँ लिखी हैं। 'खुशबू' भी जीवन के इसी कटु यथार्थ को मुखरित करती है। इस कहानी में लेखक ने आर्थिक भेदभाव और विषमता स्मशान भूमि में भी छाई हुई है इस कटु सत्य को उद्घाटित किया है।

भीष्म जी की यह कहानी आर्थिक विषमता के कुचक्र को स्पष्ट करती है। एक सुप्रसिद्ध और आर्थिक दृष्टि से संपन्न व्यक्ति के दाह–संस्कार के माध्यम से लेखक ने दर्शाया है कि किस तरह समाज में आज भी गरीब और अमीर आदमी के साथ भेदभाव किया जाता है। लेखक ने यहाँ पर भिन्न–भिन्न व्यक्तियों की प्रतिक्रियाओं को रेखांकित किया है, जिसमें मदनगोपाल की मुक्त कंठ से प्रशंसा की गई थी। लेखक इस कहानी के माध्यम से यह संकेत देते है कि मनुष्य के व्यवहार पर आर्थिक स्थिति का ही अधिक प्रभाव रहता है। समाजवादी विचारधारा से जुडे रहने के कारण भीष्मजी ने पूँजीवाद के बढते प्रभाव से बदलते सामाजिक, पारिवारिक और मानवी संबंधो को इस कहानी में स्पष्ट किया है।

'झूमर' भीष्म जी की स्वाधीनता संग्राम से जुडी कहानी है। देश–विभाजन की त्रासदी को उन्होंने सहा है यह त्रासदी उनकी कहानियों और उपन्यासों में अनेक स्थलों पर व्यक्त हुई है। स्वाधीनता संग्राम भारतीय इतिहास की महत्वपूर्ण घटना है। स्वाधीनता संग्राम मे इस देश के लाखों लोगों ने सक्रिय भूमिका निभाते हुए अपने देश के लिए अपने जीवन का बलिदान दिया। देश के लिह बलिदान देने वालों के कारण ही देश स्वतंत्र हुआ। स्वतंत्रता के पश्चात देशभक्तों को सरकार की ओर से मुआवजा मिलने वाला है, ऐसी खबर लोगों को मिली। मुआवजे की बात सुनकर कुछ लोग देशभक्त होते हुए भी कितने स्वार्थी बन जाते हैं, इसका अत्यंत प्रभावशाली चित्रण 'झूमर' कहानी में हुआ है।

लेखक ने इस कहानी में स्वाधीनता संग्राम में हिस्सा लेने वाले देशभक्तों के साथ–साथ एक ऐसे युवक का भी चित्रण किया है, जिसकी रूचि नाटक और रंगमंच में अत्याधिक थी।

भीष्म साहनी की यह कहानी यही संदेश देती है कि हर युग में और हर पीढी में ऐसे भी लोग होते हैं जो आदर्शो की रक्षा करने के लिए अपने जीवन को समर्पित करते रहते हैं। एक दूसरे स्तर पर यह कहानी देशभक्तों की व्यथा को भी व्यक्त करती है और मुआवजे के लिए देशभक्तों में चल रही स्पर्धा को भी व्यक्त करती है।

'नौसिखुआ' इस कहानी–संग्रह की उल्लेखनीय कहानी है जो आतंकवाद के विषय को लेकर लिखी गई है। यह आतंकवाद किसी बाहरी देश का नहीं बल्कि पंजाब का है। लेखक ने इस कहानी में एक ऐसे युवक का चित्रण किया है।

'पाली' भीष्म साहनी जी की उत्कृष्ट कहानियों का महत्वपूर्ण संग्रह है। भीष्म जी की कथा–यात्रा का यह हक उल्लेखनीय पडाव है। लेखक ने इस कहानी–संग्रह की कहानियों में विविध क्षेत्र से जुडे हुए भिन्न–भिन्न विषयों से लेकर अनेक प्रश्न उपस्थित किए है। समाज में बढती मूल्यहीनता, बदलते जीवन के मानदंड, आतंकवाद, सांम्प्रदायिक दंगे, असामाजिक तत्वों की निरंतर बढती सक्रियता जैसे चर्चित विषयों को लेकर भीष्म जी ने इस संग्रह में अनेक कहानियाँ लिखी है जिस युग में उनका जीवन व्यतीत हुआ उसका चित्रण तो कहानियों में हुआ है।

उनकी कहानियों के पात्र सामाजिक परिवर्तन के लिए सदा ही संघर्षरत रहते हैं। खुद लेखक मार्क्सवादी और समाजवाद ऊपर से थोपा नहीं गया है।

४.११.७ : डायन तथा अन्य कहानियाँ

यह भीष्म जी का अंतिम कहानी–संग्रह है जो सन् १९६८ को प्रकाशित हुआ। इस संग्रह की कहानियों में युगीन स्थितियों का बडा ही मार्मिक चित्रण देखने को मिलता है। इस संग्रह की कहानियों में युगीन यथार्थ को लेखक ने इतिहासबोध के साथ अभिव्यक्त किया। भीष्म जी की वैचारिकता कभी भी किसी एक विशिष्ट दायरे में बंधकर नहीं रही। ''कहानी के कई आंदोलन आए और गए लेकिन भीष्म साहनी अपनी जगह कायम रहे। अपने विश्वबोध, यथार्थ चेतना, व्यापक अनुभव, सही वैचारिक परिप्रेक्ष्य और गंभीर इतिहासबोध का उपयोग, वे अमानवीय संबंधों के विरोध और समानता के उद्देश्य वाले लेखन के लिए करते रहे। संभवत: यही कारण है कि उनके लगभग हर कहानी–संग्रह में विभाजन की कसक को या दिलाने वाली 'बीरो' कहानी बडी ही मार्मिक बन पडी है। भीष्म जी का यह कहानी संग्रह अपने कथ्य और शिल्प में पूरी विशेषताओं के साथ मौजूद है।

'डायन' इस कहानी–संग्रह की प्रथम कहानी है और इसी के आधार पर इस कहानी–संग्रह का नामकरण किया गया है। भीष्म जी की इस कहानी में मध्यवर्ग में प्रचलित अंधश्रद्धा का चित्रण हुआ है। अंधश्रद्धा मनुष्य को किस प्रकार से तथ्य और वास्तविकता से दूर ले जाती है इसे कहानी में लेखक ने एक माँ के चरित्र के माध्यम से स्पष्ट किया है। जब घर में बडे या बुजुर्ग लोग जो बात करते है तब घर के अन्य सदस्य उसे ही सही मानकर चलते है। इस कहानी में एक मध्यवर्गीय परिवार है इनकी आटे–दाल की दुकान है। इसी पर उनका उदर निर्वाह होता है।

भीष्म जी ने इस कहानी में माँ के रूप में एक ऐसी नारी का चित्रण किया है जिसमें अंधविश्वास कूट–कूट कर भरा है। माँ परिवार के हर सदस्य को चाहती है और अपने तीनों बेटों के विषय में उसके मन में अगाध स्नेह है। किन्तु जैसे ही इनके घर में बहू आयी तो माँ उस बहू को प्रारंभ से ही डायन करार देती है। अंधविश्वास भी मनुष्य को किस तरह से भ्रमित कर देता है यह इस कहानी में बडी मार्मिकता से अंकित किया गया है। साथ ही साथ लेखक ने मध्यवर्गीय परिवार में दो पीढियों की मानसिकता में जो अंतर है उसे भी बडे मनोरंजक ढंग से प्रस्तुत किया है।

'मकबरा शाह शेर अली' इस कहानी–संग्रह की व्यक्ति की मानसिकता का स्पष्ट करने वाली कहानी है। मानवीय जीवन में संबंधों की पहचान व्यक्ति से होती है। पर कई बार संबंध या लगाव बेजान वस्तु से भी हो जाता है। यह कहानी इसी प्रकार के लगाव को उद्घाटित करती है। वास्तव में शाह शेर अली के मकबरे का किस्सा बहुत पुराना था। जिसे कहानी निवेदक ने अपने दादा से और दादा ने अपने दादा से सुना था। इस मकबरे का खण्ड्हर अब भी मौजूद है। इन खण्ड्हरों को देखकर ही लगता है कि यहाँ कभी बडी शानदार इमारत रही होगी। इसे ही शाह शेर अली का मकबरा कहा जाता था। जब शाह शेर अली जिंदा था तब भी सैलानियों की भीड मकबरे पर लगी रहती थी। शाह शेर अली ने यह मकबरा खुद अपने जीते जी अपने लिए बनवाया था, उस समय इसे खाली कब्र वाला मकबरा कहा जाता था। पर यह भी अजब है कि मकबरे में कब्र खाली है तो वह मकबरा कैसे हो सकता है। शाह शेर अली बडा महत्वाकांक्षी राजा था। उसके राज्य में यह मकबरा ही एकमात्र भव्य इमारत नहीं थी। उसका बहुत बडा राजमहल भी था जो इस मकबरे के निकट ही स्थित था।

भीष्म जी की यह कहानी स्पष्ट करती है कि आदमी जो सोचता है और जो मनसूबे बांधता है जिंदगी में उसके विपरीत ही होता है। शाह शेर अली ने जो मकबरा अपने लिए बनवाया था वह उसके मरने के बाद भी उसे नसीब नहीं हुआ। यह कहानी मात्र भाग्य की विडम्बना नहीं है क्योंकि लेखक

भाग्यवादी नहीं है। यह कहानी शाह शेर अली के खुद के कर्तव्य की कहानी है जो कृति के अनुसार ही उसके परिणामों को भोगने वाले की व्यथा कहती है। इतिहास का आभास देने वाली यह कहानी ऐतिहासिक नहीं है। एक व्यक्ति की महत्वाकांक्षा का जो श्रय होता है उसकी कहानी है।

'चेहरे' इस कथा–संग्रह की एक कथाकार के जीवन की कहानी है। भीष्म साहनी ने इस कहानी में एक लेखक की उस व्यथा का चित्रण किया है जिसने, लिखा तो बहुत कुछ है पर उसका छपा कुछ भी नहीं। सफलता या प्रसिद्धि न मिलने पर एक लेखक के जीवन की क्या परिणिति हो सकती है इसे इस कहानी में मार्मिकता से रेखांकित किया गया है। उनके शब्दों में ''यह आदमी रहन–सहन के सामान्य नियमों को भी भूल चुका है।''(८६)

यह कहानी एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो जीवन में बनना कुछ चाहता था पर बन कुछ और गया। संभवत: इसी कारण उसकी जिंदगी में एक जिलजिलापन आ गया था। लेखक होने की पीडा या त्रास क्या हो सकता है इसे भीष्म साहनी जी ने इस कहानी में बडी मार्मिकता से अंकित किया गया है। यह कहानी एक असफल लेखक की मनोव्यथा को ही व्यक्त करती है।

इस कहानी–संग्रह में 'बीरो' और 'मुझे मेरे घर छोड आओ' ये दोनों कहानियाँ देश–विभाजन की त्रासदी पर आधारित है। बीरो भीष्म जी की चर्चित कहानी है। यह कहानी देश–विभाजन की समस्या पर आधारित है। देश–विभाजन के समय कई हिन्दू और मुसलमान अपने–अपने परिवारों से बिछुड गए थे। बीरो भी इसी तरह बिछड गई थी। बीरो खुद अपने बेटे से इस घटना का उल्लेख करते हुए कहती है, ''जब पाकिस्तान बना तो मैं कही खो गई थी। मेरे माँ–बाप और सगे–संबंधी बसों में चढकर चले गए थे। मैं भीड में ही खो गई थी। तब मैं बहुत छोटी थी।''

भीष्मजी की कहानी समाज के दर्शन को उजागर करती है। विभाजन के समय न जाने कितने बीरों को अपने परिवार से बिछड्ना पडा होगा। देश–विभाजन की त्रासदी ने अनेक घरों को, दिलों को उजाडा है। बीरों जैसी भाग्यशाली बहुत कम स्त्रियाँ होगी जिन्हें उनका भाई मिला हो। यह कथन ठीक ही लगता है, ''आत्मिक मेल रहा है भारत–पाक की जनता में। शायद सीमा की दीवार थोडी मुलायम हो और बीरो को न रोना पडे''(८७) जीवंत अतीत को लेकर लिखी गई भीष्म जी की यह कहानी सिद्ध करती है कि समाज के दर्शन को और रिश्तों को कभी भुलाया नहीं जा सकता।

इसी विषय पर भिन्न संदर्भ को लेकर चलने वाली दूसरी कहानी है, 'मुझे मेरे घर छोड आओ'। यह कहानी भी देश के बँटवारे के दिनों की है। शरणार्थियों से भरी रेलगाडी वजीराबाद स्टेशन

जा पहुँची। तभी डिब्बे में से एक बुजुर्ग लोटा हाथ में लेकर पानी लेने के लिए उतरा। नल पर पहले से ही भीड थी। सभी हड्बडाए हुए थे। हर कोई पानी के लिए दौड रहा था। इतनी भीड में इस बुजुर्ग का नल तक पहुँचना असंभव था। 'मुझे दो घूँट पानी दो। मैं प्यासा मर जाऊँगा।' ऐसा बूढा बार–बार चिल्लाए जा रहा था। पर वहाँ कौन सुनता। तभी गाडी ने सीटी दी और लोग पानी छोड्कर अपने अपने डिब्बे की और भागने लगे। बूठा कभी नल की ओर तो कभी रेलगाडी की ओर देख रहा था। इस स्थिति को देखकर डिब्बे के अंदर बैठे लोगों ने कहा, ''लौट आओ लालाजी, गाडी छूट रही है।' बूढा बिना पानी लिए लौट आया। एक मुसाफिर ने दिल कडा करके अपनी सुराही में से दो बूँद पानी उसके मुँह में डाला। थोडी देर के बाद ही बूढा बिलख–बिलख कर कहने लगा, ''मैं अपने घर जाऊँगा। मुझे मेरे घर छोड आओ।' पर डिब्बे में सभी शरणार्थी थे। किसी को भी दूसरे के घर का पता न मालूम था। सभी अपना–अपना घर छोड आये थे। बूढे को उसके घर कौन पहुँचायेगा। पर बूढा एक ही रट लगाए था कि 'मुझे मेरे घर छोड आओ।'[८८]

भीष्म जी की यह लघुकथा मन पर गहरा असर करती है। कहानी यह सोचने को मजबूर करती है कि क्या समाज इतने अर्थहीन हो गया है? आदमी–आदमी को पहचानने के लिए तैयार नहीं। जिस घर में सारी उम्र व्यतीत हुई उस घर में भी पहुँचने के लिए मनुष्य के पास अब कोई रास्ता नहीं रहा। देश–विभाजन की विभीषिका ने मानो मनुष्य की सारी संवेदनाओं को ही बधीर कर दिया। यह कहानी मनुष्य के अस्तित्व और पहचान पर भी प्रश्नचिन्ह लगाती है।

'डायन' इस कहानी–संग्रह की सर्वोत्कृष्ट कहानी 'वापसी–च–वापसी' है। इस कहानी में भीष्म जी ने अंतर्जातीय प्रेम–विवाह की समस्या का चित्रण किया है। शिवनाथ उर्फ शिब्बू ने विदेश में पहुँचने के बाद वही किया जो अधिकांश हिन्दुस्तानी करते है। ''नीली आँखो पर मर मिटा। देर–सेवर का मानों सवाल ही नहीं उठता था, जैसे प्यासा पक्षी फड्फडाता हुआ पानी की ओर लपकता है, शिब्बू कात्या नाम की उस युवती की ओर लपक पडा।'' दोनों में इसी तरह प्रेमरोग बढता गया। कुछ दिनों के बाद उनकी शादी हुई। जिस भारतीयता से भागकर शिब्बू विदेश आया था, उसी भारतीयता ने सभी परते तोड्कर बाहर सिर निकाला। विवाह के बाद शिब्बू प्रेमी नहीं रहा बल्कि पति बन गया। शादी के बाद शिब्बू वहीं बस गया था। उसके लिए भारत जितना दूर पड्ता जा रहा था, भारतीयता का मोड उसी अनुपात में बढता जा रहा था।

इस कहानी में मूल समस्या अंतर्जातीय विवाह की है। भीष्म जी ने इस समस्या को एक दूसरे संदर्भ में उतारा है। शिब्बू और कात्या का प्रेमविवाह हुआ था। जब इनकी लड्की कविता अपने युवा मित्र के साथ घूमने गई तो शिब्बू के मन में शंकाएँ घिरने लगी। वह भूल गया कि स्वयं उसने प्रेमविवाह किया था। यदि बेटी कविता इस प्रकार का कदम उठाती है तो वह शिब्बू को मंजूर नहीं है। दूसरी ओर कात्या बडी समझदारी से काम लेती है। उसे अपनी बेटी पर विश्वास है इसीलिए वह सिब्बू की हर बात का उत्तर सोच समझकर देती है। समाज प्रेम के आधार पर ही टिके रहती है यह कात्या और शिब्बू के प्रेम विवाह से ही सिद्ध होता है। भीष्म जी की यह कहानी एक प्रेमी और प्रेमिका के सहज जीवन का परिचय देती है।

इस कहानी–संग्रह की अन्य कहानियों में 'गौरेया', 'राहत' भी उल्लेखनीय है। 'गोरैया' यह कहानी एक ऐसे सरदार की कहानी है जिसकी पत्नी अस्पताल में दो महीने से बीमार पडी है। सरदार गुरमुख सिंह अपनी पत्नी को मन से चाहता है। वह कहता भी है, 'सपर मैं उसे मरने तो नहीं दूँगा जी। चाहे मकान बिक जाए, दुकान बिक जाए, पर मैं उसे मरने तो नहीं दूँगा जी। गुरमुख सिंह ने पत्नी देवकी को बचाने में कोई कसर नहीं छोडी। देवकी की बीमारी कुछ इस प्रकार घर कर गई थी कि गुरूमुख सिंह का हर प्रयास विफल हो गया। जब देवकी उसे छोड्कर चली गई तो उसका दिल टूट गया। एक व्यक्ति अपनी पत्नी के वियोग में गौरैया से इस प्रकार से मन लगा बैठे यह अपने आप में ही अनोखी घटना है। पर गुरमुखसिंह की मानसिकता कुछ इस प्रकार से परिवर्तित हुई कि वह उसकी विकृति बन गई। व्यक्ति मन की जटिलताओं को रेखांकित करने का प्रयास इस कहानी में हुआ है।

'राहत' कहानी एक सर्व सामान्य व्यक्ति की कहानी है। इसका नाम मिलखीराम है। सभी उसे मिलखी कहते है। मिलखी के सिर पर कर्ज था जिसे उतारने के लिए वह दिल्ली के एक बंगले में रसोइया का काम करता है। मिलखी का बेटा गाँव में दुकान चलाता है और हर महीने सौदा लेने शहर आता है। वह जब भी आता अपने पिता से मिलकर जाता। लेकिन एक महीने में वह अपने पिता से मिलने नहीं आया तो मिलखी परेशान हो गया। दिल्ली की सड्कों पर वह कई दिनों तक अपने बेटे को ढूँढता रहा। हार कर मिलखी एक फकीर के पास गया। जिसने उसे कहा कि, 'तेरा बेटा उसके दोस्तो के साथ बम्बई गया है। महीने भर में अपने आप लौट आयेगा।' मिलखी को इस बात का विश्वास हो गया। उसने यही बात अपने मालिक से कही तो वे उसे डांटने लगे। पर उनकी पत्नी ने उनसे धीमी आवाज में कहा,

''इसका बेटा मिलेगा या नहीं मिलेगा भगवान जाने, पर इसकी उम्मीद क्यों तोड़ते हो?''[८९] कहानी यहीं पर समाप्त हो जाती है।

भीष्म साहनी जी का यह अंतिम कहानी–संग्रह इसलिए महत्व का है कि उन्होंने कुरूप होती जाती दुनिया में बची हुई मनुष्यता को चित्रित करने का कार्य अपनी कहानियों के माध्यम से किया है। इस कहानी–संग्रह में मध्यवर्गीय परिवार की भिन्न–भिन्न पीढियों की विभिन्न समस्याओं को चित्रित करते हुए लेखक ने उनकी मानसिकता का भी प्रभावपूर्ण निरूपण किया है। वर्तमान जीवन की जटिलताओं को सुलझाती उनकी कहानियाँ बीते हुए युग को भी वर्तमान से जोड़ने का प्रयास करती है। उपर्युक्त कहानी–संग्रह के अतिरिक्त भीष्म जी और तीन कहानी–संग्रह प्रकाशित हुए है ये तीन कहानी संग्रह है १. प्रतिनिधि कहानियाँ २. मेरी प्रिय कहानियाँ ३. चर्चित कहानियाँ। इन तीनों कहानी–संग्रहो की विशेषता यह है कि इनमें भीष्मजी की चर्चित और उच्चकोटि की कहानियाँ संकलित की गई है। वैसे भीष्म जी किसी कहानी के विषय में यह कहना कि यह कहानी श्रेष्ठ है और यह कहानी उच्चकोटि की नहीं है, तो ऐसा कहना निरर्थक और नि:संदर्भ है। उनकी हर कहानी का अपना रंग और अपना ढंग है। अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों में जीवित उनकी कहानियों के पात्र सामाजिक परिवर्तन के लिए सदा ही संघर्षरत रहे है। कमलेश्वर के शब्दों में, ''उन्होंने सामान्य जीवन और जन–साधारण की परिस्थितियों और पात्रों को लेकर इतनी गहरी और ऐसी असाधारण रचनाएँ की जो हिन्दी मानस पर संवेदनात्मक शिलालेखों के रूप में अंकित हो गई।

इस प्रकार भीष्म साहनी की कहानियों का अनुशीलन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने अपनी कहानियों में सामाजिक और वैयक्ति जीवन मूल्यों का समन्वय किया है। उनकी कहानियाँ मध्यवर्गीय सामाजिक परिवेश को सहज रूप में चित्रित करती है। उनकी कहानियाँ उस सामाजिक सत्य को अभिव्यक्त करती है जो वर्तमान जीवन का यथार्थ है। समाजवादी पाठक को उनकी कहानियाँ उद्वेलित कर सोचने के लिए विवश कर देती है। समाजवादी विचारधारा से प्रतिबद्ध यह कहानीकार बड़ी सहजता से विषयवस्तु को प्रस्तुत करते हुए जीवन–सत्यों का उद्‌घाटन करता है। उसके साथ ही अनेक राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक प्रश्नों को भी उन्होंने अपनी कहानियों में उभारा है। अपनी जमी, अपनी मिट्टी और अपने लोगों से विशेष लगाव रखने वाली उनकी कहानियाँ वर्तमान सामाजिक व्यवस्था के असंतोष के मूल कारण को भी रेखांकित करती है। भारतीय समाज के ऐतिहासिक परिदृश्य को भीष्म साहनी के कभी नजरअंदाज नहीं किया। वास्तव में उनका कहानी संसार केवल मध्यवर्ग तक

सीमित नहीं है। उन्होने मध्यवर्ग के घेरे के बाहर निम्न और निम्नतम जनता के जीवन को देखा और भागा है। उनके संघर्षो, यातनाओं और पीडाओं को समझने की कोशिश भी की है। यही कारण है कि उनकी कहानियों की कथावस्तु लोकोन्मुख है। भीष्म जी का साहित्य जन जीवन से साक्षात्कार कराने वाला साहित्य है।

उनकी कहानी समाजगत चिंतन के आधार पर व्यक्ति की आत्मकहानी है, जो पूरे भारतीय समाज की संस्कृति और सभ्यता को रेखांकित करती है।

४.१२ : साहनीजी की सामाजिक कहानियो का वर्गीकरण

'समाज' शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है । वास्तव में व्यक्ति से लेकर परिवार, जाति, सम्प्रदाय, धर्म तथा राष्ट्र आदि सभी समाज में समाविष्ट हैं । अत: सामाजिक कहानियों में समसामयिक जीवन के विविध पक्षों का बड़ा ही स्वाभाविक एवं स्वत: पूर्ण चित्रण होता है । आज सामाजिक कहानियों की रचना करनेवाले कहानीकारों के नामों की एक लम्बी सूची प्रस्तुत की जा सकती है ।

उपर्युक्त वर्गीकरण के आधार पर यदि भीष्म साहनी की कहानियों को वर्गीकृत करें तो उनकी कहानियों में सामाजिक कहानियों की प्रधानता देखी गई है । शोषण, साम्प्रदायिकता, उच्च वर्ग का खोखलापन, पारिवारिक मतभेद, आदि से संबंधित कहानियाँ भी हैं जिन्हें सामाजिक कहानियों के अन्तर्गत ही रखा जा सकता है। सामाजिकता के अलावा उनकी कहानियों का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष और भी है और वह है राजनीति या साम्प्रदायिकता।

''वाङ्चु'' कहानी में वाङ्चू नाम एक पात्र है। जो चीनी बौद्ध भिक्षु है। बौद्ध धर्म में उसकी रुचि है। इस रुचि ने उसे भारत और चीन की सीमाओं से काट दिया है क्योंकि वह न भारतीय है न चीनी है – वह केवल मनुष्य है । किन्तु भारत की राजनीति और समाज से वह त्रस्त हो उठता है । उसकी मानवीय भावनाओं को ठेस लगती है । और अन्त में वह हताश होकर मर जाता है । इस कहानी से स्पष्ट है कि व्यक्ति की शोध–खोज, उसके जीवन–मृत्यु की सार्थकता, उसके अपने परिवेश में है, अपने समाज मैं है ।

''नदामत'' कहानी में क्रिकेट–मैच का वर्णन है । ''अतीत के स्वर'' कहानी में एक ''अतीत के अध्येता'' अर्थात् पुरातत्त्ववेता की कहानी है और ''दहलीज'' एकालाप शैली में लिखी मनोवैज्ञानिक कहानी है । ''लेनिन का साथी'' लेनिन के संस्मरण पर आधारित है ।

उपर्युक्त विवेचन में हमने साहनीजी की विभिन्न कहानियों का परिचय प्राप्त किया । सामाजिक, नीतिपरक और राजनीतिक – तीनों ही विषयों को लेकर उन्होंने अपने कथा–साहित्य की सृष्टि की है । ठोस यथार्थवाद उसके कथा–साहित्य की आधारभूमि है । उनमें खोखले आदर्शवाद का मोह कहीं दिखाई नहीं देता । समाज की नंगी और कड़वी सच्चाइयों को ये कहानियाँ बेनकाब करती हैं । उनहोंने समाज का वास्तविक चित्रण ही हमारे सामने रखा है ।

''भारतीय समाज के ऐतिहासिक परिदृश्य को भीष्म साहनी अपनी कहानियों से कभी ओझल नहीं होने देते । स्वाधीन आन्दोलन, स्वतंत्रता की प्राप्ति, साम्प्रदायिक दंगे, विदेशी आक्रमण, पूँजीवादी शिकंजा, गड़बड़ाते जीवनमूल्य वर्गधृणा का फैलाव, अफ्सरशाही, दोगली राजनीति, सस्ती नेतागिरी, हमारे इतिहास के हिस्से हैं । इन तमाम त्रासदियों के अन्त:सूत्रों की पहचान सही लेखन की शर्त है और भीष्म साहनी का लेखन उसे पूरा करता है । पूँजीवादी व्यवस्था में पनपती विषमता, अमानवीयता, शोषण और चरित्र–संकट के विरुद्ध किसी प्रकार का फार्मूलाबद्ध रुमानी दृष्टिकोण न रखकर उनके विद्रूप को उजागर करने का काम भीष्म साहनी की कहानियाँ करती हैं । प्रगतिशील विचारधारा, तीक्ष्ण दृष्टि और विश्लेषण की क्षमता के साथ ही गहरी संवेदनशीलता भीष्म साहनी के लेखन के सहज गुण स्वीकार किये जा सकते हैं । प्रगतिशील जीवन–मूल्यों के प्रति उनकी आस्था स्थूल रुप धारण कर किसी नारेबाजी के रुप में प्रकट नहीं होती, बल्कि वह मनुष्य की संघर्षशीलता और जिजीविषा में विश्वास के रुप में आती है। यह मूल्य–बोध सृजनात्मक समझ के साथ आकर भीष्म साहनी की कहानियों को अधिकाधिक कलात्मक गुणों से सम्पन्न करता है।''[९०]

भीष्म साहनी एक सूलझे हुए कहानीकार हैं । उन्होंने अपनी कहानियों में यर्थाथता की टूटी हुई स्थिति को चित्रित किया है । डॉ. अश्वघोष उन्हें ''मानव–समानता'' का पक्षधर मानते हैं । वे कहते हैं –

''भीष्मजी'' मानव समानता के पक्षधर हैं । वह आर्थिक विषमता को ही सामाजिक विघटन के लिए दोषी ठहराते हैं । उनकी अधिकांश कहानियाँ वर्ग–वैषम्य, आर्थिक विपन्नता तथा सामाजिक अन्तर्विरोधों को उद्‌घोषित करती हैं । सामाजिक चेतना उनकी हर कहानी के मूल में निहित है । भीष्म आज के कहानीकारों में एक मात्र कहानीकार हैं जो कहानी–लेखन में सादगी और सहजता से सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हैं । जो अनुभूति करते है वही लिखते हैं।

कहीं न कहीं, कोई जाना–पहचाना पात्र, कोई वास्तविक घटना, उसकी तह में रहते हैं । पूर्णत: कल्पना की उपज कहानी नहीं होती, कम से कम मेरा ऐसा ही अनुभव है, जिंदगी ही आपको कहानियों के लिए कच्ची सामग्री जुटाती है, जहाँ हम समझते हैं कि कहानी हमने मात्र अपनी ''सोच'' में से निकाली है, वहाँ भी उसे किसी न किसी रुप में जीवन का ही कोई संस्कार अथवा प्रभाव अथवा अनुभव का ही कोई निष्कर्ष उत्प्रेरित कर रहा होता है । पर जहाँ कहानी का पूरा ताना–बाना, काल्पनिक हो, जो मात्र कल्पना के सहारे लिखी जाए, वहाँ कहानी के चूल अक्सर ढीले ही होते हैं, ऐसा मैंने पाया है । दृष्टान्त–कथाओं की बात अलग है, वहाँ कहानी की समूची परिकल्पना ही विभिन्न स्तर पर होती है।'' जो अनुभूति और चित्रण हमारे सामने है । उसे लिखना आसान बात नहीं है ।

साहनीजी के इसी यथार्थवाद से प्रभावित होकर डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने यथार्थ ही लिखा है – ''भीष्म साहनी (१९१५) प्रगतिशील कहानीकार हैं । उन्होंने अपनी कहानियों में मूलत: मध्य वर्ग को लिया है और उसकी समस्याओं को यथार्थ ढंग से चित्रित करने का प्रयत्न किया है । इस मध्यवर्ग की कुण्ठा, पीड़ा, घुटन, बिखराव, रुढ़ियाँ एवं झूठी मान्यताएँ आदि उनकी विभिन्न कहानियों में बड़े सशक्त ढंग से अभिव्यक्ति पा सकी हैं । उनकी कहानी–कला का मूलाधार समष्टिगत चिन्तन पर आधारित है । अपनी कहानियों में उन्होंने पूरे भारतीय समाज को उसकी समस्त अच्छाइयों–बुराइयों के साथ ग्रहण किया है ।''[९१] अपनी लेखनी इस तरह चलाई है कि पढ़ने से ही हमारे रोमटे खडे हो जाते है ।

साहनीजी की अन्य सामाजिक कहानियाँ इस प्रकार हैं – ''माता–विमाता'' में माँ की ममता का स्वाभाविक चित्रण है तो ''यादें'' कहानी में पुरानी स्मृतियाँ रह–रहकर किस तरह आदमी को विचलित करती हैं – यह बड़े ही मर्मस्पर्शी ढंग से चित्रित किया गया है । ''बीवर'' कहानी एक कुत्ते के जीवन की दुखान्त घटना पर आधारित है । अमीरों की दृष्टि में जब गरीबों के जीवन का कोई मूल्य नहीं, फिर एक पशु तो पशु है । ''खून का रिश्ता'' कहानी आर्थिक–विषमता की कहानी है । भाई–भाई के वर्तमान स्वार्थ–संबंधों को उद्‌घाटित करनेवाली और कटु यथार्थ की कहानी है । आज खून के रिश्ते का कोई मूल्य नहीं, पैसा ही सबकुछ है । ''बात की बात'' कहानी में निम्नवर्गीय लोगों के बीच किस प्रकार जरा–सी बात का बतंगड़ बन जाता है, और बात की बात में आपसी झगड़े होने लगते हैं, जो राह चलते लोगों के लिए अच्छे खासे तमाशे का रुप धारण कर लेते हैं । इस कहानी को पढ़कर ऐसा लगता है कि साहनीजी ने बहुत करीब से इन लोगों की जीवन–शैली को देखा है ।

''सिफारिशी चिट्‌ठी'' कहानी उन लोगों पर करारी चोट करती है जो समाज में ऊंचे–ऊंचे पदों पर आसीन हैं, और अपने से छोटे लोगों को किस तरह से तरक्की का लालच देकर बहलाते रहते हैं किन्तु अन्त में बड़ी सिफत के साथ उन्हें निराश कर देते हैं । ''नई नवेली'' कहानी में जहाँ उच्च वर्ग के लोगों की अमानवीयता का चित्रण है, वहीं साहनीजी ने अत्यंत सहजता से यह दिखाने का भी सफल प्रयत्न किया है कि निम्न वर्ग अनेक संकट झेलने के बाद भी मानवता का दामन नहीं छोड़ता। ''सिर का सदका'' कहानी भी समझौतावादी नीति पर आधारित कहानी है। ''कुछ और साल'' में मधुसूदन नाम का एक इंजीनियर है, जिसने परिवार में अपना प्रभुत्व जमाकर आतंक मचा रखा है, परिणामस्वरुप अन्त में वह अकेला रह जाता है। तदुपरान्त, ''इमला'' ''पास–फेल'' ''प्रोफेसर'' ''कटघरे'' ''अपने–अपने बच्चे'' ''सुनहरी किरण'' ''साये'' ''एक रोमेण्टिक कहानी'' ''गीता सहस्सर नाम'' भी उल्लेखनीय सामाजिक कहानियाँ हैं।

''पटरियाँ'' कहानी आर्थिक विषमता से जूझते हुए एक कुण्ठाग्रस्त मध्यवर्गीय पात्र की कहानी है । जीवन में उसे अपमान, तिरस्कार और निराशा के सिवा कुछ नहीं मिलता, इस तथ्य

को साहनीजी ने बखूबी चित्रित किया है । ''पटरियाँ'' मानवीय विवशताओं, मजबूरियों तथा आर्थिक विषमताओं की चक्की में पिसनेवाले हीन ग्रंथि के शिकार व्यक्ति की कहानी है। वह सोचता है –

''सबसे बड़ी चीज दुनिया में पैसा है, पोजीशन है, बाकी सब ढकोसला है । सब बकवास है । ताकत और पैसा और रोब–दाब, इनसे बढ़कर कोई चीज दुनिया में नहीं है ।'' ''तसवीर'' कहानी पारिवारिक समस्या पर आधारित है । पति के मरने के बाद नारी की ससुराल में होनेवाली दुर्दशा का चित्रण है । एक ओर विधवा स्त्री कों में बड़ो के ताने सुनने पड़ते हैं, तो दूसरी ओर बच्चों की झिड़कियाँ भी सुननी पड़ती हैं । ''जख्म'' में एक कमजोर बुढ़े व्यक्ति पर एक युवक का हीन और निकृष्ट शक्ति–प्रदर्शन दियखाया गया है । चलती गाड़ी में से उसके सामान को बाहर फेंक देना और बस अनुचित ढंग से उसकी पिटाई कर देने की घटना पाठक के हृदय को झकझोर कर रखने देती है । इस प्रकार ''जख्म'' कहानी एक सामाजिक विडम्बना की सशक्त अभिव्यक्ति है । ''पैरों का निशान'' ''रास्ता'' ''इन्द्रजाल'' ''डोरे'' ''ढोलक'' ''भगोड़ा'' आदि कहानियों में समाज की सूक्ष्म किन्तु गहरी समस्याओं का प्रभावी चित्रण है । इन कहानियों में साहनीजी ने हमारे समाज की विविध समस्याओं की अभिव्यक्ति के साथ–साथ ''कठोर'' व्यंग्य की योजना भी की है । ''इन्द्रजाल'' कहानी में संबंधों की कटुता का चित्रण है, तो ''ढोलक'' कहानी उन दंभी चेहरों को बेनकाब करती है जो पाश्चात्य संस्कृति के पीछे दीवाने होकर भारतीय संस्कृति की उपेक्षा करने का निंदनीय प्रयास करते हैं । ''भगोड़ा'' कहानी समय से पहले संसार का त्याग कर देने वाले लोगों की पलायनवादी मनोवृत्ति को उद्घाटित करती है । इस कहानी में लेखक का कथयितव्य सही है कि – 'सत्य' का साक्षात्कार संसार से पलायन करने में नहीं बल्कि आत्मस्थ होकर ही किया सकता है।''[९२]

साहनीजी की सामाजिक कहानियों में आर्थिक विषमता, दमन–शोषण, पारिवारिक एवं दाम्पत्य–जीवन और महाजनी सभ्यता आदि विषयों की प्रधानता है । ''वाङ्चु'' कहानी–संग्रह इसका सफल उदाहरण है । इस संग्रह की उल्लेखनीय सामाजिक कहानियों में ''साग–मीट'' ''पिकनिक'' ''गलमुच्छे'' ''खण्ड्हर'' ''राधा–अनुराधा'' ''त्रास'' ''खूंटे'' आदि हैं।

''साग–मीट'' एक अफ्सर के परिवार की कहानी है । परिवार में जग्गा नाम का नौकर है, जिसकी पत्नी अफ्सर के छोटे भाई की अशिष्टता का शिकार हो जाती है और जग्गा आत्महत्या करके अपना मौन प्रतिरोध व्यक्त करता है । अफ्सर ''दयालु'' प्रकृति का व्यक्ति है, इसलिए उसका मत है कि ''सौ–पचास दे दो तो गरीबों का मुँह बन्द हो जाता है ।'' यह कहानी एकालाप–शैली में लिखी गई है । अफ्सर की पत्नी अपने सहेली से हृदय की बातें कह रही है जिससे उनके पारिवारिक जीवन की विसंगतियों का पर्दाफाश हो रहा है । ''पिकनिक'' और ''राधा–अनुराधा'' दमन और शोषण में जीनेवाले संघर्षशील लोगों के जीवन की कहानियाँ हैं । तो ''गलमुच्छे'' और ''खण्ड्हर'' टूटते हुए मानवीय संबंधों की कहानियाँ हैं । ''त्रास'' और ''खूंटे कहानी में व्यंग्य की तीखी मार है । ''त्रास'' कहानी उच्चवर्ग के तथाकथित सम्पन्न व्यक्तियों की हृदयहीनता पर गहरा व्यंग्य है ।

''दयालुता और आत्मश्रद्धा के आवेश में मेरा हाथ फिर पतलुन की जेब में गया, जहाँ दो नोट पड़े थे । मैंने उंगलियों से दोनों नोट अलग–अलग किये । पाँच दूँ या दस दूँ । दस दूँ या पाँच ? आसामी तो पाँच का नजर आता है । फिर तभी हाथ रुक गया । यह क्या बेवकूफी करने जा रहे हो ? यह क्या कम है कि इसे अस्पताल में उठा लाये हो ? यह है कौन जिसके प्रति इतने पसीजने लगे हो ? न जान, न पहचान... ।''(९३)

इस प्रकार इन कहानियों में साहनीजी ने बड़ी निष्ठा से अपना सामाजिक दायित्व निभाया है । समाज के खोखलेपन को उन्होंने अत्यन्त कलात्मकता के साथ उजागर किया है । श्री रमाकान्त श्रीवास्तव ने ''वाङ्चु'' संग्रह की प्रशंसा में कहा है –

''वाङ्चु'' भीष्म साहनी की ग्यारह वीधी, संतुलित कहानियों का संकलन है । इन कहानियों को पढ़ना इस मानी में सुखद अनुभव है कि ये स्वातंत्र्यपूर्वकाल से लेकर समकालीन भारतीय समाज के विविध पहलुओं और कोणों को उजागर करती हैं । ये कहानियाँ कहीं विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं, कहीं प्रश्न उठाती हैं, कहीं संकेत देती हैं । गरज कि सार्थक और सोद्देश्य कहानी का जो भी दायित्व हो सकता है, उसे वे पूरा करती हैं । बड़ी बात यह है कि इस दायित्व का निर्वाह भीष्म साहनी की कहानियों किसी बड़बोलेपन के बिना ही करती हैं ।

भीष्मजी ने सामाजिक विसंगतियों को बड़ी ही व्यंग्यपूर्ण शैली में अभिव्यक्त किया है । कहीं–कहीं तो अपनी अभिव्यक्ति में वे बड़े निमर्म भी हो उठे हैं । कहने की आवश्यक्ता नहीं कि साहनीजी अपने कथा–साहित्य में कहीं भी उपदेशक बनकर नहीं आए । वे केवल समस्याओं की भयंकरता को चित्रित करते हुए अपनी कहानियों को एक ऐसा मोड़ दे देते हैं कि वे केवल समस्याप्रधान ही लगती हैं, उपदेशात्मक नहीं ।

उनकी अन्य विवेच्य कहानियाँ हैं – ''भाई बन्द'' ''प्रणय–लीला'' ''पहचान'' ''बाप–बेटा'' ''पाप–पुण्य'' ''ललिता'' ''अकाल–मृत्यु'' ''छिपे–चित्र'' ''फूलां'' – आदि कहानियाँ समाज की जटिलताओं, विसंगतियों और तनाव की ही अभिव्यक्तियाँ हैं । ''भाई–बन्द'' कहानी में मित्रों के बीच भाई–चारे की सुन्दर अभिव्यक्ति है । ''प्रणय–लीला'' में भाग्य की विड्म्बना है तो ''पहचान'' नारी के संघर्षशील जीवन की करुण अभिव्यक्ति है । ''बाप–बेटा'' और ''पाप–पुण्य'' कहानियाँ भी जीवन की सूक्ष्म संवेदनाओं को लेकर लिखी गई हैं । ''ललिता'' कहानी प्रतिकूल परिस्थितियों से हारकर पलायन करने की नहीं, बल्कि जुझारुपन के साथ उनसे समझौता करने की कहानी है । ''ललिता'' अपनी ससुराल से असंतुष्ट है, रोती–बिलखती है, लेकिन बाद में ''जैसा देश वैसा वेश'' वाली कहावत को चरितार्थ करती है । वह माहौल और परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढाल लेती है । ''अकाल–मृत्यु'' ''छिपे–चित्र'' और ''फूलाँ'' मध्यवर्ग की श्रेष्ठ अभिव्यक्तियाँ हैं । ''रानी मेहतो'' ''कहानी राजा–रानी'' की कहानी अवश्य है, किन्तु उसका रचना–विधान आधुनिक है । साथ ही उसमें श्रम के महत्त्व का बहुत ही सुन्दर प्रतिपादन है । ''चीफ की दावत'' और ''पहला पाठ'' कहानियाँ विशेष रुप से चर्चा का विषय हैं । ''चीफ की दावत'' अत्यन्त लोकप्रिय कहानी है । इस कहानी में वृद्धा माँ के प्रति बेटे के स्वार्थी व्यवहार का बड़ा मर्मस्पर्शी चित्रांकन है ।

''पहला पाठ'' कहानी में देवव्रत नामक बालक स्कूल में शिक्षा पाता है कि मानवमात्र से प्रेम करना चाहिए, अछूतों से प्रेम करना चाहिए । किन्तु जब वही देवव्रत भ्रम में पड़कर मुसलमान बच्चे को अछूत समझकर गले लगा लेता है उसे अपना भाई समझता है, तभी उसके गाल पर तमाचा पड़ता है क्योंकि वह बच्चा अछूत नहीं मुसलमान है । डॉ. नामवरसिंह ने कहा है –

''भीष्म साहनी सबसे सफल कहानीकार हैं । एक इकाई के रुप में उनकी कहानियाँ अत्यन्त गठित होती हैं, साथ ही प्राय: किसी–न–किसी प्रकार की विडम्बना (आयरनी) को व्यक्त करती हैं और यह विडम्बना किसी–न–किसी रुप में हमारे वर्तमान समाज के व्यापक अन्तर्विरोध की ओर संकेत करती हैं ।''(९४)

'मेड इन इटली' उन लोगों पर कटाक्ष है, जो पाश्चात्य संस्कृति के दीवाने हैं और स्वदेशी चीजों के प्रति जिन्हें कोई लगाव नहीं । 'धरोहर' और 'लीला नन्दलाल की' कहानियों में भी व्यंग्य की तीखी मार है । ''खिलौने'' ''भटकाव'' ''अनूठे साक्षात्'' और ''सड़क पर'' कहानियों में कोई विशेष बात नहीं है । ''फैसला'' कहानी उल्लेखनीय है । जज शुक्ला आज की भ्रष्ट व्यवस्था का प्रतिनिधि है । वह अपने जीवनादर्शों की हत्या कर शुद्र जीवन जीने के लिए विवश है । प्रस्तुत कहानी के ये शब्द – ''सरकारी अफ्सर को फाइल को दामन कभी भी नहीं छोड़नी चाहिए, जो फाइल कहे, वही सच है, बाकी सब झूठ है ।...'' आज की भ्रष्ट नौकरशाही और समसामयिक परिवेश पर करारा व्यंग्य है ।

साहनीजी की कुछ कहानियाँ तो इतनी अधिक भावप्रवण हैं कि लगता है जैसे हम कोई कहानी नहीं पढ़ रहे, बल्कि घटनाओं को अपने इर्द–गिर्द घटित होते हुए प्रत्यक्ष देख रहे हैं । ''चाचा मंगलसेन'' ''कण्ठहार'' ''सलमा आपा'' ''निशाचर'' ''संभलके बाबू'' ''दिवास्वप्न'' ''विकल्प'' 'पोखर' कहानियों में कहीं व्यंग्य के साथ ही समाज की अवदशा का चित्रण है तो कहीं किसी पात्र की मानवता का चित्रण मर्मस्पर्शी बन पड़ा है । ''चाचा मंगलसेन'' का मंगलसेन अपने ही घर में अपने संबंधियों के बीच उपेक्षित है । ''कण्ठहार'' में एक माँ है जो अपनी अपाहिज बच्ची से दु:खी है किन्तु कहानी के अन्त तक वह अपने प्रबल मातृत्व का निर्वाह करती है । ''सलमा आपा'' कहानी में मानवता की सुन्दर अभिव्यक्ति है । किसी अजनबी को अपना ही मेहमान समझकर उसकी मेहमानबाजी करना और उसे इसका तनिक भी पता न चलने देना मानवता का चरमोत्कृष्ट निदर्शन है । ''निशाचर'' कहानी जिससे पुस्तक का नामकरण हुआ है, अत्यन्त सशक्त कहानी है । इसमें निम्नवर्ग के दो पात्र हैं – माँ और बेटी । दोनों रात के पिछले पहरों में सड़को–फुटपाथों पर बिखरे हुए रद्दी कागज बटरोने निकलते हैं । दोनों रात के अन्धेरे

में एक–दूसरे से बिछुड़ जाती हैं, माँ पागलों की तरह बेटी को तलाशा करती है । उसे बेटी मिलती तो है, किन्तु ठण्ड से ठिठुरी हुई । वह घबरा जाती है, सुबह होते–होते जमादार के ड्र से वह अपनी सारी रद्दी में आग लगा देती है जिसकी गर्मी पाकर बेटी स्वस्थ हो जाती है । कहानी का कथ्य स्पष्ट है कि धनपति अपने धन को कलेजे से लगाए बैठे रहते हैं, जबकि वे लोग जो निर्धन हैं, जिसके पास धन–दौलत नहीं उनके पास एक–दूसरे के लिए मर–मिटने की चाह तो है । साहनीजी की कहानियों में आज के जीवन की हर कड़वी सच्चाई भी देखने को मिलती है कि जो परिवार धन–दौलत से भरे–पूरे हैं, वहाँ आपसी रिश्तों के बीच गहरी खाई है । समाज में प्रवर्तमान इन समस्त कुरुपताओं को साहनीजी ने अपनी कहानियों में बड़ी ईमानदारी से व्यक्त किया है । ''संभल के बाबू'' कहानी जहाँ एक ओर वह उच्च वर्ग की निम्न वर्ग के प्रति हृदय–हीनता पर करारा व्यंग्य भी करती है । ''दिवास्वप्न'' एक लेखक की कहानी है । उसकी आहत महत्त्वाकांक्षाओं का बड़ा ही मर्मस्पर्शी चित्रण है । एक लेखक का अपनी रचनाओं को छपवाने की स्वाभाविक ललक और प्रकाशकों द्वारा उसका शोषण किये जाने का वर्णन निश्चय ही अत्यन्त प्रभावशाली है । ''पोखर'' कहानी रेलयात्रियों की त्रासदी को व्यक्त करती है । इस कहानी में यात्रियों से खचाखच भरे डिब्बे का जो यथार्थ वर्णन साहनीजी ने किया है उसमें उनकी कलम ने कमाल कर दिखाया है । इस कहानी को पढ़कर हर पाठक यह महसूस करता है कि 'हाँ, बिल्कुल ऐसा ही होता है ट्रेनों में ।'

''भीष्मी साहनी जी प्रसंगों के निर्माण में कुशल हैं । चाहे वह बारात का दृश्य हो या युद्ध का या रेलगाड़ी के आगमन का, सभी स्थलों पर उनकी लेखनी शब्द–चित्र बनाती हुई चलाती है । प्रसंग–निर्माण–कला की दृष्टि से वे प्रेमचन्द और अमृतलाल नागर की कोटि में सहज ही प्रवेश कर जाते हैं ।''[९५]

साहनीजी की अन्य सामाजिक कहानियों में ''प्रादुर्भाव'' ''मरने से पहले'' ''सेमिनार'' ''देवेन'' ''खुशबू'' ''झूमर'' ''चोरी'' आदि हैं ।

''प्रादुर्भाव'' कहानी एक लेखक के जीवन की करुण स्थिति को लेकर लिखी गई है । कम पारिश्रमिक देकर, उससे मीठी–मीठी बातें कर और उसकी रचनाओं की झूठी प्रशंसा कर

उसे किस तरह आसानी से बहला दिया जाता है, इस बात को साहनीजी ने कटु व्यंग्य के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है ।

''मरने से पहले'' कहानी वकीलों की रिश्वतखोरी पर व्यंग्य है । साथ ही इसमें मनुष्य की उस प्रकृति पर भी व्यंग्य है जिसमें वह अपनी धन–दौलत, जमीन–जायदाद को अपनी जान से भी अधिक प्रिय समझता है और उसके लुट जाने पर सदमे के कारण वह जान से भी हाथ धो बैठता है । यह कहानी हमें लियो टोल्सटोय की "How much land does a man need" का स्मरण कराती है । ''सेमिनार'' कहानी में सेमिनार का आयोजन करने के लिए आयोजकों को कितनी परेशानियाँ झेलनी पड़ती हैं, –इसका यथार्थ वर्णन है । विज्ञापनवाले सुवाक्यों के माध्यम से सेमिनार की बिल्डिंग की दीवारों पर अपनी चीज–वस्तुओं का खुलकर विज्ञापन करते हैं, और इतने संघर्षो के बाद जब सेमिनार आयोजित होता है तब रही–सही कसर मूसलाधार बारिश पूरी करती है–इन सभी घटनाओं का वर्णन लेखक की लेखनी के संस्पर्श से जीवंत हो उठा है । ''देवेन'' कहानी माँ–बेटे के संबंध पर आधारित है । बेटा देवेन अपनी माँ के साथ बेरुखी से पेश आता है, माँ उसे झिड़कियाँ देती रहती है लेकिन अन्त में पाठक कह उठता है – ''आखिर तो माँ तो माँ ही है ! ''खूशबू'' कहानी समाज के उन दोगले लोगों पर करारा व्यंग्य है जिनकी सूरत और सीरत में भारी फर्क होता है । जिनके खजानों में लूट की बेशुमार दौलत बन्द रहती है और जरा–से दान की चर्चा घर–घर पहुँचती हैं । ''झूमर'' अर्जुदासनाम के एक ऐसे मध्यवर्गीय पात्र की कहानी हैं जो पहले तो रंगमंच से जुड़ा रहा किन्तु बाद में जिसने स्वतंत्रता–संग्राम में हिस्सा लिया । वह परिवार वालों के लिए कुछ न कर सका ।

कहानी अत्यन्त भावपूर्ण है । ''चोरी'' कहानी में लेखक ने एक कंड्क्टर की मानवता और ईमानदारी को रुपायित किया है । समाज के तथाकथित कुछ छोटे लोगों में भी ऐसे असाधारण मानवीय गुणों को देखा जा सकता है कि सचमुच आश्चर्य होता है ।

साहनीजी ने अपनी सामाजिक कहानियों में मनुष्य को उसके पूरे सामाजिक परिवेश के केन्द्र में देखा है और उसे उसके संपूर्ण व्यक्तित्व के साथ उभारने की चेष्टा की है ।

उपर्युक्त विवेचन में हमने साहनीजी की सामाजिक कहानियों की चर्चा की है । सामाजिक कहानियों के अतिरिक्त उनके कहानी–संग्रहो में कुछ कहानियाँ मनुष्य की सहजात नैतिकता को लेकर लिखी गई हैं । इन कहानियों में उन्होंने बताया है कि धर्म का मर्म न समझ पाने वालों ने धर्म का रुप विकृत कर उसे खोखले आडम्बर और पाखण्ड तक ही सीमित कर दिया है । ये कहानियाँ उन लोगों की असलियत का पर्दाफाश करती हैं ।

उनकी प्रारंभिक कहानियों में ''जोत'' और ''अनोखी हड्डी'' की चर्चा की जा सकती है। ''जोत'' कहानी में जानकू नाक एक निम्नवर्गीय पात्र है जो रेंजर के द्वारा सताया गया है, और न जाने क्यों उसे भ्रम होता रहता है कि उसका देवता उससे नाराज है, इसीलिए वह बलि भी चढ़ाता है और बनती है और समाज में एक क्रान्ति का सूत्रपात होता है।

साहनीजी हिन्दी–कथा–साहित्य के प्रतिबद्ध रचनाकार एवं प्रगतिशील परम्परा के एक सशक्त हस्ताक्षर हैं । उनकी कहानियों में समाज की ज्वलंत समस्याओं की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है । मध्यवर्ग एवं निम्नवर्ग के जीवन का कोई पक्ष कुछ शिल्पगत शैथिल्य भी है किन्तु फिर भी उससें ''कथ्य'' की निर्बलता नाममात्र को भी नहीं है । सामाजिक कहानियों में ''अशान्त रुहें'' ''शिष्टाचार'' ''क्रिकेट मेच'' ''मुर्गी की कीमत'' ''नीली आँखें'' ''ऊब'' ''गंगो का जाया'' ''भाग्य रेखा'' ''घर–बेघर'' ''खून के छींटे'' ''घर की इज्जत'' – इन कहानियों में मध्य वर्ग और निम्न–वर्ग के जीवन–संघर्ष की मार्मिक अभिव्यक्ति हैं ।

''अशान्त रुहें'' कहानी का एक मध्यवर्गीय पात्र तमाम मुसीबतें झेलने के बाद भी ईमानदारी और दयानतदारी का दामन नहीं छोड़ता । ''शिष्टाचार'' कहानी का नौकर निम्न वर्ग का व्यक्ति है, लेकिन फिर भी वह कदम–कदम पर अपनी शिष्टता का परिचय देता है । मालिक के क्रोध और नफरत का शिकार होकर भी वह अपने बेटे के मरने की खबर मालिक के घर में खुशी के मौके पर नहीं सुनाता । ''नीली आँखें'' और ''मुर्गी की कींमत'' कहानियाँ भी निम्न वर्ग के शोषित जीवन की ही कहानियाँ हैं ।

''क्रिकेट–मेच'' पति–पत्नी के संबंधों की कहानी है । जिसमें पत्नी अपने पति की कमजोरियों पर पर्दा डालती रहती है, किन्तु वही पति पत्नी का मजाक उड़ाता है और दूसरी

स्त्रियों में आसक्त दिखाई देता है । ''ऊब'' कहानी एक अध्यापक के जीवन की नीरसता का बयान है तो ''गंगो का जाया'' कहानी निम्न–वर्ग की विपन्न स्थिति और उसके करुण परिणाम को प्रस्तुत करती है । ''घर–बेघर'' ''भाग्यरेखा'' ''खून के छांटे'' आर्थिक विषमता और दमन–शोषण की की अभिव्यक्ति हैं । ''घर की इज्जत'' कहानी महाजनी सभ्यता को रुपायित करनेवाली कहानी है । अपने घर की बहू नाटक में हिस्सा नहीं ले सकती लेकिन अन्य घरों की बहू–बेटियाँ नाटक में हिस्सा लेती हैं तो वही प्रशंसा का विषय बन जाती हैं ।

उनकी कहानियों में ''राधा–अनुराधा'' ''त्रास'' ''गलमुच्छे'' ''निशाचर'' ''चीफ की दावत'' ''खून का रिश्ता'' ''निमित्त'' ''देवेन'' ''खुशबू'' ''झूमर'' ''साग–मीट'' ''शिष्टाचार'' – आदि ऐसी कहानियाँ हैं जिनमें सामाजिक विसंगतियों की अर्थपूर्ण अभिव्यक्ति है । इन कहानियों को पढ़कर साहनीजी की सूक्ष्म दृष्टि का पता चलता है । समाज की सूक्ष्मातिसूक्ष्म विसंगतियों को भी उन्होंने अपनी रचनाओं का विषय बनाया है जो निश्चय ही एक सराहनीय बात है ।

''भीष्म साहनी ने अपने कथा–साहित्य में मध्यवर्ग के संस्कारों को बदलने का रचनात्मक प्रयास किया है । आधुनिक ज्ञान–विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ही मनुष्य की सामाजिक उडान सम्भव है । भीष्म साहनी के पास मनुष्य के उत्थान और उत्कर्ष की वैज्ञानिक दृष्टि है । भीष्म साहनी ने राष्ट्रीय भावात्मक एकता की वस्तुपरक परिस्थितियों को स्पष्ट किया है ।

डॉ. श्याम कश्यप ने साहनीजी की तमाम विशेषताओं को कुछ ही शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है । वे कहते हैं–

''भीष्मजी सूक्ष्म समाजद्रष्टा लेखक हैं । वे समाज के गहरे अन्तर्विरोधों को तो उद्घाटित करते ही हैं, साथ ही उन कारणों की जड़ों तक जाते हैं और उन्हें बड़े पैने तरीके से उजागर भी करते हैं । इस प्रक्रिया में न तो निम्नवर्गीय लोगों के प्रति उनकी हार्दिक सहानुभूति ही छिपी रहती है और न ही वे उन निमर्म शक्तियों को बेनकाब करने में किसी किस्म का कोई संकोच बरतते हैं जो मानवीय सम्बन्धों को सच्चे आत्मीय मानवीय सम्बन्ध नहीं बने रहते देना चाहतीं । यह समूची प्रक्रिया भी वे अपनी पूरी कलात्मकता के साथ बड़े सहज और स्वाभाविक ढंग से घटित कराते

हैं, बिना किन्हीं आग्रहों या पूर्वाग्रहों के । इसलिए कब भीष्मजी के व्यंग्य की धार किस ओर है, इसे बड़ी सावधानी से देखने और परखने की जरुरत पड़ती है । उनका व्यंग्य कोरा व्यंग्य नहीं, बल्कि प्रेमचन्द और हरिशंकर परसाई की तरह करुणा की अथाह गहराइयों में से उपजा हुआ व्यंग्य है, जिसकी सामाजिक सोदेश्यता को समझने में कभी भी भूल नहीं करनी चाहिए । करुणा से उपजी हुई इस आत्मीयता और व्यंग्य के दोधारे पर चलते हुए ही वे गजब के कलात्मक संतुलन का भी परिचय देते हैं, जो उनके जैसे प्रतिबद्ध और पक्षधर लेखक से अपेक्षित भी है । उनका व्यंग्य कब आत्मीय करुणा में डूब जाता है, और कब इस करुणा से उपजी हुई उनकी आत्मीयता व्यंग्य में परिवर्तित हो जाती है, इसे बड़ी बारीकी से परखने की जरुरत है । उनका सामाजिक यथार्थवादी और आलोचनात्मक दृष्टिकोण ही उनमें सही चित्रांकन की अपार क्षमता पैदा करता है ।''(९६)

४.१३ : उपन्यास में समाज की भूमिका

साहित्य को समाज का आईना कहा गया है । जिस प्रकार मनुष्य अपना चेहरा आईने में देखता है, और उसके चेहरे पर कहाँ दाग हैं, यह जानकर वह उसे दूर करने की कोशिश करता है, उसी प्रकार समाज अपना यथार्थ प्रतिबिम्ब ''साहित्य'' के आईने में देख सकता है । वास्तव में जैसा समाज होगा वैसा ही साहित्य भी रचा जाएगा । समाज में प्रवर्तमान अच्छाई–बुराई, नीति–अनीति, गुण–दुर्गुण, न्याय–अन्याय – इन सभी तत्त्व को साहित्य मानव–समाज के सामने रखता है, और मनुष्य–समाज में व्याप्त इन बुराइयों को दूर करने का प्रयत्न करता है । इस प्रकार साहित्य समाज में खलबली मचा देता है । मनुष्य अपनी स्थिति के प्रति जागरुक होता है । उसके भीतर चेतना का संचार होता है, वह उन्नयनशील बनता है । ऐसे ही साहित्य में रचनाकार की प्रतिबद्धता का स्वरुप परिलक्षित होता है । हिन्दी के सुप्रद्धि प्रगतिशील लेखक भीष्म साहनी अपने लेख 'साहित्य मनुष्य को मनुष्य से जोड़ता है' में साहित्य के महत्त्व को इस प्रकार प्रतिपादित करते हैं– ''साहित्य के बारे में यह तो सच है ही कि वह जीवन का दर्पण होता है ।

मध्यमवर्ग से उच्च मध्यमवर्गीय और निम्न मध्यवर्गीय दोनों तबक्को और उनके सूक्ष्म से सूक्ष्म स्तरों तक उनकी दृष्टि गई है। मध्यवर्गीय चित्रण की जो विविधता और सूक्ष्मदर्शिता हमे भीष्मजी की रचनाओं में दिखाई पड्ती है वह उनके समकालीन कथाकारों के यहाँ प्राय: दुर्लभ है। साथ ही यहाँ यह भी नहीं भूलना चाहिए कि किसी उपन्यास या कहानी में मध्यवर्गीय जीवन का कथा परिवेश मात्र होने से उसकी अन्तर्वस्तु मध्यवर्गीय नहीं हो जाती। यह भी हो सकता है कि मध्यवर्गीय क्या परिवेशवाली रचना की अन्तर्वस्तु सर्वहारा क्रान्तिकारी दृष्टिकोण से बुनी गइ हो और भीष्मजी के यहाँ यही हुआ है।

भीष्म साहनी हिन्दी के पहले लेखक है, फिल्मो के नये पहलू की ओर भी हमारा ध्यान खींचा है। सस्ती भावुकता और पूँजीवादी अपसंस्कृति के भौंडे प्रचार के बावजूद समानी हिन्दी फिल्में निम्नवर्ग में पैदा हुई बसंती जैसी हल्हड लडकियों में सामाजिक विद्रोह की चिनगारियाँ फूक सकती है। इससे पहले शायद किसी ने यह नहीं सोचा था,कम से कम इसका चित्रण तो किसी हिन्दी लेखक ने नहीं किया होगा। भीष्मजी के उपन्यास पर भी फिल्मी प्रभाव स्पष्ट रूप में दिखाई देता है। साहनीजी ने निम्नजनो की बदहाल जिन्दीगी के हर पहलू को समेटा है। ''हमारे जीवन में रोज ही छोटी–छोटी बाते आती है– हमारा खाना–पीना, उल्लास, प्रेम, हंसी, निराशा, कुण्ठा, राग–द्वेश, संघर्ष और संकल्प हमारी जीत व हार। इन्हीं बातों से हमारा जीवन रूचिकर है। वे सारी बातें हमे जीने का एहसास दिलाती है। उन्हीं से हम अपने अन्दर जीवन की धड्कने महसूस किया करते है। भीष्मजी की रचनाएँ भी उन्हीं की तरह हमें जीवित रहने का एहसास कराती है, हमे सुखी एवम् तृप्त करती है, हमें समाज से जोड्तीहै।''[९७]

भारतीय सामाजिक रचना में नियतिवाद की जडे काफी गहरी और पुरानी है। यह नियतिवादी विचारधारा पीढियों से इस देश की चेतना में धुन्द बनकर छाई हुई है। इसका परिणाम यह हुआ कि मानवीय जीवन की आस्था को विकृत करनेवाले ताव सक्रिय रहे। हिन्दी उपन्यास साहित्य में इस तथ्य को सफलता पूर्वक उद्घाटित किया गया है।

साहित्य को समाज का दर्पण मानने वाले भीष्म जी ने समाज के प्रति अपने दायित्व तथा प्रतिबद्धता को पूरी तरह से निभाया है। शहरी एवं गाँव समाज के एक–एक पहलू को लेकर, एक

एक इकाई को लेकर उन्होंने उपन्यास सृजन किया है। शहरी और गाँव की संस्कृति का मिला–जुला रूप, उसमें पिसते रहते व्यक्ति और समाज का जीवनंत चित्रण भीष्मजी के उपन्यासों में पूरी इमानदारी के साथ उभरा है। समाज में प्रचलित रूढ परंपराएँ, प्रथाएँ, लोकरीतियाँ के नियम का भी चित्रण किया है। नई कहानी के दौर में कथा–साहित्य की जड्ता को तोड्कर उसे ढोस सामाजिक आधार देने वाले कहानीकारों में भीष्म जी का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी कहानियों में भारतीय समाज का परिदृश्य दृष्टिगत होता है। कहीं दमन–शोषण की बात है, कहीं आथिरक विषमता की, कहीं परविारिक दाम्पत्य जीवन की और कहीं साम्प्रदायिकता की। समाज की इन विसंगतियों पर भीष्म जी ने कलम चलाई है। साहनीजी संवेदनशील है और इसी वजह से निम्नवर्ग की और उनका ध्यान गया है। भीष्मजी सामाजिक चेतना सम्पन्न प्रगतिशील कहानीकार है। भीष्मजी ने अपने लगभग पाँच दर्शको के लेखन द्वारा समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में अपनी विशेष उपस्थिति दर्ज कराई है। वे समकालीन कथा साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर है। सामाजिक संवेदनायें उनके कथा–साहित्य में विलक्षणता के साथ प्रस्तुत हुई है।

''कविता और नाटक दोनों की अपेक्षा मानव जीवन के लिए उपन्यास का क्षेत्र कहीं अधिक विस्तृत है। मीति काव्य के पूँजीभूत भाव सत्य, दुशान्त नाटको के चिरंतन संघर्ष और करूणा, नीति कथाओं की गति और प्रवाहमानता, मुक्तकों का उक्ति वैचिंय और नीति सत्य इन सभी पुराने रूपों की शिल्पगत और वस्तुगत विशेषताओं को उपन्यास ने व्यापक प्रचार में ग्रहण किया था।''(९८)

''उपन्यास की विषयवस्तु के सनबंध में वे कहते है कि उपन्यास का विषय है व्यक्ति। यह समाज के विरूद्ध प्रकृति के विरूद्ध व्यक्ति के संघर्ष का महाकाव्य ह और यह केवल उसी समाज में विकसित है। उसका था जिसमें व्यक्ति और समाज के बीच संतुलन नष्ट हो चुका हो और जिसमें मानव का अपने सहजीवी साथियों अथवा प्रकृति से युद्ध ठना हो। पूँजीवादी समाज ऐसा ही समाज है।''(९९)

४.१४ : उपन्यास में समाज दर्पन

भीष्मजीकी खूबी यह है कि उन्होंने इस बात को सर्जनात्मक धरातल पर सिद्ध कर दिया है कि प्रेमचन्द की परम्परा का अर्थ न तो गाँवो की और अभियान ही है और न ही सादगी के नाम पर समाट कला विहीनता। शहरो, महानगरो में भी देहात के इन बिखरे हुए टुकडो में निम्नजनों और उनकी बदहाल जिन्दगी के पहलुओ को लेखक ने बसन्ती जैसे उपन्यास में जिस खूबी से समेटा है, वह अन्यतम है।

'बसन्ती' हिन्दूस्तानी औरत का प्रतीक है। जो अभी मजदूरो की कतार में खडी है। किन्तु यह यथार्थ समाज और देश के इतिहास से जुडी हुई वस्तु है। साहनीजी ने 'तमस' शीर्षक रचना में एक अद्‌भूत शिल्पी के रूप में उभरकर आयें है। उन्होंने इस रचना में अपार धैर्य एवम् अनुशासन का परिचय दिया है। इस रचना की कोई बात दीली नहीं है। कहने का मतलब सीर्फ इनता ही है कि प्रगतिशील लेखक के रूप में साहनीजी के विचार उच्चतम है। साहनीजी का लेखन अन्य कथाकारों से पृथक है। साहनीजी के लेखन में कही भी अनावश्यक फैलाव नहीं है। उपन्यासो में प्रयुक्त घटना अपनी पूरी सार्थकता के साथ, भूल घटना के साथ सहज सम्बन्ध बनाए रखती है। मैयादास की माडी और कुंतो जैसे आकार में बडे उपन्यासों में भी बनावट और बुनावट कहीं भी शिथिल नहीं पड्ती।

भीष्मजी ने अपने उपन्यासों में जितने अधिकार से समसामयिक विषयो पर लेखनी चलाई है, उतने ही अधिकार से ऐतिहासिक विषयों पर भी चलाई है। उनका इतिहास बोध गहरा है। 'तमस', 'मैयादास की माडी', 'कुंतो', आधि उपन्यासो में उन्होने अपना इतिहास का बोध का परिचय दिया है। भीष्मजी के उपन्यासों की सफलता का एक बडा कारण उनकी पात्र सृष्टि की सजागता है। उनके सभी उपन्यासो में पात्रो की नियोजन बडी कुशलता से किया गया है। भीष्मजी के सभी छोटे– बडे पात्र अपनी–अपनी भूमिकाओ के अत्यंत सार्थॐ और अनिवार्य सिद्ध हुए है। उनके पात्र चाहे स्वतंत्र व्यक्तित्व का प्रतिनिधि कर रहे हों अथवा वर्ग या समूह का, उनकी उपस्थिति उपन्यास को एक विशिष्ट सार्थकता से प्रदान करती है। चरित्रो का विकास नितांत मनोवैज्ञानिक ढंग से किया गया है। उनमें परिवेशगत दबावों और आंतरिक द्वन्द्वों का प्रभाव बडी

कुशलता से दिखाया गया है। उपन्यासो के चरित्रांकन के प्रति भीष्मजी न केवल अत्याधिक सावधान रहे है, अपितु उनके महत्त्व पर भी अत्याधिक बल देते हैं। इसका पुष्ट प्रमाण यह भी है कि उन्होने 'बसंती', 'कलंतो', 'नीलू नीलिमा नीलोफर' उपन्यासों का नामकरण पात्रो के नाम पर किया है।

''उपन्यास विश्व की कल्पना प्रसूत संस्कृति को पूँजीवादी सभ्यता की सबसे महत्वपूर्ण देन है। उपन्यास की सबसे बडी महान साहसपूर्ण खोज है– मानव की उसके द्वारा खोज।''(१००)

''जीवन मूल्यों का संक्रमण, समाज के नये संबंधो की निर्मिति, उसके बीच उठते अनेक प्रश्नो को भौतिक या वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझने की आकुलता, नवीन भौतिक सत्यो के बीच बनती हुई मानव चरित्र की नई दिशाएँ उपन्यास के माध्यम से प्रकट होती है।''(१०१)

''इस प्रकार उपन्यास पूँजीवादी समाज की अनिवार्य उपज है यानि पूँजीवादी सभ्यता में यथार्थ के जो नए स्तर, नए आयाम और भौतिकवादी चिन्तन, मूल्य, प्रश्न उभरे उन्हें व्यक्त करने में परंपरा से चली आती हुई अन्य कलाएँ पूर्णरूपेण समर्थ नहीं थी यद्यपि उन पर भी पूँजीवादी समाज का प्रभाव पडा''(१०२)

''मनुष्य सामाजिक प्राणी है और मनुष्य रूप में समाज सापेक्षिता में ही उसकी अवस्थिति, सफलता, चरितार्थता और सार्थकता है। इसी में मनुष्य की सामूहिकता एवं सामाजिकता का उत्थान करनेवाली वैचारिक जीवन दृष्टियाँ अथवा प्रतिमान सामाजिक दर्पण कहलाते है। मनुष्य की प्राणी मात्र के प्रस्थान बिन्दु से 'समाज–सापेक्ष्य' मनुष्य बनने की मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक यात्रा में जैविक मूल्यों के पश्चात् सामाजिक मूल्यों का स्थान एवं महत्व है और तत्पश्चात मानवी की मूल्यों का जैविक मूल्यों के संरक्षण और परिष्कार से लेकर सामाजिक प्रवृत्तियों के पोषण और मानविकी मूल्यों की प्राप्ति एक सामाजिक मूल्यों की परिधि व्याप्त है।''(१०३) यहाँ भीष्म साहनी ने उपन्यासो में समाज के दर्पण को वास्तविकता को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

विवाह समाज द्वारा स्वीकृत एक प्रचनन मूलक परिवार की स्थापना की आधारभूत संस्था है। सामाजिक स्वीकृति के कारण समय के अंतराल के साथ इस संस्था में व्यक्ति पक्ष गौण और

सामाजिक पक्ष प्रबल हो गया। भीष्म साहनी के कड्याँ, कुंतो, बसंती, नीलू नीलिमा नीलोफर और मैय्यादास की माडी में विवाह विषयक मूल्य बोध की अभिव्यक्ति हुई है।

कड्याँ में भीष्म साहनी ने विवाह संबंधो के बिखराव के कारणो की तलाश की है। यद्यपि विवाह हमारे समाज में युगो से सामाजिक धुरी का कार्य करता रहा है तथापि वर्तमान समय में नगरीकरण के फलस्वरूप आपाधापी, आशाओं, आकांक्षाओं– महत्वाकांक्षाओ और नैतिक मूल्यों के परिवर्तन से परिवर्तित परिवेश में विवाहित समाज के लोग नजर आ रहे है। वर्तमान समय में विवाह संबंधों के विघटन का मूल कारण प्राय: अहम् है किन्तु 'कड्या' में दाम्पत्य संबंधो के विघटन के लिए उत्तरदायी कारण अहम् की ठहराहट नहीं है। महेन्द्र की पत्नी प्रेमिला ने केवल मात्र दसवीं तक शिक्षा अर्जित की है, वह घर गृहस्थी संभाल रही है। उसकी कोई महत्वाकांषा भी नहीं है उसका पति महेन्द्र सरकारी अफसर है और पढा लिखा है। अत: विवाह की कड्यों को हिलाने वाली समस्या खडी नही हुई है।

भीष्म साहनी के कड्याँ उपन्यास में सतबंत और सरदारजी के दाम्पत्य जीवन को सुखमय और सफल चित्रित किया है। सतवंत पति को प्रसन्न करने की कला जानती है। प्रमिला जब भी उससे मिलने आती है। तो पति की प्यार भरी बातों को उसे सुनाती है और पति की प्रसंशा करती है। वह पति की प्रेम भरी बातों को सुनाते हुए पति को गाली भी देती है। ऐसा समाज के सभी दंपतिओ का चित्रण हमारे साहनीजी ने प्रस्तुत किया है।

नीलू नीलिमा नीलोफर में अन्तर्जातीय प्रेम विवाह की दुखद परिणति दिखाई गई है। परन्तु इस अन्तर्जातीय प्रेम विवाह की त्रासदी के मूल में साम्प्रदायिकता निहित है। प्राय: यह कहा जाता है कि नई पीढी में धार्मिक कट्टरता और सांप्रदायिकता की भावना नहीं है फिर भी वह फिरफारपरस्ती में विश्वास नहीं करती है, उसमें उदारता विद्यमान है। भीष्म साहनी ने इस उपन्यास में दिखाया है कि नयी पीढी में कट्टर धार्मिकता और फिकापरस्ती पुरानी पीढी से कहीं ज्यादा हिंसक और बर्बर है। उपन्यास में नीलोफर का भाई हमीद अपने बहन के अन्तर्जातीय विवाह का विरोध करता है। मुस्लिम परिवार की निलोफर हिन्दू चित्रकार सुधीर से प्रेम करती है। उनके लिए इस प्रेम में परम्परागत संस्कारो और जमाने के तनाव और दबाव का कोई महत्व नहीं

होता। आज भी समाज का वही चित्रण हमारे समाज में दिखाई देता है जो साहनी के उपन्यास में था।

बसंती – इस उपन्यास में दिल्ली में पडोसी प्रांतो से आकर मजदूरी कर कालोनी का निर्माण करने वाले राज मजदूरो में से एक बेटी बसन्ती का चित्रण किया गया है। जिस प्रकार राज मजदूरों की यह बस्ती उजड्ती और फिर बसंती है, उसी प्रकार बिलंदरी बसंती का जीवन भी कईबार बसता और उजड्ता है। उपन्यास के अंत में और आरंभ में बस्ती के उजड्ने के सम्बन्ध में बसंती के जीवन से ही है। बसंती में आरंभ से अंत तक जिजीविषा दिखाई देती है। कितने ही कडे संघर्ष के बावजूद भी वह इसी के बल पर फिर से खडी रहती है। बसंती महानगर के उन खोखलेपन में फँस चुकी थी कि आरंभ से अंत तक उसमें फँसी रही। चौदह साल भी पूरे न हुए ऐसी लड्की बसंती पिता चौधरी और माता के गुस्से का शिकार तो थी ही जो हर वक्त मार खाया करती। जब लंगडे दर्जी बुलाकी से शादी करनी पडी तबसे लेकर दीनू और रूकमी के बीच हमेशा जूझती रही। वह जिसे अपना पति मानती थी वह न तो उसका पति रहाँ न प्रेमि। पप्पू दीनू और रूकमी की जिम्मेदारी सीर पर लिए चूल्हाचौका करने वाली वसंती की दास्ता दयनीय है। साहनीजी का यह उपन्यास सृजनात्मक रचना है। समाज में वास्तविक रूप से प्रेमि और पति के बीच झूंझने वाली नारि की कथा है। साहनीजी ने एक ऐसी लड्की का चित्रण किया है जो मेहनत–मजदूरी करने के लिए महानगर में आए ग्रामीण परिवार की कठिनाइयाँ। के साथ–साथ बडी होती है और निरंतर बडी होती जाती है। दिल्ली जैसे महानगर में नए–नए सैकटर और कोलोनियाँ उठानेवालों की आए दिन टूटती सुग्गत–बस्तियों में टूटते गरीब लोगों, रिश्ते–नातों, सपनो और घरौंदो के बीच मात्र बसंती ही है जो साबुत नजर आती है। वह अपने परिवार, परिवेश और परंपरागत नैतिकता से विद्रोह करती है और चाहे यह विद्रोह उसे दैहिक और मानसिक शोषण तक ही ले जाता है, पर उसकी निजता को कोई हादसा तोड नहीं पाता। पत्नी और प्रेमिका के रूप में कठिन से कठिन हालात को तो क्या बीबीजी कहकर उडाने और खिलखिलाने में ही जैसे बसंती की सार्थकता है। दूसरे शब्दो में वह हक जीती जागती जिजीविषा है। अपने आस–पास के सामाजिक यथार्थ को उसके समूचेपन में उद्घाटित करनेवाले अप्रितम कथाकार

भीष्म साहनी का यह उपन्यास महानगरीय जीवन की खोखली चमक–दमक और ठैंस अंधेरी खाईयों के बीच भटकती बसंती जैसी एक पूरी पीढी का शायद पहली बार प्रभावी चरित्रांकन प्रस्तुत करता है। जिसमें पत्नी, प्रेमिका और माता की भूमिका अदा करनेवाली कई हमारे समाज में मौजूद है। सामाजिक परिवर्तन के परिणाम स्वरूप आज प्राचीन परंपराएँ, रीत–रिवाज, संस्कार, वर्ण–व्यवस्था भिन्न रूप में विद्यमान है। समाज के उन हकूमतशाही पुरूष का चित्रण दिनू के पात्र द्वारा देखने को मिलता है जहाँ दीनू ने चिल्लाकर कहाँ, ''खडी देख क्या रही है? चूल्हा तू जलाएगी या मैं जलाऊँगा?''[१०४] औद्योगिकीकरण और नगरीकरण के फल स्वरूप परम्परागत जाति विधान के घेरे खण्डित हुए है। इस प्रकार के सांस्कृतिक बदलाव में किसी विकास या नयी तकनीक को स्वीकार करने अथवा नकारने में जो अन्तद्वन्द्व और संशय उत्पन्न होता है वह निम्न रूप में प्रस्तुत किया है।

भीष्म साहनी के 'मैयादास की माडी' में एक कालावधि का विश्वसनीय आख्यान प्रस्तुत करते है। वे विभिन्न चरित्रो की सृष्टि करते हुए सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियामें सामाजिक परिघटनाओं पर उनकी सूष्म दृष्टि केन्द्रित रहती है। भारतवर्ष में रेल का आगमन एक महत्त्वपूर्ण घटना होती है। इस तकनीकी प्रगति को एक प्रतीक के रूप में देखा जा सकता है। परंतु किसी तकनीकी विकास के साथ कुछ सांस्कृतिक प्रश्न और शंकाये उत्पन्न हो जाती है। जैसे;

'जहाँ–जहाँ से रेलगाडी गुजरेगी, आसपास की जमीन जल कर राख हो जायेगी।'[१०५] ये तो अनर्गल आशंकाएँ और सनदेह युक्त अन्तर्द्वन्द्व थे इससे अधिक सामाजिक दर्पण से जुडे अन्य जटिल प्रश्न ये जो सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया से उत्पन्न होते है।

''भंगी, चूडा, चमार भी इसी गाडी में बैठेगा। ऊँची जात का आदमी भी उसी में बैठेगा और रईस शाहूकार भी उसी में बेठेगा। नेम–धरम की कोई चीज है या नहीं?''[१०६] मैयादास की माडी में दाखिल होने का एक खास मतलब है, यानी पंजाब की धरती पर हक ऐसे काल–खंड में दाखिल होना, जबकि सिक्ख अमलदारी को उखाडती हुई ब्रिटिश–साम्राज्यशाही दिन–ब दिन अपने पाँव फैलाती जा रही थी। भारतीय इतिहास के इस अहम् बदलाव को भीष्मजीने एक कस्बाई कथाभूमि पर चित्रित किया है और कुछ इस कौशल से कि हम जन–जीवन के ठीक

बीचोंबीच जा पहुँचते है। झरते हुए पुरातन के बीच लोक एक नए युग की आहटे सुनते है, उन पर बहस–मुबाहसा करते है और चाहे–अनचाहे बदलते चले जाते हैं– उनकी अपनी निष्ठाओं, कदरों, किमतों और परंपराओं पर एक नया रंग चढने लगता है। इस सबके केन्द्र में है दीवान मैयादास की माडी। जो हमारे सामने एक शताब्दी पहले ही सामंती अमलदारी, उसके सडे गले जीवन–मूल्यों और हास्यास्पद हो गए ठाठ–बाठ के एक अविस्मरणीय ऐतिहासिक प्रतिक में बदल जाती है। इस माडी के साथ दीवानों की अनेक पीढीयाँ और अनेक ऐसे चरित्र जुडे हुए है जो अपने–अपने सीमित दायरों में घुमते हुए भी विशेष अर्थ रखते है– इनमें चाहे सामंती धूर्तता और दयनीयता की पराकाष्ठा तक पहुँचा दीवान धनपत और उसका बेटा हकूमतराय हो, राष्ट्रीयता के घूमिल आदर्शो से उद्वेलित लेखराज हो। नीम–पागल कल्ले हो, साठसाला बूढी भागसुद्री हो या फिर विचित्र परिस्थितियों में माडी की बहू बन जानेवाली सकमो हो जो कि अंतत: एक नए युग की दीप–शीखा बनकर उभरती है। वस्तुत: भीष्मजी का यह उपन्यास एक हवेली अथवा एक कस्बे की कहानी होकर भी बहते काल–प्रवाह और बदलते परिवेश की दृष्टि से हक समुचे युग को समेटे हुए है और उनकी रचनात्मकता को हक नई उँचाई सौंपता है। परन्तु भीष्मजी यह भली भाँति जानते है कि यहाँ बात नेक धर्म की नहीं होती अपितु इसकी आड में विशेष सुविधा और विशेषाधिकार की बात ही प्रमुख होती है – 'एक ही रफतार पर चलती हुई गाडी सेठ साहूकार को भी अपने ठिकाने पर उतनी देर में पहुँचाएगी, जितनी देर में भंगी–चमार को।'[१०७] इस प्रकार समाज में भौतिक प्रगति से प्रकारान्तर से समाता और समाज दर्शन का आविर्भाव स्पष्ट दिखाई देता है।

कुंतो नामक एक स्त्री को केन्द्र में रखकर उपन्यास का नामकरण किया गया, भीष्मजी का यह सीधा और सरल उपन्यास है। इस उपन्यास के आरंभ में पारिवारिक माहौल का वर्णन किया गया है, परंतु अंत तक आते–आते यह उपन्यास देश विभाजन की त्रासदी, सांप्रदायिकता की समस्या को अंकित करता है। कुंतो के माध्यम से भारतीय समाज की नारी की नियति को ही पारिभाषित करने का प्रयास किया गया है। साथ ही विवाह विषयक मूल्य बोध की अभिव्यक्ति हुई है। एच.एम.जानसन सामाजिक परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट करते हुए कहते है, ''मूल्यों को एक धारणा या

मान के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है जो कि सांस्कृतिक हो सकता है या केवल व्यक्तिगत और जिसके द्वारा वस्तुओ की एक दूसरे से तुलना की जाती है, स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है, एक दूसरे की तुलना में उचित या अनुचित अच्छा या बुरा, ठीक या गलत माना जाता है।''[१०८] भीष्म साहनीजी का यह उपन्यास एक ऐसे कालखंड की कहानी कहता है जब लगने लगा था कि हम इतिहास के किसी निर्णायक मोड पर खडे है, जब करवटे लेती जिन्दगी एक दिशा विशेष की ओर बढती जान पडने लगी थी। आपसी रिश्ते, सामाजिक सरकार, घटना–प्रवाह के उतार–चढाव, उपन्यास के विस्तृत फलक पर उसी कालखंड के जीवन का चित्र प्रस्तुत करते है। केन्द्र में जयदेव–कुंतो–सुषमा – गिरीश के आपसी संबंध है, अपनी उत्कट भावनाओं और आशाओं – अपेक्षाओं के लिए हुए। लेकिन कुंतो जयदेव और सुषमा–गिरीश के अन्तर्संबंधो के आस–पास जीवन के अनेक अन्य प्रसंग और पात्र उभरकर आते है। इनमें है प्रोफेसरसाब जो एक संतुलित जीवन को आदर्श मानते है और इसी सुनहरी मध्यम मार्ग के अनुरूप जीवन को ढालने की सीख देते है; हीरालाल है जो मनादी करके अपनी जीविका कमाता है; पर उत्कट भावनाओं से उद्वेलित होकर मात्र मनादी करने पर ही संतुष्ट नहीं रह पाता; हीरालाल की विधवा माँ और युवा घरवाली है; सात वर्ष के बाद विदेश से लौटा धनराज और उसकी पत्नी है; सहदेव है। ऐसे अनेक पात्र उपन्यास के फलक पर अपनी भूमिका निभाते हुए, अपने भाग्य की कहानी कहते हुए प्रकट और लुप्त होते है। रिश्तो और घटनाओं का यह तानाबाना उन देशव्यापी लहरों और आंदोलनों की पृष्ठभूमि के सामने होता है जब लगता था कि हमारा देश इतिहास के किसी मोड पर खडा है। पर यह उपन्यास किसी कालखंड का ऐतिहासिक दस्तावेज न होकर मानवीय संबंधो, संवेदनाओं, करवट लेते परिवेश और मानव नियति के बदलते रंगो की ही कहानी कहता है। कुंतो न कभी कुछ माँगा नही था, किसी बात की उपेक्षा नही की थी, कि वह उसके लिह अपना सब कुछ लुटाती रही थी। जीवन की त्रासदी इस बात में नहीं होती की हम किसीको खो देते है, त्रासदी इसमें होती है कि खो चुकने के बाद हम उसे पहचान पाते है। माँ कह रही थी, ''सुखमा भी बहुत ठोकरे खा चुकी है। तेरा घर भी सूना हो गया है। छोटे–छोटे बच्चों के साथ

कैसे जिंदगी गुजार पाएगा? कुंतो अपने छोटे–छोटे बच्चे तेरे हवाले कर गई है। तू जो फैसला करे, मुझे मंजूर है।''[१०९] यह होता है समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण।

झरोखे उपन्यास में भीष्म साहनी जी ने जिस बालक के बचपन से लेकर जवानी तक की घटनाओं का वर्णन किया है, वह स्वयं भीष्मसाहनीजी ही है, यह समझने में देर नहीं लगती। पूरी तरह अपने जीवन को ही उन्होंने मनोविश्लेणात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। एक बच्चे के माध्यम से इस शताब्दी के पूर्वार्ध में पंजाब के एक आर्य समाज परिवार का चित्र है। कथा के केन्द्र में यही बालक जो वर्तमान में अपने अतीत का पुनरावलोकन करता है।

तमस साहनीजी का प्रसिद्ध उपन्यास है। इस उपन्यास में देश विभाजन की समस्या को केन्द्र में रखा गया है। सांप्रदायिकता का माहौल और उसमें एक घटना में सुअर मारकर मस्जिद के सामने फेंक दिया जाता है, जिसे लेकर कई फसाद करवाये जाते है और पूरे १०३ गाँव नष्ट हो जाते है। अंग्रेज इस स्थिति का फायदा उठाते है। विभाजन पूर्व सांप्रदायिक दंगो को अत्यंत प्रभावपूर्ण रीति से इस उपन्यास में अंकित किया गया है। दुर्खीम ने सामाजीकरण के सिद्धांत को स्पष्ट किया है। उनकी यह मान्यता है कि, ''समाज व्यक्तियों से महान है परंपराये, व्यवहार, प्रतिमान व सामाजिक मानदण्ड, सामूहिक प्रतिनिधान इसिलिए है कि वे समुचे समूह द्वारा बनाये जाते है तथा समूह के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा उनका पालन किया है।''[११०] उपन्यास में चित्रित शहर के साथ–साथ १०३ गाँव दंगाग्रस्त बनकर तहस–नहस हो गये थे। तमस उपन्यास में चित्रित दो तरह का समाज है। एक है मुस्लिम समाज तो दूसरा है सिक्ख समाज। कुछ हिन्दू समाज भी वहाँ चित्रित है। नत्थू द्वारा मस्जिद मे सुअर डालकर दंगा करवाने की साजिश अंग्रेज अफसर सुरादअली बुनता है। नत्थू को पाँच रूपये देकर काम करवाया जाता है। नत्थू यह नही जानता की सुअर मारने के बाद उसका क्या होगा? इस संवाद से यह बात स्पष्ट होती है, ''हमारी सलोतरी साहि को मरा हुआ सुअर चाहिए, डॅक्टरी काम के लिए।''[१११] मस्जिद की सीढी पर सुअर फेंक दिया था। जिसके परिणामस्वरूप मुसलमानों द्वारा गाय काटकर उसके अंग भाई सत्तो की धर्मशाला के बाहर फेंक दिये गये। लोगो के बीच दंगे शुरू हो गए। मारकाट आगजनी ने भयंकर रूप ले लिया। सारा माहौल आतंकग्रस्त बना। शहर के सांप्रदायिक दंगो की प्रतिध्वनि

गाँव तथा कस्बों तक पहुँच जाती है। दंगे होने पर जो कमेटी बनी उनमें भी कमिश्नर रिचर्ड आगे थे। नत्थू भी इन दंगो का शिकार बन गया। उपन्यास में यह मूल कथा सूत्र है कि, अंग्रेजो के कूटनीति द्वारा विभाजन को किस तरह अंजाम दिया गया। राजनीतिक तथा सामाजिक वातावरण का गहन गंम्भीर यथार्थ भीष्मजी ने उद्घाटित किया है। धमर की आड में नफरत की ज्वाला कितनी भयंकर होती है, इसके पीछे सांप्रदायिक शक्तियाँ कैसे इन बातों को भड्का देती है। भारतीय समाज आज भी सांप्रदायिकता के दानवी पंजो से मुक्त नहीं है और इसके भयावह परिणाम सदैव जनसाधारण को ही भुगतने पड्ते है। धर्म समाज को कुछ अच्छाइयाँ सिखाता है, वही कुछ बुराइयाँ भी वह समाज को स्वाभाविक रूप से प्रदान करता है। जिसके कारण से तमस में चित्रित दंगे फसाद होते है। धर्म के नाम पर आग जनक वक्तव्य समाज को गुमराह बनाकर उसे दंगे में धकेल देते है।

४.१५ : निष्कर्ष

संवेदनशील साहित्यकार की तरह भीष्म साहनी जी ने समाज की मूलभूत समस्याओं को अपने कथा–साहित्य के माध्यम से चित्रित किया है। इसमे से कुछ एक समस्याओं को उन्होंने स्वयं भोगा है जिसके परिणाम उन्हें भुगतने पडे हैं। इसी वजह से शायद इन समस्याओं को साहनी जी ने उजागर किया है और इनके प्रति हमे सचेत कराया है।

भीष्म जी ने पारिवारिक संघर्ष एवं उसके परिणाम स्वरूप होने वाले पारिवारिक विघटन को हमारे सम्मुख रखा है। इनमें से 'झरोखे' उपन्यास की घटना का अपना व्यक्तित्व अनुभव है तो 'तमस' उपन्यास के स्वार्थ को उन्होने देखा है। कभी पति तो प्रेयसी के कारण परिवार में संघर्ष होता है तो कभी बँटवारे के कारण परिवार विघटन होता है। आधुनिक बहुएँ अपना अलग संसार चाहती हैं, इसलिए कभी विघटन होता है। तो कभी पति द्वारा उपेक्षा के कारण परिवार विघटन होता है। भीष्म साहनी जी ने अलग–अलग प्रकार से पारिवार संघर्ष का परिणाम भयानक होता है, इसे उजागर करने का प्रयास भीष्म साहनी जी ने किया है।

विवाह भी एक समस्या बनी है। जैसे अनमेल विवाह, प्रेम विवाह, अंतर्जातीय विवाह आदि प्रकारों में जब समझौता नहीं होता तो विवाह असफल हो जाता है और परिणाम पति–पत्नी दोनों को ही भुगतने पड्ते हैं। नौकरों की समस्या आधुनिक काल में तेजी से बढने वाली समस्या है। भीष्म जी ने 'झरोखे' में अपने ही घर के नौकर की समस्या का चित्रण किया है। 'वेश्या समस्या' के अंतर्गत वेश्याओं के यथार्थ जीवन का अंकन कर भीष्म जी ने उनकी मजबूरियों को उजागर किया है। आधुनिक काल की तेजी से बढने वाली समस्या 'भ्रष्टाचार' ने तो पूरे देश को खोखला बना दिया है। भीष्म जी ने इसके कई रूपों जैसे रिश्वत, दलाली आदि को चित्रित किया है। 'पुलिस का भ्रष्ट व्यवहार' यह भी आजकल निर्माण हुई समस्या है, अपनी वर्दी का फायदा उठाकर पुलिस कई भ्रष्ट कार्य करती है, सामान्य आदमी को वे तंग करती हैं। चापलूसी एवं जी–हजूरी भी आजकल के लोगों के आम जीवन का एक अंग बन चुके हैं। अपना काम करने के लिए करवाने के लिए पात्र–अपात्र व्यक्ति के तलचे चाटने के लिए लोग तैयार रहते हैं। भीष्म जी के पात्रों में से मलिक मंसाराम जैसा हवेली खरीदने वाला इंसान, दीवान मय्यादास, केशोराम दलाल, जानकू, शामनाथ, विनायक, आदि सभी अपने पद को भूलकर चापलीसी एवं जी–हजूरी किया करते हैं। मनुष्य में बढती स्वार्थ की भावना भी एक समस्या के रूप में सामने आती है, क्योंकि स्वार्थपूर्ति के लिए मनुष्य कुछ भी करने के लिए तैयार रहता है। 'अफवाहें' मनुष्य का जीवन

भयग्रस्त बना देती है। उनकी दिनचर्या बिगड जाती है। इसी बात को भीष्म जी ने प्रस्तुत किया है। समाज भय से कभी–कभी मनुष्य विकृत कार्य करता है, इसलिए वह भी एक समस्या है। वर्ण भेद की समस्या चाहे आज न हो फिर भी उसका परिणाम व्यक्ति मन पर कितना भयानक होता है, इसे भीष्म जी ने दिखाया है। नई और पुरानी पीढी के संघर्ष में हमेशा ही दोनों ही पीढियों को बहुत तकलीफ सहनी पडती है। आधुनिक काल में बुजुर्गो को घर का कूडा–मान कर फेंका जाता है, उनकी उपेक्षा होती है। इसी वजह से उन्हें काफी तकलीफों का सामना करना पडता है। भीष्म जी ने इसका अत्यन्त वास्तव चित्रण किया है। अकेलेपन की समस्या की वजह से मनुष्य भ्रम में पड सकता है। आधुनिक काल की बढती समस्या यातायात है। इसकी वजह से मनुष्य व्यस्त बेचैन रहता है। इसी प्रकार आधुनिक काल की नगरों की बढती समस्या, झोपडपट्टी, बाढ जैसी प्राकृतिक समस्या, झूठी प्रतिष्ठा, लालच, पाश्चात्यों का अंधाकरण आदि का भी अत्यन्त यथार्थ अंकन भीष्म जी ने किया है। इस प्रकार हम कह सकते है कि सामाजिक समस्या चित्रण में भीष्म साहनी जी अत्यन्त सफल हुए है।

संदर्भसूची

१) भीष्म साहनी की कहानी कला अर्चना जैन, पृ.२३

२) भीष्म साहनी की कहानी कला अर्चना जैन, पृ.२७

३) भीष्म साहनी की कहानी कला अर्चना जैन, पृ.२३८

४) भीष्म साहनी की कहानी कला अर्चना जैन, पृ.२३७

५) भीष्म साहनी की कहानी कला अर्चना जैन, पृ.३३

६) नाटककार भीष्म साहनी, डॉ. सुरैया शेख, पृ.१८

७) नाटककार भीष्म साहनी, डॉ. सुरैया शेख, पृ.२०

८) नाटककार भीष्म साहनी, डॉ. सुरैया शेख, पृ.२५६

९) कथाकार भीष्म साहनी – कृष्णा पटेल, पृ. ३१९

१०) पहला पाठ, पृ.३६

११) कथाकार भीष्म साहनी, कृष्णा पटेल, पृ. ३२६

१२) भीष्म साहनी, भाग्यरेखा – 'जात', पृ.१३

१३) भीष्म साहनी, भाग्यरेखा – 'खून के छींटे' पृ.१०५

१४) भीष्म साहनी, भाग्यरेखा – 'शिष्टाचार' पृ. ३१

१५) भीष्म साहनी, भाग्यरेखा – 'गंगो का जाया' पृ.८१

१६) भीष्म साहनी, भाग्य रेखा, घर–बेघर, पृ.६६

१७) भीष्म साहनी, पहला पाठ, प्रकाशकीय वक्तव्य से।

१८) डॉ. नामवर सिंह, कहानी; नई कहानी, पृ.३३

१९) डॉ. सुरेश बाबर, भीष्म साहनी के साहित्य का अनुशीलन, पृ. १४७

२०) भीष्म साहनी, पहला–पाठ 'ललिता' पृ.७८

२१) भीष्म साहनी, पहला–पाठ, प्रकाशकीय वक्तव्य से।

२२) भीष्म साहनी, पहला–पाठ, प्रकाशकीय वक्तव्य से।

२३) भीष्म साहनी, पहला–पाठ, प्रकाशकीय वक्तव्य से।

२४) भीष्म साहनी, भटकती राख, प्रकाशकीय वक्तव्य

२५) भीष्म साहनी, भटकती राख, पृ.६

२६) भीष्म साहनी, भटकती राख, पृ.६

२७) भीष्म साहनी, भटकती राख, माता–विमाना,पृ.१६

२८) डॉ. सुरेर बाबर, भीष्म साहनी के साहित्य का अनुशीलन, पृ.१३४

२९) भीष्म साहनी, भटकती राख, प्रकाशकीय वक्तव्य से

३०) भीष्म साहनी, पटरियाँ, प्रकाशकीय वक्तव्य से

३१) भीष्म साहनी, पटरियाँ, अमृतसर आ गया है, पृ.२१

३२) भीष्म साहनी, पटरियाँ, अमृतसर आ गया है, पृ.२४

३३) डॉ. प्रमिला अग्रवाल, भारत विभाजन और हिन्दी क्या साहित्य, पृ.६१

३४) भीष्म साहनी, पटरियाँ, तस्वीर, पृ.५७

३५) भीष्म साहनी, पटरियाँ, तस्वीर, पृ.६४

३६) रामाकांत श्रीवास्तव, भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना, सं. राजेश्वर सक्सेना प्रताप ठाकुर, पृ.६५

३७) नन्दकिशोर नवल, भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना, सं. राजेश्वर सक्सेना प्रताप ठाकुर, पृ. सं.१०३

३८) भीष्म साहनी, वाइ्चू, राधा–अनुराधा, पृ.सं.१३६

३९) भीष्म साहनी, वाइ्चू, राधा–अनुराधा, पृ.सं.१३९

४०) भीष्म साहनी, वाइ्चू, प्रकाशकीय वक्तव्य से, पृ.सं.१३६

४१) डॉ. रामदरश मिश्र, आलेख संवाद वर्ष–९, अंक–८, जुलाई अगस्त २००३, पृ.सं.४०

४२) जुलाई अगस्त, २००३, पृ.सं.४०

४३) नन्द किशोर नवल, भीष्म साहनी, व्यक्ति और रचना, राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर, प्र.सं.१०४

४४) भीष्म साहनी, शोभायात्रा, प्रकाशकीय वक्तव्य से।

४५) भीष्म साहनी, शोभायात्रा, फेसला, पृ.५७

४६) भीष्म साहनी, शोभायात्रा, फेसला, पृ.८३

४७) भीष्म साहन, शोभायात्रा, मेड इन इटली, पृ.४१

४८) भीष्म साहनी, शोभायात्रा, धरोहर, पृ.१०५

४९) पुष्पपालसिंह, समकालीन कहानी रचना, पृ.११३

५०) भीष्म साहनी, शोभायात्रा, प्रकाशकीय वक्तव्य से, पृ.११३

५१) भीष्म साहनी, शोभायात्रा, निशाचर, प्रकाशकीय वक्तव्य, पृ.११३

५२) भीष्म साहनी, निशाचर–चाचा मंगलसेन, पृ.१४

५३) भीष्म साहनी, निशाचर, जहूर बक्श, पृ.१२०

५४) भीष्म साहनी, निशाचर, जहूर बक्श, पृ.१२४

५५) भीष्म साहनी, निशाचर, सलमा आपा, पृ.५६

५६) भीष्म साहनी, निशाचर, प्रकाशकीय वक्तव्य से

५७) भीष्म साहनी, पाली, पृ.६

५८) भीष्म साहनी, पाली, देवेन, पृ.८६

५९) भीष्म साहनी, डायन, प्रकाशकीय वक्तव्य से।

६०) भीष्म साहनी, डायन, प्रकाशकीय वक्तव्य से, पृ. ७५

६१) भीष्म साहनी, डायन, बारो, पृ.३७

६२) भीष्म साहनी, डायन, बारो, पृ.४५

६३) भीष्म साहनी, डायन, वापसी, पृ.४५

६४) भीष्म साहनी, डायन, गौरैया, पृ.५६

६५) भीष्म साहनी, डायन, प्रकाशकीय वक्तव्य से

६६) कमलेश्वर आलेख संवाद वर्ष–१ अंक ८–९ जुलाई – अगस्त–२००३, पृ.१३

६७) डॉ. सुरेश बावर, भीष्म साहनी के साहित्य का अनुशीलन, पृ. १४०

६८) मोहन राकेश, साहित्यक और सांस्कृतिक दृष्टि, पृ.६७

६९) भीष्म साहनी, प्रकाशकीय वक्तव्य से।

७०) डॉ. प्रमिला अग्रवा,, भारत विभाजन और हिन्दी

७१) डॉ. गणेश दास, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नारी के विविध रूप

७२) ज्ञानवती अरोडा, समसामयिक हिन्दी कहानी में बदलते पारिवारिक संबंध, पृ.२३६

७३) नन्दकिशोर नवल, भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना, सं. राजेश्वर सक्सेना प्रताप ठाकुर, पृ.१०३

७४) भीष्म साहनी, पहला पाठ – प्रकाशकीय वक्तव्य से।

७५) भीष्म साहनी, पहला पाठ, 'चीफ की दावत', पृ.५६

७६) नये साहित्य का तर्कशास्त्र – विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, पृ. १५१

७७) भीष्म साहनी, पहला पाठ, फूलाँ, पृ.सं.६८

७८) डॉ. सुरेश बावर, भीष्म साहनी के साहित्य का अनुशीलन, पृ.१३४

७९) डॉ. गणेश दास, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नारी के विविध रूप, पृ.१५६

८०) भीष्म साहनी, पटरियाँ, प्रकाशकीय वक्तव्य से।

८१) डॉ. प्रेमिला अग्रवाल, भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य, पृ.६१

८२) भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना, राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर

८३) समकालीन कहानी : रचना मुद्रा, डॉ. पुष्पालसिंह, पृ.१३४

८४) संपा. निर्माही देश: पल–प्रतिपल – त्रैमासिक मार्च–जून – २००१, पृ. ४२

८५) भीष्म साहनी, निशाचर, जहूर बक्श, पृ.१२०

८६) भीष्म साहनी, डायन, चेहरे, पृ.७७

८७) भारत विभाजन और हिन्दी उपन्यास, हरिवंश, पृ.४८

८८) अपूर्वानंद, समीक्षा : वर्ष २५, अप्रैल – जून– १९९१, पृ.९

८९) भीष्म साहनी, डायन, राहत, पृ.११६

९०) समकालीन कहानी की पहचान, डॉ. नरेन्द्र मोहन, पृ.५०–५१

९१) भीष्म साहनी, व्यक्ति और रचना : राजेश्वर सक्सेना – प्रताप ठाकोर, पृ.८७

९२) भीष्म साहनी, पटरियाँ, भगौडा, पृ.२०५

९३) त्रास, वाङ्चू, भीष्म साहनी, पृ.११५

९४) आधुनिक हिन्दी कहानी, डॉ. गंगाप्रसार विमल, पृ.१२३

९५) सागर तरसेम : भीष्म साहनी की नाट्यकला, पृ.७८

९६) डॉ. सुरेश बाबर, भीष्म साहनी के साहित्य का अनुशीलन, पृ.१४७

९७) भीष्म साहनी – व्यक्ति और रचना, पृ. २४७

९८) भीष्म साहनी – व्यक्ति और रचना, पृ. २५०

९९) भीष्म साहनी के उपन्यास में नये मूल्यो की तलाश, मीनाक्षी शर्मा, पृ.१०१

१००) भीष्म साहनी के उपन्यास में नये मूल्यो की तलाश, मीनाक्षी शर्मा, पृ.१०२

१०१) भीष्म साहनी के उपन्यास में नये मूल्यो की तलाश, मीनाक्षी शर्मा, पृ.१०२

१०२) भीष्म साहनी के उपन्यास में नये मूल्यो की तलाश, मीनाक्षी शर्मा, पृ.१०२

१०३) भीष्म साहनी के उपन्यास में नये मूल्यो की तलाश, मीनाक्षी शर्मा, पृ.१०३

१०४) भीष्म साहनी, बसंती, राजकमल प्रकाशन, पटना पृ.१५०

१०५) भीष्म साहनी, मैयादास की माडी, प्रकाशन, पटना, पृ.१६५

१०६) डॉ. मीनाक्षी शर्मा – भी.सा. के उपन्यास 'नये मूल्यों', पृ.१३४

१०७) डॉ. मीनाक्षी शर्मा, भी.सा. के उपन्यास 'नये मूल्यों की तलाश', पृ.१३५

१०८) नामवर सिंह, सारिका, नवभारत टाईम्स प्रकाशन, नई दिल्ली, अगस्त १६६०

१०९) कुंतो, भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ.३३२

११०) महीप सिंह, संचेतना, महीप सिंह द्वारा संपादित, नई दिल्ली, दिसम्बर, १६८३, जनवरी १६८७

१११) तमस उपन्यास में देश विभाजन की त्रासदी – प्रा. दिलीप फोलाने, विकास प्रकाशन, कानपुर, पृ.२७